# श्री श्री श्री १००८ जगद्गुरु विश्वाराध्य

डी ३५/७७ जंगमवाड़ी मठ, वाराणसी - २२१००१ (यू.पी.)

**Shri Shri Shri 1008 Jagadguru Vishwaradhya**

महोदय

D 35/77, Jangamwadi Math, Varanasi - 221001 (U.P.)

Phone : 0542-245[illegible]546

पत्रांक :

## जंगमवाड़ीमठ में नूतन नर्मदेश्वर शिवलिंग की प्राण-प्रतिष्ठा

सुप्रसिद्ध जंगमवाड़ीमठ में आज मंगलवार से नवीन स्थापित नर्मदेश्वर शिवलिंग का जनता के लिये [illegible] प्रारम्भ हो गया।

विदित हो कि विगत 31 अगस्त को मठ से अत्यन्त प्राचीनतम दुर्लभ शिवलिंग चोरी हो गया था। पु[illegible] प्रशासन के अथक प्रयास से चोर पकड़ा गया, परन्तु शिवलिंग नहीं प्राप्त हो सका। ऐसी स्थिति में [illegible] जगद्गुरु श्री 1008 डॉ. चन्द्रशेखर शिवाचार्य महास्वामीजी ने नूतन नर्मदेश्वर शिवलिंग की प्राण-प्र[illegible] वेदमूर्ति पं. मणिकण्ठ स्वामी के आचार्यत्व में शास्त्रसम्मत रीति से प्राण-प्रतिष्ठा का कार्य हुआ। इस[illegible] [illegible] जलाधिवास, पुष्पाधिवास-हवनादि धार्मिक विधि चलती रहीं, [illegible] [illegible] हुई। काशी वीरशैव विद्वत्संघ के विद्यार्थीगण तथा आन्ध्र, महाराष्ट्र, [illegible]

विनोदराव पा[illegible]

9839245[illegible]

२ बजे आज जंगमवाड़ीमठ में
रेल मन्त्रीजी की स्वागत
[illegible]रोह है। आप आने का कष्ट क[illegible]

...ला– सप्तम पुष्प

# ऋग्वेद-संहिता

( हिन्दीटीका-सहित )

अष्टक । ६ मण्डल । १ अध्याय । २ अनुवाक ।

## ४४ सूक्त

पवमान सोम देवता । अयास्य ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र ण इन्दो महे तन ऊर्मिं न बिभ्रदर्षसि । अभि देवाँ अयास्यः ॥१॥
मती जुष्टो धिया हितः सोमो हिन्वे परावति ।
विप्रस्य धारया कविः ॥२॥

१ सोम, हमारे महान् धनके लिये आते हो । तुम्हारी तरङ्गको धारण करके अयास्य ऋषि देवोंकी ओर, पूजनके लिये, जाते हैं ।

२ मेधावी स्तोताने कार्यकर्ता सोमकी स्तुति की और उन्हें यज्ञमें नियुक्त किया । ... धारा दूर देशतक विस्तृत होती है ।

अयं देवेषु जागृविः सुत एति पवित्र आ ।
सोमो याति विचर्षणिः ॥३॥

स नः पवस्व वाजयुश्चक्राणश्चारुमध्वरम् ।
बर्हिष्माँ आ विवासति ॥४॥

स नो भगाय वायवे विप्रवीरः सदावृधः ।
सोमो देवेष्वा यमत् ॥५॥

स नो अद्य वसुत्तये क्रतुविद्गातुवित्तमः । वाजं जेषि श्रवो बृहत् ॥६॥



## ४५ सूक्त

सोम देवता । अयास्य ऋषि । गायत्री छन्द ।

स पवस्व मदाय कं नृचक्षा देववीतये । इन्दविन्द्राय पीतये ॥१॥

स नो अर्षाभि दूत्यं त्वमिन्द्राय तोशसे । देवान्सखिभ्य आ वरम् ॥२॥

---

३ जागरणशील और विचक्षण सोम अभिषुत होकर देवोंके लिये चारो ओर जाते हैं। य दशापवित्रकी ओर जाते हैं ।

४ सोम, कुशवाले ऋत्विक् तुम्हारी परिचर्या करते हैं। हमारे लिये तुम अन्नकी इच्छा कर हुए और हिंसा-शून्य यज्ञको सुचारु-रूपसे करते हुए क्षरित होओ।

५ उन सोमको मेधावी लोग वायु और भग देवताके लिये प्रेरित करते हैं। सोमसदा बढ़ने वाले हैं। वह हमें देवोंके पास स्थित धनदें ।

६ सोम, तुम कर्मोंके प्रापक और पुण्य लोकोंके अतीव मार्ग-ज्ञाता हो, तुम आज हमें धन-लाभ केलिये महान् अन्न और बलको जीतो ।

१ सोम, तुम नेताओंके दर्शक हो। तुम देवोंके आगमन वा यज्ञके लिये इन्द्रके पान मद और सुख के लिये क्षरित होओ।

२ सोम, तुम हमारा दूत-कर्म करो। इन्द्रके लिये तुम पिये जाते हो। तुम हमारे लिये श्रेष्ठ धन ... ले आओ ।

उत त्वामरुणं वयं गोभिरञ्ज्मो मदाय कम् । वि नो राये दुरो वृधि ॥३॥

अत्यू पवित्रमक्रमीद्वाजी धुरं न यामनि । इन्दुर्देवेषु पत्यते ॥४॥

समी सखायो अस्वरन्वने क्रीळन्तमत्यविम् । इन्दुं नावा अनूषत ॥५॥

तया पवस्व धारया यया पीतो विचक्षसे । इन्दो स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥६॥

---

## ४६ सूक्त

सोम देवता । अयास्य ऋषि । गायत्री छन्द ।

असृग्रन् देववीतयेऽत्यासः कृत्व्या इव । क्षरन्तः पर्वतावृधः ॥१॥

परिष्कृतास इन्दवो योषेव पित्र्यावती । वायुं सोमा असृक्षत ॥२॥

एते सोमास इन्दवः प्रयस्वन्तश्चमू सुताः ।

इन्द्रं वर्धन्ति कर्मभिः ॥३॥

---

३ सोम, मदके लिये रक्त-वर्ण तुम्हें हम दुग्ध आदिसे संस्कृत करते हैं । तुम धनके निमित्त, हमारे लिये, दरवाजा खोल दो ।

४ जैसे अश्व गमन-समयमें रथकी धुराको लाँघ जाता है, वैसे ही सोम दशापवित्रको लाँघकर देवोंके बीच जाता है ।

५ दशापवित्रको लाँघकर जिस समय सोम जलके बीच क्रीड़ा करने लगे, उस समय प्रिय बन्धु स्तोता एक स्वरसे उनकी स्तुति और वचनोंके द्वारा उनका गुण-कीर्तन करने लगे ।

६ सोम, तुम उस धाराके साथ गिरो, जिस धाराका पान करनेपर विचक्षण स्तोताको तुम शोभन वीर्य देते हो ।

---

१ अभिषव-प्रस्तरोंसे प्रवृद्ध सोम यज्ञके लिये उसी प्रकार क्षरित होते हैं, जैसे कार्य-परायण अश्व क्षरित होते हैं (अथवा पर्वतपर उत्पन्न और क्षरणशील सोम, कार्य पटु अश्वोंके समान, यज्ञके लिये, बनाये जाते हैं ।

२ पिता द्वारा अलङ्कृता कन्या जैसे स्वामीके पास जाती हैं, वैसे ही सोम वायुके पास जाते हैं ।

३ यह सब उज्ज्वल और अन्नवान् सोम प्रस्तर-फलक-द्वयपर अभिषुत होकर ... द्वारा इन्द्रको प्रसन्न करते हैं ।

आ धावता सुहस्त्यः शुक्रा गृभ्णीत मन्थिना ।
गोभिः श्रीणीत मत्सरम् ॥४॥

स पवस्व धनञ्जय प्रयन्ता राधसो महः । अस्मभ्यं सोम गातुवित् ॥५॥

एतं मृजन्ति मर्ज्यं पवमानं दश क्षिपः । इन्द्राय मत्सरं मदम् ॥६॥

## ४७ सूक्त

पवमान सोम देवता। भृगु-पुत्र कवि ऋषि। गायत्री छन्द ।

अया सोमः सुकृत्यया महश्चिदभ्यवर्धत । मन्दान उद्वृषायते ॥१॥

कृतानीदस्य कर्त्वा चेतन्ते दस्युतर्हणा । ऋणा च धृष्णुश्चयते ॥२॥

आत् सोम इन्द्रियो रसो वज्रः सहस्रसा भुवत् ।
उक्थं यदस्य जायते ॥३॥

---

४ शोभन हाथोंवाले ऋत्विको ( पुरोहितो ), शीघ्र आओ । मथानी ( मथनेवाले दण्ड )के साथ शुक्र-वर्ण सोमको ग्रहण करो। मदकर सोमको दूध आदिसे संस्कृत वा सुस्वादु करो।

५ शत्रु-धनको जीतनेवाले सोम, तुम अभीष्ट मार्गके प्रापक हो। तुम हमें महान् धन देनेवाले हो। क्षरित होओ।

६ इन्द्रके लिये दसो अँगुलियाँ शोधनीय, क्षरणशील और मदकर सोमको दशापवित्रमें शोधित करती हैं।
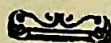
१ शोभन अभिषवादि क्रियासे यह सोम महान् देवोंके प्रति प्रवृद्ध हुए। यह आनन्दके मारे वृषभ ( साँड़ )के समान शब्द करते हैं।

२ इन सोमके असुर-नाशक कर्मोको हमने किया है। बली सोम ऋणपरिशोध भी करते हैं।

३ जब इन्द्रका मन्त्र प्रादुर्भूत होता है, तभी इन्द्रके लिये प्रियरस, बली और वज्रके समान अवध्य सोम हमारे लिये असीम धनके दाता होते हैं।

वयं कविर्विधर्तरि विप्राय रत्नमिच्छति ।
यदी मर्मृज्यते धियः ॥४॥
सिषासतू रयीणां वाजेष्वर्वतामिव । भरेषु जिग्युषामसि ॥५॥

## ४८ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगु-पुत्र कवि ऋषि । गायत्री छन्द ।

तं त्वा नृम्णानि बिभ्रतं सधस्थेषु महो दिवः ।
चारुं सुकृत्ययेमहे ॥१॥
संवृक्तधृष्णुमुक्थ्यं महामहिव्रतं मदम् । शतं पुरो रुरुक्षणिम् ॥२॥
अतस्त्वा रयिमभि राजानं सुक्रतो दिवः ।
सुपर्णो अव्यथिर्भरत् ॥३॥
विश्वस्मा इत् स्वर्दृशे साधारणं रजस्तुरम् । गोपामृतस्य विर्भरत् ॥४॥

---

४ यदि क्रान्तकर्मा सोम अँगुलियोंसे शोधित किये जाते हैं, तो वह स्वयं मेधावीके लिये काम धारक इन्द्रसे रमणीय धन देनेकी इच्छा करते हैं ।

५ सोम, तुम संग्रामोंमें शत्रुओंको जीतनेवालोंको उसी प्रकार धन देते हो, जिस प्रकार समर-भूमिमें जानेवाले अश्वोंको घास दिया जाता है ।

१ सोम, प्रकाण्ड द्युलोकके एकस्थानवासियोंमें स्थित, धनके धारक और कल्याणके धारक तुमसे शोभन अनुष्ठान करके हम धनकी याचना करते हैं ।

२ सोम, पराक्रमी शत्रुओंके विनाशक, प्रशंसाके योग्य, पूजनीय-कर्मा, आनन्ददाता और अनेक शत्रु-पुरियोंके घातक तुमसे हम धन माँगते हैं ।

३ शोभन कर्मवाले सोम, धनके लिये तुम राजा हो; इसीलिये श्येन (बाज) तुम्हें सरलतासे स्वर्गसे ले आया था ।

४ जल भेजनेवाले, यज्ञके संरक्षक और स्वर्गस्थ सभी देवोंके लिये समान सो-

अधा हिन्वान इन्द्रियं ज्यायो महित्वमानशे ।
अभि ष्टकृद्विचर्षणिः ॥५॥

## ४६ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगु--पुत्र कवि ऋषि । गायत्री छन्द ।

पवस्व वृष्टिमा सु नोऽपामूर्मिं दिवस्परि ।
अयक्ष्मा बृहतीरिषः ॥१॥
तया पवस्व धारया यया गाव इहागमन् ।
जन्यास उप नो गृहम् ॥२॥
घृतं पवस्व धारया यज्ञेषु देववीतमः । अस्मभ्यं वृष्टिमा पव ॥३॥
स न ऊर्जे व्यव्ययं पवित्रं धाव धारया ।
देवासः शृणवन् हि कम् ॥४॥
पवमानो असिष्यदद्रक्षांस्यपजङ्घनत् । प्रत्नवद्रोचयन्रुचः ॥५॥

---

५ कर्मोंके सूक्ष्म दर्शक, यज़मानोंके मनोरथ-दाता और अपने बलका प्रयोग करनेवाले सोम अपने प्रशंसनीय महत्त्वको प्राप्त करते हैं ——

१ सोम, द्युलोकसे हमारे लिये चारो ओर वृष्टि करो। द्युलोकसे जल-तरङ्ग ले आओ। अक्षय अन्नका महाभाण्डार उपस्थित करो।

२ सोम, तुम उस धारासे क्षरित होओ, जिस धारासे शत्रुदेशोत्पन्न गायें इस लोकमें हमारे गृहमें आती हैं।

३ सोम, तुम यज्ञोंमें अतीव देवाभिलाषी हो। हमारे लिये तुम घृत-धारासे क्षरित होओ।

४ सोम, तुम हमारे अन्नके लिये कुशमय (अथवा अव्यय) दशापवित्रको धारा-रूपसे प्राप्त करो। तुम्हारी गमन-ध्वनिको देवता लोग सुनें।

५ राक्षसोंको मारते हुए और अपनी दीप्तिको पहलेकी तरह प्रदीप्त करते हुए यह क्षरणशील ... हैं।

# ५० सूक्त

पवमान सोम देवता। आङ्गिरस उतथ्य ऋषि। गायत्री छन्द।

उत्ते शुष्मास ईरते सिन्धोरूर्मेरिव स्वनः। वाणस्य चोदया पविम् ॥१॥
प्रसवे त उदीरते तिस्रो वाचो मखस्युवः।
यदव्य एषि सानवि ॥२॥
अव्यो वारे परि प्रियं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः। पवमानं मधुश्चुतम् ॥३॥
आ पवस्व मदिन्तम पवित्रन्धारया कवे। अर्कस्य योनिमासदम् ॥४॥
स पवस्व मदिन्तम गोभिरञ्जानो अक्तुभिः। इन्दविन्द्राय पीतये ॥५॥

---

# ५१ सूक्त

पवमान सोम देवता। उतथ्य ऋषि। गायत्री छन्द।

अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ सृज।
पुनीहीन्द्राय पातवे ॥१॥

---

१ सोम, समुद्र-तरङ्गके वेगके समान तुम्हारा वेग हो रहा है। जैसे धनुष्से छोड़ा हुआ वाण शब्द करता है, वैसे ही तुम शब्द करो।

२ जिस समय तुम उन्नत और कुशमय दशापवित्रमें जाते हो, उस समय तुम्हारी उत्पत्ति होनेपर यज्ञाभिलाषी यजमानके मुखसे तीन प्रकारके (ऋक्, यजु., सोमके) वाक्य निकलते हैं।

३ देवोंके प्रिय, हरित-वर्ण, पत्थरोंसे अभिषुत (निष्पीड़ित) और मधुर रस चुलानेवाले सोमको ऋत्विक् लोग मेषके लोमके ऊपर रखते हैं।

४ अतीव प्रमत्तकारी और क्रान्तकर्मा सोम, पूजनीय इन्द्रके उदरमें पैठनेके लिये दशापवित्रको लाँघ कर उनके सामने क्षरित होओ।

५ अत्यन्त प्रमत्त करनेवाले सोम, सुस्वादु करनेवाले दूध आदिसे मिश्रित होकर तुम इन्द्रके पानके लिये क्षरित होओ।

---

१ पुरोहित, पत्थरोंसे अभिषुत (पीसे गये) सोमको दशापवित्रपर ढाल दो। इन्द्रके लिये इसे शोधित करो।

दिवः पीयूषमुत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे । सुनोता मधुमत्तमम् ॥२॥

तव त्य इन्दो अन्धसो देवा मधोर्व्यश्नते । पवमानस्य मरुतः ॥३॥

त्वं हि सोम वर्धयन्त्सुतो मदाय भूर्णये । वृषन्त्स्तोतारमूतये ॥४।

अभ्यर्ष विचक्षण पवित्रं धारया सुतः । अभि वाजमुत श्रवः ॥५॥

## ५२ सूक्त

पवमान सोम देवता । उतथ्य ऋषि । गायत्री छन्द ।

परि द्युक्षः सनद्रयिर्भरद्वाजं नो अन्धसा ।

सुवानो अर्ष पवित्र आ ॥१॥

तव प्रत्नेभिरध्वभिरव्यो वारे परि प्रियः । सहस्रधारो यात्तना ॥२॥

चरुर्न यस्तमीङ्खयेन्दो न दानमीङ्खय । वधैर्वधस्नवीङ्खय ॥३॥

---

२ पुरुहतो ( अध्वर्यु ओ ), अत्यन्त मधुर, द्युलोकके अमृत और श्रेष्ठ सोमको वज्रधर इन्द्रके लिये प्रस्तुत करो ।

३ मदकर और क्षरणशील तुम्हारे अन्न ( खाद्य द्रव्य ) को ये इन्द्रादि देवता और मरुद्गण व्याप्त करते हैं ।

४ सोम, अभिषुत होकर, देवोंको प्रवृद्ध कर अभिलाषाओंको बरसा कर तुम शीघ्र मद और रक्षणके लिये स्तोताके पास जाते हो ।

५ विचक्षण सोम, तुम अभिषुत होकर दशापवित्रकी ओर जाओ और हमारे अन्न तथा कीर्तिकी रक्षा करो ।

१ दीप्त और धन देनेवाले सोम अन्नके साथ हमारे बलको बढ़ावो । सोम, अभिषुत होकर दशापवित्रमें गिरो ।

२ सोम, देवोंको प्रसन्न करनेवाली तुम्हारी धाराए विस्तृत होकर पुराने मार्गोंसे मेषलोमसे दशापवित्रमें जाती हैं ।

३ सोम, जो चरुके समान खाद्य है, उसे हमें दो । जो देनेकी वस्तु है, उसे हमें दो । वनेश्वर तुम बहने हो; इसलिये हे सोम, पत्थरोंके प्रहारसे निकलो ।

नि शुष्ममिन्द्वेषां पुरुहूत जनानाम् । यो अस्माँ आदिदेशति ॥४॥
शतं न इन्द ऊतिभिः सहस्रं वा शुचीनाम् । पवस्व मंहयद्रयिः ॥५॥

## ५३ सूक्त

पवमान सोम देवता । कश्यप-गोत्रीय अवत्सार ऋषि । गायत्री छन्द ।

उत्ते शुष्मासो अस्थू रक्षो भिन्दन्तो अद्रिवः ।
नुदस्व याः परिस्पृधः ॥१॥
अया निजघ्निरोजसा रथसंगे धने हिते । स्तवा अबिभ्युषा हृदा ॥२॥
अस्य व्रतानि नाधृषे पवमानस्य दूढ्या । रुज यस्त्व पृतन्यति ॥३॥
तं हिन्वन्ति मदच्युतं हरिं नदीषु वाजिनम् । इन्दुमिन्द्राय मत्सरम् ॥४॥

---

४ बहुतोंके द्वारा बुलाये गये सोम, जिन शत्रुओंका बल युद्धके लिये हमें बुलाता है, उन शत्रुओंके बलको दूर करो ।

५ सोम, तुम धन देनेवाले हो। हमारी रक्षा करनेके लिये तुम अपनी निर्मल धाराओंसे प्रवाहित होओ ।

---

१ प्रस्तरसे उत्पन्न सोम, राक्षसोंको मारनेवाले तुम्हारे वेग वा तेज उन्नत हुए हैं। स्पर्द्धा करनेवाली जो शत्रुसेनाएँ हमें बाधा देती हैं, उन्हें रोको ।

२ तुम अपने बलसे शत्रुओंका विनाश करनेमें समर्थ हो। मैं निर्भय हृदयसे रथपर शत्रुओंके द्वारा निहित धनके लिये तुम्हारी स्तुति करता हू ।

३ सोम, क्षरणशील तुम्हारे तेजको दुर्बुद्धि राक्षस नहीं सह सकता। जो तुम्हारे साथ युद्ध करना चाहता है, उसे विनष्ट करो।

४ मद चुलानेवाले, हरित-वर्ण, बली और मदकर सोमको ऋत्विक् लोग इन्द्रके लिये वसतीवरी नामक जलमें डालते है ।

## ५४ सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

अस्य प्रत्नामनु द्युतं शुक्रं दुदुहे अह्रयः। पयः सहस्रसामृषिम् ॥१॥
अयं सूर्य इवोपदृगयं सरांसि धावति। सप्त प्रवत आ दिवम् ॥२॥
अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि। सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥
परि णो देववीतये वाजाँ अर्षसि गोमतः। पुनान इन्दविन्द्रयुः ॥४॥

||||||||||||||||||||

## ५५ सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

यवंयवं नो अन्धसा पुष्टंपुष्टं परिस्रव। सोम विश्वा च सौभगा ॥१॥
इन्दो यथा तव स्तवो यथा ते जातमन्धसः।
नि बर्हिषि प्रिये सदः ॥२॥
उत नो गोविदश्ववित् पवस्व सोमान्धसा। मक्षूतमेभिरहभिः ॥३॥

---

१ कवि लोग इन सोमके प्राचीन, प्रकाशमान, दीप्त, असीम, कर्म-फलदाता और स्रवणशील रसको दूहते हैं।

२ यह सोम, सूर्यके समान, सारे संसारको देखते हैं। यह तीस दिन-रातकी ओर जाते हैं यह स्वर्गसे ले कर सातो नदियोंको घेरे हुए हैं।

३ शोधित किये जाते हुए यह सोम, सूर्यदेवके समान, सारे भुवनोंके ऊपर रहते हैं।

४ सोम, इन्द्राभिलाषी और शोधित तुम हमारे यज्ञके लिये गोयुक्त अन्न चारो ओर गिराओ।

१ सोम, तुम हमारे लिये प्रचुर यव (जौ), अन्नके साथ, दो और सारे सौभाग्यशाली धन भी दो।

२ सोम, अन्नरूप तुम्हारे स्तोत्र और प्रादुर्भावको हमने कहा। अब तुम हमारे प्रसन्नता-दायक कुशपर बैठो।

३ सोम, तुम हमारे गौ और अश्वके दाता हो। तुम अल्प दिनोंमें ही अन्नके साथ क्षरित होओ।

यो जिनाति न जीयते हन्ति शत्रुमभीत्य । स पवस्व सहस्रजित् ॥४॥

## ५६ सूक्त

पवमान सोम देवता । अवत्सार ऋषि । गायत्री छन्द ।

परि सोम ऋतं बृहदाशुः पवित्रे अर्षति । विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥१॥

यत् सोमो वाजमर्षति शतं धारा अपस्युवः ।
इन्द्रस्य सख्यमाविशन् ॥२॥

अभि त्वा योषणो दश जारं न कन्यानूषत ।
मृज्यसे सोम सातये ॥३॥

त्वमिन्द्राय विष्णवे स्वादुरिन्दो परि स्रव । नॄन्त्स्तोतॄन् पाह्यंहसः ॥४॥

---

४ सोम, तुम अपरिमित शत्रुओंके जेता हो । तुम्हें कोई जीत नहीं सकता । तुम स्वयं शत्रुओंको निहत करते हो । क्षरित होओ ।

१ क्षिप्रकारी और देवकामी सोम दशापवित्रमें जाकर और राक्षसोंको नष्ट कर हमें प्रचुर अन्न देते हैं ।

२ जब सोमकी कर्माभिलाषी सौ धाराएँ इन्द्रका बन्धुत्व प्राप्त करती हैं, तब सोम हमें अन्न प्रदान करते हैं ।

३ सोम, जैसे कन्या प्रिय ( जार ) को बुलाती है, वैसे ही दसो अँगुलियाँ शब्द करते हुए हमारे धन-लाभ और इन्द्रके लिये सोमको शोधित करती हैं ।

४ सोम, प्रिय-रस तुम इन्द्र और विष्णुके लिये क्षरित होओ । कर्मोंके नेताओं और स्तुति-कर्त्ताओंको पापसे छुड़ाओ ।

## ५७ सूक्त

पवमान सोम देवता। कश्यप-गोत्रीय अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र ते धारा असश्चतो दिवो न यन्ति वृष्टयः।
अच्छा वाजं सहस्रिणम् ॥१॥

अभि प्रियाणि काव्या विश्वा चक्षाणो अर्षति।
हरिस्तुञ्जान आयुधा ॥२॥

स मर्मृजान आयुभिरिभो राजेव सुव्रतः।
श्येनो न वंसु षीदति ॥३॥

स नो विश्वा दिवो वसूतो पृथिव्या अधि। पुनान इन्दवा भर ॥४॥

## ५८ सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

तरत् स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः। तरत् स मन्दी धावति ॥१॥

१ जैसे द्युलोककी वर्षा-धारा प्रजाको असीम अन्न देती है, वैसे ही सोम, तुम्हारी निःसङ्ग धारा हमें अपरिमित अन्न प्रदान करती है।

२ हरित-वर्ण सोम देवोंके सारे प्रिय कार्योंकी ओर देखते हुए अपने आयुधोंको राक्षसोंकी ओर फेंकते हुए यज्ञमें आते हैं।

३ सुकृती सोम मनुष्यों ( ऋत्विकों ) के द्वारा शोधित होकर और राजा तथा श्येन पक्षीके समान निर्भय होकर वसतीवरी-जलमें बैठते हैं।

४ सोम, तुम क्षरित होते-होते स्वर्ग और पृथिवीके सारे धनोंको हमारे लिये ले आओ।

---
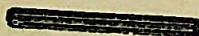
१ देवोंके हर्षदाता सोम स्तोताओंका उद्धार करते हुए क्षरित होते हैं। अभिषुत और देव अन्न-रूप सोमकी धारा गिरती है। हर्षदाता सोम क्षरित होते हैं।

उस्रा वेद वसूनां मर्तस्य देव्यवसः । तरत् स मन्दी धावति ॥२॥

ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योरा सहस्राणि दद्महे । तरत् स मन्दी धावति ॥३॥

आ ययोस्त्रिंशतम् तना सहस्राणि च दद्महे । तरत् स मन्दी धावति ॥४॥

## ५६ सूक्त

पवमान सोम देवता । अवत्सार ऋषि । गायत्री छन्द ।

पवस्व गोजिदश्वजिद्विश्वजित् सोम रण्यजित् । प्रजावद्रत्नमाभर ॥१॥

पवस्वाद्भ्यो अदाभ्यः पवस्वौषधीभ्यः । पवस्व धिषणाभ्यः ॥२॥

---

२ सोमकी धन-प्रस्रवण करनेवाली और प्रकाशमाना धारा मनुष्यकी रक्षा करना जानती है। हर्षदाता सोम स्तोताओंको तारते हुए गिरते हैं ।

३ ध्वस्र और पुरुषन्ति नामक राजाओंसे हमने सहस्र-सहस्र धन ग्रहण किये हैं। आनन्द-कर सोम स्तोतओंको तारते हुए बहते हैं।

४ ध्वस्र और पुरुषन्ति राजाओंसे हमने तीस हजार वस्त्रोंको पाया है। स्तोताओंको तारते हुए हर्षकर सोम गिरते हैं ।

१ सोम, तुम गौ, अश्व, संसार और रमणीय धनके जेता हो क्षरित होओ। पुत्रादिसे युक्त रमणीय धन, हमारे लिये, ले आओं ।

२ सोम, तुम वसतीवरी-जलसे बहो, किरणोंसे बहो, ओषधियोंसे बहो और पत्थ-रोंसे बहो ।

त्वं सोम पवमानो विश्वानि दुरिता तर ।
कविः सीद नि बर्हिषि ॥३॥
पवमान स्त्वर्विदो जायमानोऽभवो महान् ।
इन्दो विश्वाँ अभीदसि ॥४॥

## ६० सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री और पुर उष्णिक छन्द ।

प्र गायत्रेण गायत पवमानं विचर्षणिम् । इन्दुं सहस्रचक्षसम् ॥१॥
तं त्वा सहस्रचक्षसमथो सहस्रभर्णसम् । अति वारमपाविषुः ॥२॥
अति वारान् पवमानो असिष्यदत् कलशाँ अभिधावति ।
इन्द्रस्य हार्द्याविशन् ॥३॥
इन्द्रस्य सोम राधसे शं पवस्व विचर्षणे । प्रजावद्रेत आ भर ॥४॥

३ क्षरणशील और क्रान्तकर्मा सोम, राक्षसोंके किये सारे उपद्रवोंको दूर करो । इस कुशपर बैठो ।

४ वहमान सोम, तुम यजमानको सब कुछ प्रदान करो । उत्पन्न होते ही तुम पूजनीय होते हो । तुम सारे शत्रुओंको तेजसे दबाते हो ।

१ सूक्ष्मदर्शक, सहस्र-चक्षु और संस्क्रियमाण सोमकी, गायत्री-साम-मन्त्रसे, स्तोताओ, स्तुति करो ।

२ सोम, बहुदर्शन, बहुभरण और अभिषुत तुमको ऋत्विक् लोग मेषलोमसे छानते हैं ।

३ क्षरणशील सोम मेषलोमसे होकर गिरते और द्रोण-कलसकी ओर जाते हुए इन्द्रके हृदयमें बैठते हैं ।

४ बहुदर्शी सोम, इन्द्रके आराधनके लिये तुम भलीभाँति क्षरित होओ । हमारे लिये पुत्रादिसे युक्त धन दो ।

# ३ अनुवाक । ६१ सूक्त

पवमान सोम देवता । आङ्गिरस अमहीयु ऋषि । गायत्री छन्द ।

अया वीती परिस्रव यस्त इन्दो मदेष्वा । अवाहन्नवतीर्नव ॥१॥
पुरः सद्य इत्थाधिये दिवोदासाय शम्बरम् । अध त्यं तुर्वशं यदुम् ॥२॥
परि णो अश्वमश्वविद्गोमदिन्दो हिरण्यवत् । क्षरा सहस्रिणीरिषः ॥३॥
पवमानस्य ते वयं पवित्रमभ्युन्दतः । सखित्वमावृणीमहे ॥४॥
ये ते पवित्रमूर्मयोऽभिक्षरन्ति धारया । तेभिर्नः सोम मृळय ॥५॥
स नः पुनान आ भर रयिं वीरवतीमिषम् ।
ईशानः सोम विश्वतः ॥६॥
एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सिन्धुमातरम् । समादित्येभिरख्यत ॥७॥
समिन्द्रेणोत वायुना सुत एति पवित्र आ ।
सं सूर्यस्य रश्मिऽभिः ॥८॥

१ इन्द्रके पानके लिये उस रससे बहो, जिसने संग्राममें निन्यानबे शत्रु-पुरियोंको नष्ट किया है।

२ उस सोमरसने एक ही दिनमें शम्बर नामक शत्रुपुरियोंके स्वामीको सत्यकर्मा दिवोदास राजाके वशमें कर दिया था । अनन्तर सोमरसने दिवोदासके शत्रु तुर्वश और यदु राजाओंको भी वशमें कर दिया था।

३ सोम, तुम अश्व देनेवाले हो। तुम अश्व, गौ और हिरण्यसे-युक्त धनको वितरित करो।

४ सोम, क्षरणशील और दशापवित्रको आर्द्र करनेवाले तुमसे हम, मित्रताके लिये, प्रार्थना करते हैं ।

५ सोम, तुम्हारी जो तरङ्गें दशापवित्रकी चारो ओर गिरती हैं, उनसे हमें सुख दो।

६ सोम, तुम समस्त विश्वके प्रभु हो । अभिषुत और शोधित तुम हमारे लिये धन और पुत्रादि-युक्त अन्न ले आओ ।

७ सोमकी माताएँ नदियाँ हैं । उन सोमको दस अंगुलियाँ मलती हैं । वह सोम अदिति-पुत्रोंके साथ मिलते हैं ।

८ अभिषुत सोम दशापवित्रमें इन्द्रके साथ और वायु तथा सूर्य-किरणोंके साथ मिलते हैं

स नो भगाय वायवे पूष्णे पवस्व मधुमान् । चारुर्मित्रे वरुणे च ॥९॥

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि षद्भूम्या ददे ।

उग्रं शर्म महि श्रवः ॥१०॥

एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम् । सिषासन्तो वनामहे ॥११॥

स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः । वरिवोवित् परि स्रव ॥१२॥

उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम् ।

इन्दुं देवा अयासिषुः ॥१३॥

तमिद्वर्धन्तु नो गिरो वत्सं संशिश्वरीरिव ।

य इन्द्रस्य हृदंसनिः ॥१४॥

अर्षा णः सोम शं गवे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ।

वर्धा समुद्रमुक्थ्यम् ॥१५॥

पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रं न तन्यतुम् । ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ॥१६

---

९ सोम, तुम मधुर-रस, कल्याणरूप और अभिषुत हो। तुम भग, वायु, पूषा, मित्र और वरुणके लिये क्षरित होओ।

१० तुम्हारे अन्नका जन्म द्युलोकमें है और तुम्हारा प्रवृद्ध सुख तथा प्रचुर अन्न भूमि-पर है।

११ इन सोमकी सहायतासे हम मनुष्योंके सारे अन्नोंको उपार्जित करते हैं और भाग करनेकी इच्छा होनेपर भाग कर लेंगे।

१२ सोम, तुम अन्न-दाता हो। अभिषुत तुम हमारे यजनीय इन्द्र, वरुण और मरुतोंके लिये क्षरित होओ।

१३ भली भाँति उत्पन्न, वसतीवरी द्वारा प्रेरित, शत्रु-भञ्जक और दूध आदिसे परिष्कृत सोमके पास इन्द्र आदि देवता जाते हैं।

१४ जो सोम इन्द्रके लिये हृदयग्राही है, उन्हें ही हमारी स्तुतियाँ संवर्द्धित करें। ये स्तुतियाँ सोमको उसी प्रकार चाहती हैं, जैसे दूधवाली माताएँ बच्चोंको चाहती हैं।

१५ सोम, हमारी गौके लिये सुख दो। प्रभूत अन्न दो। स्वच्छ जल बढ़ाओ।

१६ क्षरित होते-होते सोमने वैश्वानर नामक ज्योतिका, द्युलोकके चित्रका विस्तार करनेके लिये, वज्रके समान उत्पन्न किया।

पवमानस्य ते रसो मदो राजन्नदुच्छुनः । वि वारमव्यमर्षति ॥१७॥

पवमान रसस्तव दक्षो वि राजति द्युमान् ।

ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥१८॥

यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा । देवावीरघशंसहा ॥१९॥

जघ्निर्वृत्रममित्रियं सस्निर्वाजं दिवेदिवे ।

गोषा उ अश्वसा असि ॥२०॥

संमिश्लो अरुषो भव सूपस्थाभिर्न धेनुभिः ।

सीदन्छ्येनो न योनिमा ॥२१॥

स पवस्व य आविथेन्द्रं वृत्राय हन्तवे । ववृिवांसं महीरपः ॥२२॥

सुवीरासो वयं धना जयेम सोम मीढ्वः ।

पुनानो वर्ध नो गिरः ॥२३॥

---

१७ दीप्यमान सोम, क्षरणशील तुम्हारा राक्षस-शून्य और मदकर सोम-रस मेषलोमकी ओर जाता है ।

१८ पवमान सोम, तुम्हारा प्रवृद्ध और दीप्तिशाली रस क्षरित होकर और सारे ब्रह्माण्ड ( ज्योतिःपुञ्ज ) को, व्याप्त करके, दृष्टिगोचर करता है ।

१९ सोम, तुम्हारा जो रस देवकामी, राक्षस-हन्ता, प्रार्थनीय और मदकर है, उस रससे, अन्नके साथ, क्षरित होओ ।

२० सोम, तुमने शत्रु वृत्रका बध किया है। तुम प्रतिदिन संग्रामका आश्रय करते हो। तुम गौ और अश्व देनेवाले हो।

२१ सोम, तुम सुस्वादु दूध आदिके साथ मिलकर, श्येन पक्षीके समान, शीघ्र जाकर अपने स्थानको ग्रहण करो और सुशोभित होओ ।

२२ जिस समय वृत्रासुरने जलभाण्डारको रोक रखा था, उस समय, वृत्र-बधमें तुमने इन्द्रकी रक्षा की थी। वही तुम इस समय क्षरित होओ।

२३ सेचक और क्षरणशील सोम, कल्याण-पुत्र हम आङ्गिरस अमहीयु आदि शत्रुओंके धनको जीतें। हमारी स्तुतियोंको वर्द्धित करो ।

त्वोतासस्तवावसा स्याम वन्वन्त आमुरः ।
सोम व्रतेषु जागृहि ॥२४॥
अपघ्नन् पवते मृधोऽप सोमो अराव्णः । गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥२५॥
महो नो राय आ भर पवमान जही मृधः ।
रास्वेन्दो वीरवद्यशः ॥२६॥
न त्वा शतं चन ह्रुतो राधो दित्सन्तमा मिनन् ।
यत् पुनानो मखस्यसे ॥२७॥
पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने ।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥२८॥
अस्य ते सख्ये वयं तवेन्दो द्युम्न उत्तमे ।
सासह्याम पृतन्यतः ॥२९॥
या ते भीमान्यायुधा तिग्मानि सन्ति धूर्वणे ।
रक्षा समस्य नो निदः ॥३०॥

---

२४ तुमसे क्षरित होकर हम शत्रुओंका विनाश कर डालें । हमारे कर्मोंमें तुम सतर्क रहना ।

२५ हिंसक शत्रुओं और अदाताओंको मारने हुए तथा इन्द्रके स्थानका पालन करते हुए क्षरित होते हो ।

२६ पवमान सोम, हमारे लिये महान् धन ले आओ और शत्रुओंको मारो । पुत्रादि-युक्त कीर्त्ति भी हमें दो ।

२७ सोम, जिस समय तुम शोधित होते-होते हमें धन देनेकी इच्छा करते हो और जिस समय तुम खाद्य देनेकी इच्छा करते हो, उस समय सैकड़ों शत्रु भी तुम्हें नहीं मार सकते ।

२८ सोम, अभिषुत और सेचक तुम देशोंमें हमें यशस्वी करो और सारे शत्रुओंको मारो ।

२९ सोम, इस यज्ञमें हमें तुम्हारा बन्धुत्व प्राप्त करने पर और तुम्हारे श्रेष्ठ अन्नसे पुष्टि पा जाने पर हम युद्धेच्छु शत्रुओंको मारेंगे ।

३० सोम, तुम्हारे जो शत्रुओंके लिये भयंकर, तीखे और शत्रुवध-कारी हथियार हैं, उनको रखनेवाले शत्रुकी निन्दासे ( पराजयरूप अयश ) से हमारी रक्षा करो ।

# ६२ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगुगोत्रीय जमदग्नि ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते असृग्रमिन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः । विश्वान्यभि सौभगा ॥१॥

विघ्नन्तो दुरिता पुरु सुगा तोकाय वाजिनः ।

तना कृण्वन्तो अर्वते ॥२॥

कृण्वन्तो वरिवो गवेऽभ्यर्षन्ति सुष्टुतिम् । इळामस्मभ्यं संयतम् ॥३॥

असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः । श्येनो न योनिमासदत् ॥४॥

शुभ्रमन्धो देववातमप्सु धूतो नृभिः सुतः ।

स्वदन्ति गावः पयोभिः ॥५॥

आदीमश्वं न हेतारोऽशूशुभन्नमृताय । मध्वो रसं सधमादे ॥६॥

यास्ते धारा मधुश्चुतोऽसृग्रमिन्द ऊतये । ताभिः पवित्रमासदः ॥७॥

सो अर्षेन्द्राय पीतये तिरो रोमाण्यव्यया । सीदन्योना वनेष्वा ॥८॥

---

१ सोम सारे सौभाग्य हमें देंगे; इसीलिये वह दशापवित्रके पास शीघ्र-शीघ्र उत्पन्न किये जाते हैं ।

२ बली सोम अनेक पापोंको भली भाँति नष्ट करते हुए तथा हमारे पुत्र और अश्वोंको सुखी करते हुए दशापवित्रके पास उत्पन्न किये जाते हैं ।

३ हमारी गौ और हमारे लिये धन और अन्न देते हुए सोम हमारी स्तुति की ओर आते हैं ।

४ सोम, पर्वतसे उत्पन्न, मदके लिये अभिषुत और जल (वसतीवरी)में प्रवृद्ध हैं । जैसे श्येन पक्षी वेगसे आकर अपने स्थानको प्राप्त करता है, वैसे ही यह सोम भी अपने स्थानपर बैठते हैं ।

५ देवोंके द्वारा प्रार्थित और शोभन अन्नको गायें दूध आदिसे स्वादिष्ट बनाते हैं । यह सोम ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत और वसतीवरीमें शोधित हुए हैं ।

६ अनन्तर अनुष्ठाता ऋत्विक्, यज्ञस्थलमें इन मदकर सोमके रसको, अमरत्व पानेके लिये, अश्वके समान सुशोभित करते हैं ।

७ सोम, तुम्हारी मधुर रस और चुलानेवाली धाराएँ, रक्षणके लिये, बनायी गयी हैं; उनके साथ तुम दशापवित्रमें बैठो ।

८ सोम, अभिषुत तुम मेषलोमसे निकलकर और इन्द्रके पानके लिये पात्रोंमेंसे अपने स्थानपर जाकर क्षरित होओ ।

त्वमिन्दो परिस्रव स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः। वरिवोविद्घृतं पयः ॥६॥
अयं विचर्षणिर्हितः पवमानः स चेतति। हिन्वान आप्यं बृहत् ॥१०॥
एष वृषा वृषव्रतः पवमानो अशस्तिहा। करद्वसूनि दाशुषे ॥११॥
आ पवस्व सहस्रिणं रयिं गोमन्तमश्विनम्। पुरुश्चन्द्रं पुरुस्पृहम् ॥१२॥
एष स्य परि षिच्यते मर्मृज्यमान आयुभिः।
उरुगायः कविक्रतुः ॥१३॥
सहस्रोतिः शतामघो विमानो रजसः कविः।
इन्द्राय पवते मदः ॥१४॥
गिरा जात इह स्तुत इन्दुरिन्द्राय धीयते।
विर्योना वसताविव ॥१६॥

---

६ सोम, तुम स्वादिष्ट और हमारे अभिलषित धनके प्रापक हो। तुम अङ्गिराको सन्तानोंके लिये घृत और दुग्ध बरसो।

१० सूक्ष्म-दर्शक, पात्रोंमें स्थित और क्षरणशील सोम, जलमें उत्पन्न महान् अन्नको प्रेरित करके सबके द्वारा जाने जाते हैं।

११ यह जो सोम हैं, वह धन-वर्षक, वृष-कर्मा, राक्षसोंके हन्ता और क्षरणशील हैं। यह हविर्दाता यजमानको धन देते हैं।

१२ सोम, तुम प्रचुर, गौओं और अश्वोंसे युक्त, सबके हर्षदाता और बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय धनको बरसो।

१३ अनेक स्तुतियोंवाले और कार्यक्षम सोम मनुष्योंके द्वारा शोधित होकर सिञ्चित होते हैं।

१४ सोम असोम रक्षण, बहुधन, संसारके निर्माता, क्रान्तकर्मा और मदकर हैं। यह इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं।

१५ जैसे पक्षी अपने घोसलेमें जाता है, वैसे ही प्रादुर्भूत और स्तोमसे स्तुत सोम इस यज्ञमें अपने स्थानमें, इन्द्रके लिये, स्थित होते हैं।

१६ ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत ( निष्पीड़ित ) और क्षरणशील सोम चमसोंमें, अपने स्थानमें, युद्धके समान बैठनेके लिये जाते हैं।

पवमानः सुतो नृभिः सोमो वाजमिवासरत् ।
चमूषु शक्मनासदम् ॥१७॥
तं त्रिपृष्ठे त्रिवन्धुरे रथे युञ्जन्ति यातवे ।
ऋषीणां सप्त धीतिभिः ॥१८॥
तं सोतारो धनस्पृतमाशुं वाजाय यातवे ।
हरिं हिनोत वाजिनम् ॥१९॥
आविशन् कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नभिश्रियः ।
शूरो न गोषु तिष्ठति ॥२०॥
आ त इन्दो मदाय कं पयो दुहन्त्यायवः । देवा देवेभ्यो मधु ॥२१॥
आ नः सोमं पवित्र आ सृजता मधुमत्तमम् ।
देवेभ्यो देवश्रुत्तमम् ॥२१॥
एते सोमा असृक्षत गृणानाः श्रवसे महे । मदिन्तमस्य धारया ॥२२॥
अभि गव्यानि वीतये नृम्णा पुनानो अर्षसि ।
सनद्वाजः परि स्रव ॥२३॥

---

१७ तीन पृष्ठों ( अभिषवणों ), तीन स्थानों (वेदों ) और छन्दःस्वरूप सात रस्सियोंसे युक्त ऋषियोंके यज्ञ-रूपी रथमें सोमको ऋत्विक् लोग, देवोंके प्रति जानेके लिये, जोतते हैं।

१८ सोमका निष्पीड़न ( अभिषवण ) करनेवाले, धन-स्रष्टा, बली और वेगशाली सोम-रूप अश्वको यज्ञ-रूपी संग्राममें जानेके लिये सज्जित करो ।

१९ अभिषुत सोम कलसकी ओर जाते हुए और सारी सम्पदाओंको हमें देते हुए गौओंमें शूरके समान, निःशङ्क होकर, रहते हैं।

२० सोम, तुम्हारे मधुर रसको, स्तोता लोग, इन्द्रादिके मदके लिये, दूहते हैं ।

२१ ऋत्विको, देवताओंके लिये जिनका नाम प्रिय है और जो अतीव मधुर हैं, उन सोमको इन्द्र आदिके लिये दशापवित्रमें रखो।

२२ ऋत्विक् लोग स्तुतिवाले सोमको, महान् अन्नके लिये, अतीव मदकर रसकी धारासे, बनाते हैं।

२३ सोम, शोधित तुम भक्षणके लिये गोसम्बन्धी धनों ( दूध आदिकों ) को प्राप्त करते हो। अन्नदान करते हुए क्षरित होओ ।

उत नो गोमतीरिषो विश्वा अर्ष परिष्टुभः ।
गृणानो जमदग्निना ॥२४॥

पवस्व वाचो अग्रियः सोम चित्राभिरूतिभिः ।
अभि विश्वानि काव्या ॥२५॥

त्वं समुद्रिया अपोऽग्रियो वाच ईरयन् । पवस्व विश्वमेजय ॥२६॥

तुभ्येमा भुवना कवे महिम्ने सोम तस्थिरे ।
तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः ॥२७॥

प्र ते दिवो न वृष्टयो धारा यन्त्यसश्चतः । अभि शुक्रामुपस्तिरम् ॥२८॥

इन्द्रायेन्दुं पुनीतनोग्रं दक्षाय साधनम् । ईशानं वीतिराधसम् ॥२९॥

पवमान ऋतः कविः सोमः पवित्रमासदत् । दधत्स्तोत्रे सुवीर्य्यम्॥३०॥

---

२४ सोम, मैं जमदग्नि तुम्हारी स्तुति करता हूँ । तुम हमें गोयुक्त और सर्वत्र प्रशंसित अन्न दो ।

२५ सोम, तुम मुख्य हो । पूजनीय रक्षणोंके साथ हमारी स्तुतियोंपर बरसो । सारे स्तुति-रूप वाक्योंपर भी बरसो ।

२६ सोम, तुम विश्व-कम्पक हो । हमारे वचनोंको ग्रहण करते हुए तुम आकाशसे वारि-वर्षण करो ।

२७ कवि सोम, तुम्हारी महिमासे ये भुवन स्थित हैं । सारी नदियाँ तुम्हारा ही आज्ञा-पालन करती हैं ।

२८ सोम, आकाशकी वारि-धाराके समान तुम्हारी धारा शुक्लवर्ण और बिछाये हुए दशा-पवित्रकी ओर जाती है ।

२९ ऋत्विको, उग्र, बल-करण, धनपति और धन देनेवाले सोमको इन्द्रके लिये प्रस्तुत करो ।

३० सत्य, क्रान्तकर्मा और क्षरणशील सोम हमारे स्तोत्रमें शोभन वीर्य देते हुए दशा-पवित्रपर बैठते हैं ।

# ६३ सूक्त

पवमान सोम देवता। कश्यपगोत्रीय निध्रुव ऋषि। गायत्री छन्द।

आ पवस्व सहस्रिणं रयिं सोम सुवीर्यम्। अस्मे श्रवांसि धारय ॥१॥

इषमूर्जं च पिन्वस इन्द्राय मत्सरिन्तमः। चमूष्वा नि षीदसि ॥२॥

सुत इन्द्राय विष्णवे सोमः कलशे अक्षरत्।

मधुमाँ अस्तु वायवे ॥३॥

एते असृग्रमाशवोति ह्वरांसि बभ्रवः। सोमा ऋतस्य धारया ॥४॥

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्णः ॥५॥

सुता अनु स्वमा रजोऽभ्यर्षन्ति बभ्रवः। इन्द्रं गच्छन्त इन्दवः ॥६॥

अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः। हिन्वानो मानुषीरपः ॥७॥

अयुक्त सूर एतशं पवमानो मनावधि। अन्तरिक्षेण यातवे ॥८॥

---

१ सोम, तुम बहु-सङ्ख्यक और शोभन-वीर्य धन क्षरित करो और हमें अन्न दो।

२ सोम, तुम अतीव मादक हो। तुम इन्द्रके लिये अन्न, बल और रस देते हो। तुम चमसोंमें बैठते हो

३ जो सोम इन्द्र, विष्णु और वायुके लिये अभिषुत होकर द्रोण-कलसमें जाते हैं, वह मधुर रसवाले हैं।

४ पिङ्गलवर्ण और क्षिप्रकारी सोम जलकी धारासे बनाये जाते हैं। सोम राक्षसोंकी ओर जाते हैं।

५ इन्द्रको बढ़ाते हुए, जल लाते हुए सब प्रकारसे अथवा सोमरसको हमारे लिये मङ्गल-जनक करते हुए और कृपणोंका विनाश करते हुए सोम जाते हैं।

६ पिङ्गल-वर्ण और अभिषुत सोम इन्द्रकी ओरसे अपने स्थानको जाते हैं।

७ सोम, मनुष्योंके उपयोगी जलको बरसाते हुए तुमने अपनी धारा ( तेज ) से सूर्यको प्रकाशित किया था। उसी धारासे बहो।

८ क्षरणशील सोम मनुष्यके लिये और अन्तरीक्षमें गतिके लिये सूर्यके अश्वको जोतते हैं।

उत त्या हरितो दश सूरोऽयुक्त यातवे ।
इन्दुरिन्द्र इति ब्रुवन् ॥९॥
परीतो वायवे सुतं गिर इन्द्राय मत्सरम् ।
अव्यो वारेषु सिञ्चत ॥१०॥
पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम दुष्टरम् ।
यो दूणाशो वनुष्यता ॥११॥
अभ्यर्ष सहस्रिणं रयिं गोमन्तमश्विनम् । अभि वाजमुत श्रवः ॥१२॥
सोमो देवो न सूर्योऽद्रिभिः पवते सुतः । दधानः कलशे रसम् ॥१३॥
एते धामान्यार्य्या शुक्रा ऋतस्य धारया । वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥१४॥
सुता इन्द्राय वज्रिणे सोमासो दध्याशिरः । पवित्रमत्यक्षरन् ॥१५॥
प्र सोम मधुमत्तमो राये अर्ष पवित्र आ ।
मदो यो देववीतमः ॥१६॥

---

९ सोम इन्द्रका नाम कहते हुए दसों दिशाओंमें जानेके लिये सूर्यके अश्वको जोतते हैं।

१० स्तोताओ, तुम लोग वायु और इन्द्रके लिये अभिषुत और मदकर सोमको अभिषव-देशसे लेकर मेषलोमपर निश्चित करो।

११ क्षरणशील सोम, जिस धनका विनाश हिंसक शत्रु नहीं कर सकता, ऐसे शत्रुओंके लिये दुर्लभ धन हमें दो।

१२ तुम हमें बहुसङ्ख्यक और गौ तथा अश्वसे युक्त धन दो और बल तथा अन्न हमें दो।

१३ सूर्यदेवके समान दीप्तिशाली और पत्थरोंसे अभिषुत सोम द्रोण-कलसमें रस धारण करके क्षरित होते हैं।

१४ अभिषुत और दीप्त सोम श्रेष्ठ यजमानोंके गृहोंमें गोयुक्त अन्न, जल-धारा-रूपसे, बरसते हैं।

१५ वज्रधर इन्द्रके लिये निष्पोड़ित सोम दधि-संस्कृत होकर और दशापवित्रमें जाकर क्षरित होते हैं।

१६ सोम, तुम्हारा जो रस अतीव मधुर है, उस देव-काम रसको हमारे धनके लिये दशा-पवित्रमें बहाओ।

वृषणस्ते वृष्ण्यं शवो वृषा वनत् वृषा मदः । सत्यं वृषन्वृषेदसि ॥२॥

अश्वो न चक्रदो वृषा सं गा इन्दो समर्वतः ।

वि नो राये दुरो वृधि ॥३॥

असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया ।

शुक्रासो वीरयाशवः ॥४॥

शुम्भमाना ऋतायुभिर्मृज्यमाना गभस्त्योः । पवन्ते वारे अव्यये ॥५॥

ते विश्वा दाशुषे वसु सोमा दिव्यानि पार्थिवा ।

पवन्तामान्तरिक्ष्या ॥६॥

पवमानस्य विश्ववित् प्र ते सर्गा असृक्षत ।

सूर्यस्येव न रश्मयः ॥७॥

केतुं कृण्वन्दिवस्परि विश्वा रूपाभ्यर्षसि ।

समुद्रः सोम पिन्वसे ॥८॥

---

२ काम-वर्षक सोम, तुम्हारा बल वर्षणशील है, तुम्हारा विभाग भी वर्षणशील है और तुम्हारा रस भी वर्षणशील है । सचमुच तुम सब तरहसे वर्षा करनेवाले हो ।

३ सोम, तुम अश्वके समान शब्द करते हो। तुम हमें पशु और अश्व दो । धन-प्राप्तिके लिये दरवाजा खोलो ।

४ बली, उज्ज्वल और वेगमान् सोमकी सृष्टि, गौओं, अश्वों और पुत्रोंकी प्राप्तिकी इच्छासे, की गयी है ।

५ याज्ञिक लोग सोमको सुशोभित और दोनों हाथोंसे परिमार्जित करते हैं । सोम मेषलोमपर बहते हैं ।

६ सोम हवि देनेवालेके लिये द्युलोक, पृथिवी और अन्तरीक्षमें उत्पन्न सारे धन बरसें ।

७ विश्वदर्शक और क्षरणशील, तुम्हारी धाराए सूर्यकी किरणोंके समान प्रकाशमाना और इस समय निर्मित हो रही हैं ।

८ सोम, रसशाली तुम संकेत वा ध्यान करके अन्तरीक्षसे हमें सारे रूप वितरित करो और नाना धन भी हमें दो ।

हिन्वानो वाचमिष्यसि पवमान विधर्म्मणि । अक्रान्देवो न सूर्य्यः ॥९॥

इन्दुः पविष्ट चेतनः प्रियः कवीनां मती । सृजदश्वं रथीरिव ॥१०॥

ऊर्मिर्यस्ते पवित्र आ देववीः पर्य्यक्षरत् । सीदन्नृतस्य योनिमा ॥११॥

स नो अर्ष पवित्र आ मदो यो देववीतमः ।
इन्दविन्द्राय पीतये ॥१२॥

इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः ।
इन्दो रुचाभि गा इहि ॥१३॥

पुनानो वरिवस्कृध्यूर्ज्जं जनाय गिर्वणः । हरे सृजान आशिरम् ॥१४॥

पुनानो देववीतय इन्द्रस्य याहि निष्कृतम् ।
द्युतानो वाजिभिर्यतः ॥१५॥

प्र हिन्वानास इन्दवोऽच्छा समुद्रमाशवः ।
धिया जूता असृक्षत ॥१६॥

---

९ सोम, जब तुम्हारा रस, सूर्यदेवके समान, दशापवित्रपर चढ़ता है, तब तुम उसी मार्गमें प्रेरित होकर शब्द करते हो ।

१० प्रज्ञापक और देवोंके प्रिय सोम कान्तकर्मा स्तोताओंकी स्तुतिसे क्षरित होते हैं । सोम उसी प्रकार तरङ्ग चलाते हैं, जिस प्रकार रथी अश्वको चलाता है ।

११ सोम, तुम्हारी जो तरङ्ग देवाभिलाषी है, वह दशापवित्रपर क्षरित होती है ।

१२ सोम, तुम अतीव देवाभिलाषी और मदकर हो । इन्द्रके पानके लिये हमारे दशापवित्र-पर क्षरित होओ ।

१३ सोम, ऋत्विकोंके द्वारा संशोधित होकर तुम हमारे अन्नके लिये क्षरित होओ । तुम रुचिकर अन्नके साथ गौओंकी ओर जाओ ।

१४ स्तुत्य और हरित-वर्ण सोम, तुम दूधके साथ बनाये जाते हो । शोधित होकर तुम यजमानको धन और अन्न दो ।

१५ सोम, दीप्तिमान्, यजमानोंके द्वारा लाये गये और यज्ञके लिये संशोधित किये गये तुम इन्द्रके पास जाओ ।

१६ वेगशाली सोम अन्तरीक्षके प्रति प्रेरित होकर और अँगुलिके द्वारा तौले जाकर उत्पादित किये जाते हैं ।

मर्म्मृजानास आयवो वृथा समुद्रमिन्दवः । अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥१७॥
परि णो याह्यस्मयुर्विश्वा वसून्योजसा । पाहि नः शर्म्म वीरवत् ॥१८॥
मिमाति वह्निरेतशः पदं युजान ऋक्वभिः ।
प्र यत् समुद्र आहितः ॥१९॥
आ यद्योनिं हिरण्ययमाशुर्ऋतस्य सीदति । जहात्यप्रचेतसः ॥२०॥
अभि वेना अनूषतेयक्षन्ति प्रचेतसः । मज्जन्त्यविचेतसः ॥२१॥
इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्वमधुमत्तमः । ऋतस्य योनिमासदन् ॥२२॥
तं त्वा विप्रा वचोविदः परिष्कृण्वन्ति वेधसः ।
सन्त्वा मृजन्त्यायवः ॥२३॥
रसं ते मित्रो अर्यमा पिबन्त वरुणः कवे । पवमानस्य मरुतः ॥२४॥
त्वं सोम विपश्चितं पुनानो वाचमिष्यसि । इन्दो सहस्रभर्णसम् ॥२५॥

---

१७ शोधित और गतिपरायण सोम सरलतासे आकाशकी ओर जाते हैं । वह जल-पात्रकी ओर जाते हैं ।

१८ सोम, तुम हमारी अभिलाषा करनेवाले हो । बलके द्वारा हमारे सारे धनोंकी रक्षा करो । हमारे पुत्रके समान गृहकी रक्षा करो ।

१९ सोम, जब वहनशील अश्व शब्द करता है और स्तोताओंके द्वारा यज्ञमें स्थान (स्तोत्र-श्रवण) के लिये आता है, तब वह अश्वरूप सोम जलमें (वसतीवरीमें) स्थित होता है ।

२० जब वेगशाली सोम यज्ञके हिरण्मय स्थानपर बैठते हैं, तब स्तोत्र-शून्योंके यज्ञमें नहीं जाते ।

२१ कमनीय स्तोता सोमकी स्तुति करते हैं और सुबुद्धि मनुष्य सोमका यजन करते हैं दुर्बुद्धि मनुष्य नरकमें निमज्जित होते हैं ।

२२ सोम, तुम बहुत ही मधुर हो । यज्ञ-स्थानमें बैठनेके लिये इन्द्र और मरुतोंके लिये क्षरित होओ ।

२३ सोम, क्षरणशील तुम्हें प्राज्ञ और कर्म-कर्त्ता स्तोता लोग अलङ्कृत करते हैं । तुम्हें मनुष्य भली भाँति शोधित करते हैं ।

२४ क्रान्तकर्मा सोम, क्षरणशील तुम्हारे रसको मित्र, अर्यमा, वरुण और मित्र सभी पीते हैं ।

२५ प्रदीप्त सोम, क्षरणशील तुम ज्ञान-पूत और बहुतोंका भरण करनेवाला वचन प्रेरित करते हो ।

उतो सहस्रभर्णसं वाचं सोम मखस्युवम् । पुनान इन्दवा भर ॥२६॥

पुनान इन्दवेषां पुरुहूत जनानाम् । प्रियः समुद्रमा विश ॥२७॥

दविद्युतत्या रुचा परिष्टोभन्त्या कृपा । सोमाः शुक्रा गवाशिरः ॥२८॥

हिन्वानो हेतृभिर्यत आ वाजं वाज्यक्रमीत् ।
सीदन्तो वनुषो यथा ॥२९॥

ऋधक् सोम स्वस्तये संजग्मानो दिवः कविः ।
पवस्व सूर्यो दृशे ॥३०॥

२६ दीप्त सोम क्षरणशील तुम हजारोंका भरण करनेवाला और यज्ञाभिलाषी वचन, हमारे लिये, ले आओ ।

२७ बहुतोंके द्वारा बुलाये गये सोम, क्षरणशील तुम इस यज्ञमें स्तोताओंके प्रिय होकर द्रोण-कलसमें पैठो ।

२८ उज्ज्वल और प्रकाशमान दीप्ति तथा चारो ओर शब्द करनेवाली धारासे युक्त होकर सोम दूधमें मिलाये जाते हैं ।

२९ जैसे योद्धा लोग रण-भूमिमें पैठते ही आक्रमण करते हैं, वैसे ही बली, स्तोताओंके द्वारा, प्रेरित और संयत सोम यज्ञ-रूप युद्धमें आक्रमण करते हैं ।

३० सोम, क्रान्त और सुन्दर वीर्यवाले तुम संगत होते हुए दर्शनके लिये द्युलोकसे प्रवाहित होओ ।

# प्रथम अध्याय समाप्त

# द्वितीय अध्याय

## ६५ सूक्त

पवमान सोम देवता। वरुण-पुत्र भृगु अथवा भृगु-पुत्र जमदग्नि ऋषि। गायत्री छन्द।

हिन्वन्ति सूरमूस्रयः स्वसारो जामयस्पतिम्। महामिन्दुं महीयुवः ॥१॥
पवमान रुचारुचा देवो देवेभ्यस्परि। विश्वा वसून्या विश ॥२॥
आ पवमान सुष्टुतिं वृष्टिं देवेभ्यो दुवः। इषे पवस्व संयतम् ॥३॥
वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे। पवमान स्वाध्यः ॥४॥
आ पवस्व सुवीर्यं मन्दमानः स्वायुध। इतोष्विन्दवा गहि ॥५॥
यदद्भिः परिषिच्यसे मृज्यमानो गभस्त्योः। द्रुणा सधस्थमश्नुषे ॥६॥

---

१ अङ्गुलि-रूप, परस्पर बन्धु-भूत और कार्य-कुशल स्त्रियाँ तुम्हारे अभिषवकी इच्छा करके सुन्दर वीर्यवाले, सारे संसारके स्वामी, महान् और अपने पति सोमके क्षरणशील होनेकी इच्छा करती हैं।

२ दशापवित्रसे शोधित, तेजके द्वारा दीप्त सोम, देवोंके पाससे निखिल धन हमें दो।

३ पवमान सोम, देवोंकी परिचर्याके लिये शोभन स्तुतिवाली वर्षा करो। हमारे अन्नके लिये वर्षा करो।

४ सोम, तुम अभीष्ट-फल-वर्षक हो। पवमान सोम, शोभन कर्मवाले हम किरणोंके द्वारा तेजस्वी तुम्हें हम यज्ञमें बुलाते हैं।

५ तुम्हारे धनुष् आदि आयुध शोभन हैं। देवोंको प्रमत्त करते हुए तुम हमें शोभन वीर्य-वाले पुत्र दो। चमसोंमें बहनेवाले सोम, हमारे यज्ञमें आओ।

६ सोम, तुम बाहुओंके द्वारा संशोधित किये और वसतीवरी-जलसे सींचे जाते हो। उस समय तुम काष्ठ-पात्रमें निहित होकर अपने स्थानमें गमन करते हो।

प्र सोमाय व्यश्ववत् पवमानाय गायत । म[illegible]चक्षसे ॥७॥
यस्य वर्णं मधुश्चुतं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । [illegible]द्राय पीतये ॥८॥
तस्य ते वाजिनो वयं विश्वा धनानि जग्यु[illegible]खित्वमा वृणीमहे ॥९॥
वृषा पवस्व धारया मरुत्वते च मत्सरः । वि[illegible]न ओजसा ॥१०॥
तं त्वा धर्त्तारमोण्योः पवमान स्वर्दृशम् । [illegible]षु वाजिनम् ॥११॥
अया चित्तो विपानया हरिः पवस्व धारया । [illegible]जेषु चोदय ॥१२॥
आ न इन्दो महीमिषं पवस्व विश्वदर्शतः । [illegible] सोम गातुवित् ॥१३॥
आ [illegible]लशा अनूषतेन्दो धाराभिरोजसा । ए[illegible]तये विश ॥१४॥
[illegible]स्य ते मद्यं रसं तीव्रं दुहन्त्यद्रिभिः । स [illegible]भिमाहिता ॥१५॥

[illegible]ताओ, व्यश्व ऋषिके समान दशापवित्रमें संस्कृत, [illegible] और अनेक स्तोत्रोंसे युक्त [illegible] लिये गाओ ।

८ [illegible]युओ, शत्रु-निवारण-समर्थ, मधुर रस देनेवाले, हरित-वर्ण और दीप्तिमान् सोमको [illegible]के पानके लिये, अभिषुत करो ।

९ [illegible] बलशाली, सारे शत्रु-धनोंके नेता तुम्हारे सख्यका हम संभजन करते हैं ।

१० अभीष्ट-फल-वर्षक सोम, धारा-रूपसे द्रोण-कलसमें आओ । आकर इन्द्र और मरुतोंके लिये मदकर होओ । सोम, तुम आत्म-बलसे युक्त होकर स्तोताओंको धन देते हुए मादयिता होओ ।

११ पवमान सोम, द्यावापृथिवीके धारक, स्वर्गके द्रष्टा, देवोंके दर्शनीय और बली तुम्हें मैं युद्ध-भूमिमें भेज रहा हूं ।

१२ सोम, तुम हमारी अङ्गुलियोंके द्वारा उत्पन्न (निर्गत), अभिषुत और हरित-वर्ण हो द्रोण-कलसमें आओ । अपने मित्र इन्द्रको संग्राममें भेजो ।

१३ सोम, दीपनशील तुम विश्व-प्रकाशक हो । हमें प्रचुर अन्न दो । पवनमान सोम हमारे लिये स्वर्ग-मार्गके सूचक होओ ।

१४ क्षरणशील सोम, अभिषव-कालमें बलसे युक्त तुम्हारी, धाराओं-वाले द्रोण-कलसमें, स्तोताओंके द्वारा, स्तुति होती है । अनन्तर तुम इन्द्रके पानके लिये आओ और चमसोंमें पैठो ।

१५ सोम, तुम्हारे मदकर और क्षिप्र मद-दाता रसको पत्थरोंसे अध्वर्यु आदि दूहते हैं । पापियोंके घातक होकर तुम क्षरित होओ ।

राजा मेधाभिरीयते पवमानो मनावधि । अन्तरिक्षेण यातवे ॥१६॥

आ न इन्दो शतग्विनं गवां पोषं स्वश्व्यम् । वहा भगत्तिमूतये ॥१७॥

आ नः सोम सहो जुवो रूपं न वर्चसे भर । सुष्वाणो देववीतये ॥१८॥

अर्षा सोम द्युमत्तमोऽभि द्रोणानि रोरुवत् ।
सदञ्छ्येनो न योनिमा ॥१९॥

अप्सा इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमो अर्षति विष्णवे ॥२०॥

इषं तोकाय नो दधदस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणम् ॥२१॥

ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे । ये वादः शर्यणावति ॥२२॥

य आर्जीकेषु कृत्वसु ये मध्ये पस्त्यानाम् । ये वा जनेषु पञ्चसु ॥२३॥

---

१६ मनुष्योंके यज्ञ करनेपर राजा सोम आकाशमार्गसे द्रोण-कलसके प्रति जानेके लिये स्तुत हो रहे हैं ।

१७ क्षरणशील सोम, हमारी रक्षाके लिये हमें सैकड़ो और सहस्रो गौओंसे युक्त, गौ आदिके लिये पुष्टिकर, शोभन अश्वोंसे सम्पन्न और स्तुत्य धनदान करो ।

१८ सोम, तुम देवोंके पानके लिये अभिषुत हो । शत्रु-हनन-समर्थ बल और सर्वत्र प्रकाशके लिये रूप भी हमें दो ।

१९ सोम, जैसे श्येन पक्षी शब्द करते हुए अपने घोंसलेमें आता है, वैसे ही क्षरणशील और दीप्तिमान् सोम शब्द करते हुए दशापवित्रसे द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

२० वसतीवरी नामक जलके संभक्ता सोम इन्द्र, वायु, वरुण, विष्णु और अन्यान्य देवोंके लिये बहते हैं ।

२१ सोम, तुम हमारे पुत्रको अन्न देते हुए सर्वत्र सहस्र-संख्यक धन हमें दो ।

२२ जो सोम दूर अथवा समीपके देशमें इन्द्रके लिये अभिषुत हुए हैं और जो कुरुक्षेत्रके निकट शर्यणावत् नामक सरोवरमें अभिषुत हुए हैं, वह हमें अभिमत फल दें ।

२३ जो सोम आर्जीक ( देश वा व्यास नदी ? ) में अभिषुत हुए हैं, जो कृत्व ( कर्मनिष्ठ ) देश, सरस्वती नदीके तटपर और पञ्चजन ( पंजाब वा चार वर्ण और निषाद ) में प्रस्तुत हुए हैं, वह हमें अभीष्ट प्रदान करें ।

५

ते नो वृष्टिं दिवस्परि पवन्तामा सुवीर्यम् ।
सुवाना देवास इन्दवः ॥२४॥

पवते हर्यतो हरिर्गृणानो जमदग्निना । हिन्वानो गोरधि त्वचि ॥२५॥

प्र शुक्रासो वयोजुवो हिन्वानासो न सप्तयः ।
श्रीणाना अप्सु मृञ्जत ॥२६॥

तं त्वा सुतेष्वाभुवो हिन्विरे देवतातये । स पवस्वानया रुचा ॥२७॥

आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥२८॥

आ मन्द्रमा वरेण्यमा विप्रमा मनीषिणम् । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥२९॥

आ रयिमा सुचेतुनमा सुक्रतो तनूष्वा । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥३०॥

---

२४ वे सारे अभिषुत, दीप्त चमसोंमें क्षरणशील सोम, आकाशसे वृष्टि और शोभन-वीर्यवाले पुत्र तथा धन आदि हमें दें ।

२५ देवाभिलाषी, हरितवर्ण, गोचर्मके ऊपर प्रेरित और जमदग्नि ऋषिके द्वारा स्तुत सोम पात्रमें जाते हैं ।

२६ जैसे जलमें ले जाकर अश्वोंको मार्जित किया जाता है, वैसे ही दीप्त, अन्नप्रेरक और क्षीर आदिमें मिलाये जाकर सोम वसतीवरीमें पुरोहितोंके द्वारा मार्जित किये जाते हैं ।

२७ सोमाभिषव हो जानेपर ऋत्विक् लोग इन्द्रादि देवोंके लिये तुम्हे पत्थरोंसे प्रेरित करते हैं । तुम अभिषुत होकर, प्रदीप्त धारासे, द्रोणकलसमें आओ ।

२८ सोम, तुम्हारे सुखकर, वनादि-प्रापक, शत्रुओंसे रक्षक और बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय बलको हम याज्ञिक, आजके यज्ञमें, भजते हैं ।

२९ सोम, मदकर, स्वीकरणीय, मेधावी, बुद्धिशाली, स्तुति-युक्त, सर्व-रक्षक और अनेकोंके द्वारा स्पृहणीय तुम्हारा भजन हम करते हैं ।

३० शोभन-यज्ञ सोम, हम तुम्हारे धनका आश्रय करते हैं । हमारे पुत्रोमें तुम धन और सुन्दर ज्ञान दो । हम सर्व-रक्षक और बहुतोंके द्वारा अभिलषित तुम्हारा आश्रय करते हैं ।

# ६६ सूक्त

अग्नि और पवमान देवता। शत वैखानस ऋषि। गायत्री और अनुष्टुप् छन्दी

पवस्व विश्वचर्षणेभि विश्वानि काव्या। सखा सखिभ्य ईड्यः ॥१॥

ताभ्यां विश्वस्य राजसि ये पवमान धामनी।

प्रतीची सोम तस्थतुः ॥२॥

परि धामानि यानि ते त्वं सोमासि विश्वतः।

पवमान ऋतुभिः कवे ॥३॥

पवस्व जनयन्निषोऽभि विश्वानि वार्य्या।

सखा सखिभ्य ऊतये ॥४॥

तव शुक्रासो अर्च्चयो दिवस्पृष्ठे वि तन्वते। पवित्रं सोम धामभिः ॥५॥

तवेमे सप्त सिन्धवः प्रशिषं सोम सिस्रते।

तुभ्यं धावन्ति धेनवः ॥६॥

---

१ सूक्ष्मदर्शक सोम, तुम सखा और स्तोतव्य हो। हम तुम्हारे सखा हैं। हमारे लिये सारे कर्मों और स्तोत्रोंको लक्ष्य कर क्षरित होओ।

२ पवमान सोम, तुम्हारे जो दो टेढ़े पत्ते (वा किरण और सोमरस) हैं, उनसे तुम सारे संसारके स्वामी होते हो।

३ शोभित और क्रान्तकर्मा सोम, तुम्हारा तेज (वा पत्र) चारो ओर है। उससे तुम वसन्त आदि ऋतुओंमें सर्वत्र सुशोभित होते हो।

४ सोम, तुम हमारे सखा हो। हमारे सारे स्तोत्रोंकी ओर ध्यान देकर, हम मित्रोंके रक्षणके लिये, अन्न देनेको आओ।

५ तेजस्वी तुम्हारो सर्वत्र ज्वलनशील और पूजनीय किरणं पृथिवीपर जलका विस्तार करती हैं।

६ ये गङ्गा आदि सात नदियाँ तुम्हारी आज्ञाका अनुगमन करती हैं। तुम्हारे लिये ही गायें, दुग्ध आदि देनेको, दौड़ती हैं।

प्र सोम याहि धारया सुत इन्द्राय मत्सरः ।
दधानो अक्षिति श्रवः ॥७॥
समु त्वा धीभिरस्वरन् हिन्वतीः सप्त जामयः ।
विप्रमाजा विवस्वतः ॥८॥
मृजन्ति त्वा समग्रुवोऽव्ये जीरावधि ष्वणि ।
रेभो यदज्यसे वने ॥९॥
पवमानस्य ते कवे वाजिन्त्सर्गा असृक्षत ।
अर्वन्तो न श्रवस्यवः ॥१०॥
अच्छा कोशं मधुश्चुतमसृग्रं वारे अव्यये ।
अवावशन्त धीतयः ॥११॥
अच्छा समुद्रमिन्दवोऽस्तं गावो न धेनवः ।
अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥१२॥

---

७ सोम, तुम इन्द्रके लिये मदकर और हमारे द्वारा अभिषुत हो। दशापवित्रसे निकलकर द्रोण-कलसमें जाओ। हमें प्रचुर धन दो।

८ सोम, स्तुति करते हुए सात होत्रक लोगोंने देवोंके सेवक यजमानके यज्ञमें मेधावी और क्षरणशील तुम्हारी स्तुति की।

९ सोम, अँगुलियाँ शीघ्र वने, शब्दवाले और मेषलोमसे बनाये दशापवित्रपर तुम्हें तब मारती (शोधित करती) हैं, जब तुम शब्द करते हुए वसतीवरी नामक जलसे सिञ्चित होते हो।

१० क्रान्तप्रज्ञ और अन्नवान् सोम, जैसे, अश्व अन्न लानेके लिये दौड़ते हैं, वैसे ही यजमानोंके अन्नकी कामना करनेवाली तुम्हारी धाराएँ दौड़ती हैं।

११ मधुर रस बरसानेवाले द्रोण-कलसको लक्ष्य करके मेषलोममय दशापवित्रपर पुरोहितोंके द्वारा सोम बनाये जाते हैं। हमारी अँगुलियाँ सोमोंके शोधनकी इच्छा करती हैं।

१२ जैसे दुग्ध देकर मनुष्योंको आनन्द देनेवाली धेनुएँ और नवप्रसूता गायें अपने गोष्ठ को जाती हैं, वैसे ही क्षरणशील सोम अपने संगमन-स्थान द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं। सोम यज्ञ-स्थानकी ओर जाते हैं।

प्र ण इन्दो महे रण आपो अर्षन्ति सिन्धवः ।
यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥१३॥
अस्य ते सख्ये वयमियक्षन्तस्त्वोतयः । इन्दो सखित्वमुश्मसि ॥१४॥
आ पवस्व गविष्टये महे सोम नृचक्षसे । एन्द्रस्य जठरे विश ॥१५॥
महाँ असि सोम ज्येष्ठ उग्राणामिन्द ओजिष्ठः ।
युध्वा सञ्छश्वज्जिगेथ ॥१६॥
य उग्रेभ्यश्चिदोजीयाञ्छूरेभ्यश्चिच्छूरतरः ।
भूरिदाभ्यश्चिन्मंहीयान् ॥१७॥
त्वं सोम सूर एषस्तोकस्य साता तनूनाम्
वृणीमहे सख्याय वृणीमहे युज्याय ॥१८॥
अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥१९॥

---

१३ सोम, जब तुम दुग्ध आदिमें मिलाये जाते हो, तब हमारे यज्ञके लिये क्षरणशील जल (वसतीवरी) जाता है।

१४ पूजाभिलाषी और तुम्हारे बन्धु-कर्ममें स्थित हम तुम्हारे रक्षणमें हैं और तुम्हारे बन्धुत्वकी कामना करते हैं।

१५ सोम, अङ्गिरा लोगोंकी गायें खोजनेवाले, महान् और मनुष्य-दर्शक इन्द्रके लिये बहो तथा इन्द्रके उदरमें पैठो ।

१६ सोम, तुम महान् हो। तुम देवोंके आनन्ददाता और प्रशंसनीय हो। सोम, उग्र बल-वालोंमें भी तेजस्वी हो। शत्रुओंके साथ युद्ध करते हुए उनके धनको तुमने जीता ।

१७ सोम बलियोंमें बली, शूरमें शूर और दाताओंमें महान् दाता हैं।

१८ सोम, तुम सुन्दर वीर्यवाले हो । तुम यज्ञोंके प्रेरक हो। हमें अन्न दो। पुत्र दो। तुम्हारी मैत्रीके लिये हम तुम्हारा आश्रय करते हैं। शत्रु-बाधाको दूर करनेके लिये हम तुम्हारा आश्रय करते हैं।

१९ पवमान सोम, तुम हमारे जीवनकी रक्षा करते हो। हमें अन्न-रस और बल दो । राक्षसोंको हमसे दूर ही नष्ट करो।

अग्निरृषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयम् ॥२०॥
अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् ।
दधद्रयिं मयि पोषम् ॥२१॥
पवमानो अति स्रिधोऽभ्यर्षति सुष्टुतिम् । सूरो न विश्वदर्शतः ॥२२॥
स मर्मृजान आयुभिः प्रयस्वान् प्रयसे हितः ।
इन्दुरत्यो विचक्षणः ॥२३॥
पवमान ऋतं बृहच्छुक्रं ज्योतिरजीजनत् ।
कृष्णा तमांसि जङ्घनत् ॥२४॥
पवमानस्य जङ्घ्नतो हरेश्चन्द्रा असृक्षत । जीरा अजिरशोचिषः ॥२५॥
पवमानो रथीतमः शुभ्रेभिः शुभ्रशस्तमः । हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः ॥२६॥
पवमानो व्यश्नवद्रश्मिभिर्वाजसातमः । दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥२७॥

---

२० चारो वर्ण और निषादके हितैषी, ऋषि, पवित्र, पुरोहित और महायशस्वी अग्निसे हम धनादिकी याचना करते हैं।

२१ अग्नि, शोभनकर्मा तुम हमें सुन्दर बलवाला तेज दो। पुत्र और गौ आदि भी दो।

२२ पवमान सोम शत्रुओंका अतिक्रम करते हैं। वह स्तोताओंकी शोभन स्तुतिको प्राप्त करते हैं। वह सूर्यके समान सबके दर्शनीय भी हैं।

२३ मनुष्योंके द्वारा बार-बार शोध्यमान सोम देवोंके पास निरन्तर जाते हैं। वह आनन्दप्रद अन्नवाले हैं। वह हविके लिये हितैषी हैं। वह सबके द्रष्टा हैं।

२४ क्षरणशील सोमने काले अन्धकारको नष्ट करते हुए, प्रचुर, सर्वत्र व्यापक, दीप्तिमान् और श्वेतवर्ण तेज उत्पन्न किया।

२५ बार-बार अन्धकारका विनाश करनेवाले, हरित-वर्ण, व्यापक तेजवाले और क्षरणशील सोमकी आनन्ददायिनी, शीघ्रकारिणी और वहनशील धाराएँ दशापवित्रसे निकल रही हैं।

२६ पवमान सोम, अतीव रथवाले, निर्मलतम यशवाले, हरित-धारावान् और मरुतोंकी सहायतासे युक्त हैं। अपनी किरणोंसे सारे विश्वका व्याप्त करते हैं।

२७ पवमान, अन्नदाता और स्तोताको सुन्दर वीर्यसे युक्त पुत्र देते हुए सोम अपनी किरणोंसे सारे संसारको व्याप्त करते हैं।

प्र सुवान इन्दुरक्षाः पवित्रमत्यऽव्ययम् । पुनान इन्दुरिन्द्रमा ॥२८॥

एष सोमो अधित्वचि गवां क्रीळत्यद्रिभिः ।

इन्द्रं मदाय जोहुवत् ॥२६॥

यस्य ते द्युम्नवत् पयः पवमानाभृतं दिवः ।

तेन नो मृळ जीवसे ॥३०॥

## ६७ सूक्त

पवमान सोम देवता । बार्हस्पत्य भरद्वाज, मारीच कश्यप, रहूगण गोतम, भौम अत्रि, गाथिन विश्वामित्र, भार्गव जमदग्नि, मैत्रावरुणि वसिष्ठ, आङ्गिरस पवित्र ऋषि । गायत्री, पुर उष्णिक् और अनुष्टुप् छन्द ।

त्वं सोमासि धारयुर्मन्द्र ओजिष्ठो अध्वरे । पवस्व मंहयद्रयिः ॥१॥

---

२८ क्षरणशील सोम मेषलोममय पवित्रको लाँघकर क्षरित हुए । पवित्रसे शुद्ध होकर सोम इन्द्रके पेटमें पैठें ।

२६ किरण-रूप सोम गोचर्मके ऊपर पत्थरोंके साथ क्रीड़ा करते हैं । मदके लिये सोमने इन्द्रको बुलाया ।

३० क्षरणशील सोम, द्युलोकसे श्येन-रूपिणी गायत्रीसे लाये गये और यशोयुक्त सोम, रस-रूप अन्न तुम्हारे पास है । उससे हमें, चिर जीवन के लिये, आनन्दित करो ।*

१ क्षरणशील सोम, तुम अतीव मदकर, अत्यन्त ओजस्वी, हिंसा-शून्य यज्ञमें अभिषव-धारकी इच्छा करनेवाले और स्तोताओंको धन देनेवाले हो । द्रोण-कलसमें धारा-रूपसे गिरो ।

---

* इस सूक्तमें सोमरस तैयार करनेकी सारी क्रिया वर्णित है । पहले सोम लता-रूप रहता है । उसमें दो टेढ़े पत्ते रहते हैं । उसे पत्थरोंसे कूटा जाता है । अनन्तर अँगुलियोंसे निचोड़कर रस निकाला जाता है । रसको जलमें मिलाकर भेंड़के बालोंसे बने छननेसे उसे छाना जाता है । छननेको कलसके मुँहपर रखकर अँगुलियोंसे ऊपरका रस चलाया जाता है और छननेसे होकर रस कलसमें गिरता जाता है । फिर उसमें दूध वा दही मिलाकर पिया जाता है । सोमरस सादा होता था । कहीं-कहीं हरे और पीले रंगका भी कहा गया है । गोचर्मके पात्रमें भी सोम-रसको रखा जाता था ।

त्वं सुतो नृमादनो दधन्वान् मत्सरिन्तमः। इन्द्राय सूरिरन्धसा ॥२॥
त्वं सुष्वाणो अद्रिभिरभ्यर्ष कनिक्रदत्। द्युमन्तं शुष्ममुत्तमम् ॥३॥
इन्दुर्हिन्वानो अर्षति तिरो वाराण्यव्यया। हरिर्वाजमचिक्रदत् ॥४॥
इन्दो व्यव्यमर्षसि वि श्रवांसि वि सौभगा।
वि वाजान्त्सोम गोमतः ॥५॥
आ न इन्दो शतग्विनं रयिं गोमन्तमश्विनम्।
भरा सोम सहस्रिणम् ॥६॥
पवमानास इन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः। इन्द्रं यामेभिराशत ॥७॥
ककुहः सोम्यो रस इन्दुरिन्द्राय पूर्व्यः। आयुः पवत आयवे ॥८॥
हिन्वन्ति सूरमुस्रयः पवमानं मधुश्चुतम्। अभि गिरा समस्वरन् ॥९॥

---

२ कर्म-निष्ठ पुरुहितोंको तुम प्रमत्त करनेवाले हो। उन्हें धन देते हुए यज्ञके धारक, प्राज्ञ और अभिषुत तुम अन्नके साथ इन्द्रके लिये अतीव प्रमत्तकर बनो।

३ पवमान सोम, पत्थरोंसे कूटे जाकर तुम शब्द करते हुए कलसकी ओर जाओ और दीप्तियुक्त तथा शत्रुशोषक बल भी प्राप्त करो।

४ पत्थरोंसे कूटे जाकर सोम मेषलोममय पवित्रसे निकल कर जाते हैं और हरित्-वर्ण, सोम अन्नसे कहते हैं कि, "मैं तुम्हारे साथ इन्द्रको बुलाता हूं।"

५ सोम, जब तुम मेष लोममय पवित्र ( दशापवित्र ) से निकलते हो, तब हवीरूप अन्न, सौभाग्य ( धन ) और गोयुक्त बल प्राप्त करते हो।

६ पात्रोंमें गिरनेवाले सोम, हमारे लिये सौ गायें, सहस्र अश्व और धन दो।

७ मेषलोममय पवित्रसे निकलकर कलसकी ओर अनेक धाराओंसे गिरते हुए और शीघ्र मदकारी सोम चमस आदिको व्याप्त करते हुए अपनी गतिसे इन्द्रको परिव्याप्त करते हैं।

८ सोम सबसे उन्नत हैं। वह पूर्वजोंके द्वारा अभिषुत सोम सर्वग इन्द्रके लिये कलसमें जाते हैं और इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं।

९ कार्य करनेके लिये इधर-उधर जानेवाली अँगुलियाँ मदकर रसको गिरानेवाले, यागादि कर्मके प्रेरक और क्षरणशील सोमको प्रेरित करती हैं। स्तोता लोग स्तोत्रके द्वारा इनकी भली भाँति स्तुति करते हैं।

अवितानो अजाश्वः पूषा यामनियामनि ।
आ भक्षत् कन्यासु नः ॥१०॥
अयं सोमः कपर्दिने घृतं न पवते मधु। आ भक्षत् कन्यासु नः ॥११॥
अयं त आघृणे सुतो घृतं न पवते शुचि। आ भक्षत् कन्यासु नः ॥१२॥
वाचो जन्तुः कवीनां पवस्व सोम धारया ।
देवेषु रत्नधा असि ॥१३॥
आ कलशेषु धावति श्येनो वर्म वि गाहते ।
अभि द्रोणा कनिक्रदत् ॥१४॥
परि प्र सोम ते रसोऽसर्जि कलशे सुतः ।
श्येनो न नक्तो अर्षति ॥१५॥
पवस्व सोम मन्दयन्निन्द्राय मधुमत्तमः ॥१६॥
असृग्रन्देववीतये वाजयन्तो रथा इव ॥१७॥

---

१० पूषा देवताका वाहन अज (बकरा) अथवा अश्व है। पूषा देवता हमारी सारी यात्राओं में रक्षक रहें। वह हमें कमनीय स्त्री (कन्या) दें।

११ कपर्दी (कल्याण मुकुटवाले) पूषाके लिये हमारे सोम, मादक घृतके समान, क्षरित होते हैं। वह हमें कमनीय स्त्री (कन्या) दें।

१२ सर्वत्र दीप्तिमान् पूषन्, तुम्हारे लिये अभिषुत सोम, शुद्ध घृतके समान क्षरित होते हैं।

१३ सोम, तुम स्तोताओंके स्तोत्रके जनक हो। तुम द्रोणकलसको प्राप्त करो। देवोंके लिये तुम रत्न आदिके दाता हो।

१४ अभिषुत सोम उसी प्रकार शब्द करते हुए द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं, जैसे श्येन पक्षी (बाज) अपने घोसलेको जाता है।

१५ सोम तुम्हारा अभिषुत रस, सर्वत्रगन्ता श्येन पक्षीके समान चमसोंमें फैलता है।

१६ सोम, तुम अतीव मधुर रसवाले और मादक हो। इन्द्रको प्रसन्न करनेके लिये आओ।

१७ अन्नवान् और अभिषुत सोमको देवोंके लिये ऋत्विक् लोग देते हैं। ये सोम रथके समान शत्रुओंकी सम्पत्तिका हरण करनेवाले हैं।

ते सुतासो मदिन्तमाः शुक्रा वायुमसृक्षत ॥१८॥

गृणाना तुन्नो अभिष्टुतः पवित्रं सोम गच्छसि।
दधत्स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥१९॥

एष तुन्नो अभिष्टुतः पवित्रमति गाहते। रक्षोहा वारमव्ययम् ॥२०॥

यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह। पवमान वि तज्जहि ॥२१॥

पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः।
यः पोता स पुनातु नः ॥२२॥

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा। ब्रम्ह तेन पुनीहि नः ॥२३॥

यत्ते पवित्रमर्चिवदग्ने तेन पुनीहि नः। ब्रम्हसवैः पुनीहि नः ॥२४॥

उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च। मां पुनीहि विश्वतः ॥२५॥

---

१८ अतीव मदकर, दीप्त और अभिषुत सोमने सोमरसके पानके लिये वायुको बनाया।

१९ सोम, तुम पत्थरोंसे अभिषुत होकर स्तोताको शोभन शक्तिवाले धन आदि देते हुए दशापवित्रकी ओर जाते हो।

२० पत्थरोंसे अभिषुत और सबके द्वारा स्तुत सोम राक्षसोंके बधिक हों। मेषलोममय दशापवित्रको लाँघकर वह द्रोणकलसमें जाते हैं।

२१ क्षरणशील सोम, जो भय दूरमें है, जो पासमें है और जो यहाँ है, उसे भली भाँति विनष्ट करो।

२२ सबके द्रष्टा, क्षरणशील और दशापवित्रके द्वारा शोधित सोम हमें पवित्र करें।

२३ क्षरणशील अग्नि, तुम्हारी जो तेजके बीचमें शुद्धिकर सामर्थ्य है, उससे हमारे पुत्रादिवर्द्धक शरीरको पवित्र करो।

२४ अग्नि, तुम्हारा जो शोधक और सूर्य आदिके तेजसे युक्त तेज है, उससे हमें पवित्र करो। सोमाभिषवसे हमें पवित्र करो।

२५ सबके प्रेरक और प्रकाशमान सोम, तुम अपने पाप-शोधक तेज और अभिषवसे चारो ओरसे मुझे पवित्र करो।

त्रिभिष्ट्वं देव सवितर्वर्षिष्ठैः सोम धामभिः ।
अग्ने दक्षैः पुनीहि नः ॥२६॥
पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु वसवो धिया ।
विश्वे देवाः पुनीत माजातवेदः पुनीहि मा ॥२७॥
प्र प्यायस्व प्र स्यन्दस्व सोम विश्वेभिरंशुभिः ।
देवेभ्य उत्तमं हविः ॥२८॥
उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतीवृधम् । अगन्म बिभ्रतो नमः ॥२९॥
अलाय्यस्य परशुर्ननाश तमा पवस्व देव सोम ।
आखुं चिदेव देव सोम ॥३०॥
यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः सम्भृतं रसम् ।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥३१॥
पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् ।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥३२॥

---

२६ देव, सबके प्रेरक और क्षरणशील अग्नि, तुम वृद्धतम और सामर्थ्यवाले तीन (अग्नि, वायु और सूर्यके) शरीरोंसे शुद्ध करो।

२७ इन्द्रादिदेव मुझे पवित्र करें। वसु देवता हमें अपने कर्मोंसे पवित्र करें। सब देवता मुझे पवित्र करें। जात-बुद्धि अग्नि, मुझे पवित्र करो।

२८ सोम, हमें भली भाँति बढ़ाओ। अपनी सारी किरणोंसे देवोंको उत्तम हवीरूप सोमरस दो।

२९ सोम, सबको प्रसन्न करनेवाले, शब्द करनेवाले, तरुण, आहुतियोंके द्वारा वर्द्धनीय और क्षरणशील हैं। नमस्कार करते हुए उनके पास हम जाते हैं।

३० सबके आक्रमणकारी शत्रुका परशु नष्ट हो। दीप्यमान सोम, हमारे लिये क्षरित होओ। सबके हन्ता उस शत्रुको मारो।

३१ जो मनुष्य पवमान सोम देवताके ऋषियोंके द्वारा सम्पादित वेदरसरूप सार (सूक्त-समूह) को पढ़ता है, वह ऐसे पाप-शून्य अन्नका भक्षण करता है, जिससे वायुदेव पवित्र कर चुके हैं।

३२ जो ब्राह्मण पवमान सोम देवताके ऋषियोंके द्वारा सम्पादित वेदरसरूप सार (सूक्त-समूह) को पढ़ता है, उसके लिये सरस्वती (वाग्देवता) स्वयं क्षीर, घृत और मधुकर सोमका दोहन करती हैं।

# ४ अनुवाक । ६८ सूक्त

पवमान सोम देवता । भलन्दन-पुत्र वत्सप्रि ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र देवमच्छा मधुमन्त इन्दवोऽसिष्यदन्त गाव आ न धेनवः ।
बर्हिषदो वचनावन्त ऊधभिः परिस्रुतमुस्त्रिया निर्णिजं धिरे ॥१॥
स रोरुवदभि पूर्वा अचिक्रददुपारुहः श्रथयन्त्स्वादते हरिः ।
तिरः पवित्रं परियन्नुरु ज्रयो नि शर्याणि दधते देव आ वरम् ॥२॥
वि यो ममे यम्या संयती मदः साकं वृधा पयसा पिन्वदक्षिता ।
मही अपारे रजसी विवेविददभिव्रजन्नक्षितं पाज आ ददे ॥३॥
स मातरा विचरन्वाजयन्नपः प्र मेधिरः स्वधया पिन्वते पदम् ।
अंशुर्यवेन पिपिशे यतो नृभिः सञ्जामिभिर्नसते रक्षते शिरः ॥४॥
सं दक्षेण मनसा जायते कविर्ऋतस्य गर्भो निहितो यमा परः ।
यूना ह सन्ता प्रथमं वि जज्ञतुर्गुहा हितं जनिम नेममुद्यतम् ॥५॥

---

१ आनन्ददायिनी गौओंके समान मादक सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं। "हम्बा" शब्द करती हुई और कुशोंपर बैठी हुई दुग्धदात्री गायें चारो ओर बहनेवाले और शुद्ध सोमरसको, इन्द्रके लिये, धारण करती हैं।

२ शब्द करते और स्तोताओंकी मुख्य स्तुतियोंको सुनते हुए हरित-वर्ण सोम ऊपर चढ़नेवाली ओषधियों (लताओं)को फलसंयुक्त करके स्वादिष्ठ करते और मेषलोम-मय दशापवित्रसे होकर बड़े वेगसे बहते हैं। वह राक्षसोंको मारते हैं। अनन्तर सोमदेव यज-मानोंको श्रेष्ठ धन देते हैं।

३ सोमने साथ रहनेवाली द्यावापृथिवीको बनाया। उन्हें वर्द्धनशील और सामर्थ्यवाली कर-नेके लिये सोमने अपने रससे सींचा। महती और असीम द्यावापृथिवीको ज्ञात कराकर और चारो ओर जाते हुए सोमने अविनाशी बल प्राप्त किया।

४ प्राज्ञ सोम द्यावापृथिवीमें विचरण करते हुए और अन्तरीक्षके जलको भेजते हुए अन्नके साथ, अपने स्थान (उत्तर वेदी) को आप्यायित करते हैं। अनन्तर ऋत्विकोंके द्वारा सोम जौमें (जौके सत्तूमें) मिलाये जाते हैं। वह अँगुलियोंका समागम पाते और प्राणियोंकी रक्षा करते हैं।

५ प्रवृद्ध मनसे कार्य-कुशल सोम पृथिवीपर जन्म ग्रहण करते हैं। सोम यज्ञमें स्तुत्य हैं। वह देवोंके द्वारा नियमसे रखे गये हैं—सूर्य-रूपसे अवस्थित हैं। युवा सोम और सूर्य उत्पत्ति-कालमें विशेष रूपसे जन्म ग्रहण करते हैं। उनमें एक गुहामें संस्थापित हैं; दूसरे प्रकाशित होते हैं।

मन्द्रस्य रूपं विविदुर्मनीषिणः श्येनो यदन्धोऽभरत् परावतः ।
तं मर्जयन्त सुवृधं नदीष्वाँ उशन्तमंशुं परियन्तमृग्मियम् ॥६॥
त्वां मृजन्ति दश योषणः सुतं सोम ऋषिभिर्मतिभिर्धीतिभिर्हितम् ।
अव्यो वारेभिरुत देवहूतिभिर्नृभिर्यतो वाजमा दर्षि सातये ॥७॥
परिप्रयन्तं वय्यं सुषंसदं सोमं मनीषा अभ्यनूषत स्तुभः ।
यो धारया मधुमाँ ऊर्मिणा दिव इयर्ति वाचं रयिषालमर्त्यः ॥८॥
अयं दिव इयर्ति विश्वमा रजः सोमः पुनानः कलशेषु सीदति ।
अद्भिर्गोभिर्मृज्यते अद्रिभिः सुतः पुनान इन्दुर्वरिवो विदत् प्रियम् ॥९॥
एवा नः सोम परिषिच्यमानो वयो दधच्चित्रतमं पवस्व ।
अद्वेषे द्यावापृथिवी हुवेम देवा धत्त रयिमस्मे सुवीरम् ॥१०॥

---

६ विद्वान् लोग मदकर सोमरसका स्वरूप जानते हैं। सोम-रूप अन्नको (प्राण-दायिनी शक्तिको) गायत्री-रूप पक्षी दूर—द्युलोकसे लाया था। वैसे भली भाँति वर्द्धमान, किरण-रूप, देवकामी, चारो ओर जानेवाले और स्तुत्य सोमको ऋत्विक् लोग वसतीवरी-जलमें परिमार्जित करते हैं।

७ सोम, दोनों हाथोंसे उत्पन्न, ऋषियोंके द्वारा पात्रमें निहित और अभिषुत तुम्हें दस अँगुलियाँ स्तुतियों और कर्मोंके द्वारा मेषलोममय पवित्र (चलनी) पर परिमार्जित करती हैं। देवोंको बुलानेवाले कर्म-निष्ठ ऋत्विकोंके द्वारा गृहमें संगृहीत तुम स्तोताओंको अन्न देते हो।

८ पात्रोंमें चारो ओर जाते हुए, देवोंके द्वारा अभिलषित और शोभन स्थानवाले सोमकी मनोगत स्तुतियाँ स्तोत्र करती हैं। मदकर रसवाले सोम, वसतीवरी-जलके साथ, आकाशसे द्रोण-कलसमें गिरते हैं। शत्रु-धनको जीतनेवाले और अमर सोम वचनको प्रेरित करते हैं।

९ सोम द्युलोकसे समस्त जल दिलाते हैं। फिर वह दशापवित्रमें शोधित होकर कलसमें जाते हैं। वह पत्थरों, वसतीवरी-जल और दुग्ध आदिसे अलङ्कृत होते हैं। अनन्तर अभिषुत और शोधित सोम प्रिय और श्रेष्ठ धन स्तोताओंको देते हैं।

१० सोम, दाता तुम परिषिक्त होकर नानाविध अन्न हमें दो। द्वेष-शून्य द्यावापृथिवीको हम पुकारते हैं। देवो, हमें वीर पुत्रसे युक्त धन दो।

# ६६ सूक्त

पवमान सोम देवता। आङ्गिरस हिरण्यस्तूप ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

इषुर्न धन्वन् प्रति धीयते मतिर्वत्सो न मातुरुप सर्ज्यूधनि।
उरुधारेव दुहे अग्र आयत्यस्य व्रतेष्वपि सोम इष्यते ॥१॥
उपो मतिः पृच्यते सिच्यते मधु मन्द्राजनी चोदते अन्तरासनि।
पवमानः सन्तनिः प्रघ्नतामिव मधुमान्द्रप्सः परि वारमर्षति ॥२॥
अव्ये वधूयुः पवते परि त्वचि श्रथ्नीते नप्तीरदितेर्ऋतं यते।
हरिरक्रान्यजतः संयतो मदो नृम्णा शिशानो महिषो न शोभते ॥३॥
उक्षा मिमाति प्रति यन्ति धेनवो देवस्य देवीरुप यन्ति निष्कृतम्।
अत्यक्रमीदर्जुनं वारमव्ययमत्कं न निक्तं परि सोमो अव्यत ॥४॥

---

१ जैसे धनुष्पर वाण रखा जाता है, वैसे ही हम पवमान-रूप इन्द्रमें मननीय स्तुतिको रखते हैं। जैसे बछड़ा गोरूप माताके पयोधर स्तनके साथ सृष्ट हुआ है, वैसे ही इन्द्रके मदके लिये हम सोमको बनाते हैं। जैसे दुग्धदायिनी धेनु बछड़ेके आगे दूध देनेको जाती है, वैसे ही स्तोताओंके आगे इन्द्र आते हैं। इन्द्रके कर्मोंमें सोम दिया जाता है।

२ इन्द्रके लिये स्तोता लोग स्तुति करते हैं। इन्द्रके लिये मदकर सोमका सिञ्चन किया जाता है (सोममें जौका सत्तू मिलाया जाता है)। मदकर रसवाली सोम-धारा इन्द्रके मुखमें डाली जाती है। गृहादिमें भली भाँति विस्तृत, मदकर रसवाले, क्षरणशील और गति-परायण सोम वैसे ही मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं, जैसे सुचतुर योद्धाओंका वाण फेंका जाकर शीघ्र ही नियत स्थानको पहुँच जाता है।

३ जिस वसतीवरी-जलमें सोम शोधित वा मिश्रित किये जाते हैं, वह उनकी स्त्रीके तुल्य है। उसी वधूसे मिलनेके लिये सोम मेषचर्मपर क्षरित होते हैं। सत्यरूप यज्ञमें जाकर सोम अदीन पृथिवीपर उत्पन्न (अपत्य-रूप) ओषधियोंको अग्रभागमें यजमानके लिये फलयुक्त करते हैं। हरित-वर्ण, सबके यजनीय और गृहोंमें संगृहीत सोम शत्रुओंको लाँघ जाते हैं। सर्वत्र व्यापकके समान सोम शत्रु-बलको न्यून करके अपने तेजसे शोभित होते हैं।

४ वर्षक सोम शब्द करते हैं। जैसे देवताके संस्कृत स्थानपर देवी जाती हैं, वैसे ही सोमके पीछे गायें जाती हैं। सोम श्वेतवर्ण और मेषलोममय पवित्रको लाँघते हैं। सोम उज्ज्वल कवचके समान दुग्ध आदिके द्वारा अपने शरीरको ढकते हैं।

अमृक्तेन रुशता वाससा हरिरमर्त्यो निर्णिजानः परिव्यत ।
दिवस्पृष्ठं बर्हणा निर्णिजे कृतोपस्तरणं चम्वोर्नभस्मयम् ॥५॥
सूर्यस्येव रश्मयो द्रावयित्नवो मत्सरासः प्रसुपः साकमीरते ।
तन्तुं ततं परि सर्गास आशवो नेन्द्रादृते पवते धाम किं चन ॥६॥
सिन्धोरिव प्रवणे निम्न आशवो वृषच्युता मदासो गातुमाशत ।
शं नो निवेशे द्विपदे चतुष्पदेऽस्मे वाजाः सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥७॥
आ नः पवस्व वसुमद्धिरण्यवदश्वावद्गोमद्यवमत् सुवीर्यम् ।
यूयं हि सोम पितरो मम स्थन दिवो मूर्धानः प्रस्थिता वयस्कृतः ॥८॥
एते सोमाः पवमानास इन्द्रं रथा इव प्र ययुः सातिमच्छ ।
सुताः पवित्रमति यन्त्यव्यं हित्वी वव्रिं हरितो वृष्टिमच्छ ॥९॥

---

५ अमर और हरित-वर्ण सोम जलसे शोधित होते समय स्वयं शुभ्र पयो-वस्त्रसे चारो ओर आच्छादित होते हैं। सोमने द्युलोककी पीठपर रहनेवाले सूर्यको, पाप-नाशक शोधनके लिये, द्युलोकमें स्थापित किया। सबके शोधनके लिये द्यावापृथिवीके ऊपर आदित्यके तेजको स्थापित किया।

६ सुवीर्य आदित्यकी सर्व-व्यापक किरणोंके समान सर्वत्र बहनेवाले, मदकर, शत्रु-घातक चमसोंमें व्याप्त और बनाये जानेवाले सोम सूतोंसे बने विस्तृत वस्त्रोंके साथ चारो ओर जाते हैं। वह इन्द्रको छोड़कर अन्य देवके लिये नहीं क्षरित होते।

७ ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत और मदकर सोम स्तुत्य इन्द्रको उसी तरह प्राप्त करते हैं, जिस तरह नदियाँ समुद्रको जाती हैं। सोम हमारे गृहमें पुत्रादि और गवादिको सुख दो। सोम, हमें अन्न और पुत्रादि दो।

८ सोम, हमें वसु, हिरण्य, अश्व, गौ, जौ और शोभन वीर्यसे युक्त धन दो। सोम, तुम मेरे पितरोंके भी पिता हो; इसलिये तुम मेरे द्युलोकके उन्नत प्रदेश (स्वर्गादि) पर स्थित कर्म-निष्ठ और हवीरूप अन्नके कर्त्ता पितर हो।

९ जैसे इन्द्रके रथ संग्राममें जाते हैं, वैसे ही हमारे शोधित सोम आश्रय-स्थल इन्द्रकी ओर जाते हैं। पत्थरोंसे अभिषुत सोम मेषलोममय पवित्रको लाँघते हैं और हरित-वर्ण सोम बुढ़ापेको मारकर (तरुण होकर) वृष्टिको भेजनेको (बरसनेको) जाते हैं।

इन्द्‌विन्द्राय बृहते पवस्व सुमृळीको अनवद्यो रिशादाः ।
भरा चन्द्राणि गृणते वसूनि देवैर्द्यावापृथिवी प्रावतन्नः ॥१०॥

## ७० सूक्त

पवमान सोम देवता । विश्वामित्रगोत्रज रेणु ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

त्रिरस्मै सप्तधेनवो दुदुह्रे सत्यामाशिरं पूर्व्ये व्योमनि ।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यदृतैरवर्धत ॥१॥
स भिक्षमाणो अमृतस्य चारुण उभे द्यावा काव्येनावि शश्रथे ।
तेजिष्ठा अपो मंहना परिव्यत यदी देवस्य श्रवसा सदो विदुः ॥२॥
ते अस्य सन्तु केतवोऽमृत्यवोऽदाभ्यासो जनुषी उभे अनु ।
येभिर्नृम्णा च देव्या च पुनत आदिद्राजानं मनना अगृभ्णत ॥३॥

---

१० सोम, तुम महान् इन्द्रके लिये क्षरित होओ। तुम इन्द्रको सुख देनेवाले, अनिन्द्य और शत्रुओंको हरानेवाले हो । मुझ स्तोताको आह्लादक धन दो । द्यावापृथिवी, उत्तम धनोंसे हमारी रक्षा करो ।

---

१ प्राचीन यज्ञमें स्थित सोमके लिये इक्कीस गायें क्षीर दुहती हैं (उत्पन्न करती हैं)। जब यज्ञोंके द्वारा सोम वर्द्धित किये गये, तब उन्होंने चार सुन्दर जलों (वसतीवरी आदि) को परिशोधनके लिये बनाया ।

२ यज्ञकर्त्ता यजमानोंके द्वारा सुन्दर जल माँगनेपर सोमने द्यावापृथिवीको जलसे पूर्ण किया । सोम अपनी महिमासे अतीव दीप्त जलको ढकते हैं । हविर्युक्त होकर ऋत्विक् लोग प्रकाशमान सोमके स्थानको जानते हैं ।

३ सोमकी प्रज्ञापक, अमर और अहिंसनीय किरणें स्थावर-जङ्गमकी रक्षा करें । उन्हीं किरणोंके द्वारा सोम बल और देव-योग्य अन्न देते हैं । अभिषवके अनन्तर ही राजा सोमको मननीय स्तुतियाँ प्राप्त करती हैं ।

स मृज्यमानो दशभिः सुकर्मभिः प्र मध्यमासु मातृषु प्रमे सचा ।
व्रतानि पानो अमृतस्य चारुण उभे नृचक्षा अनु पश्यते विशौ ॥४॥
स मर्मृजान इन्द्रियाय धायस ओभे अन्ता रोदसी हर्षते हितः ।
वृषा शुष्मेण बाधते वि दुर्मतीरादेदिशानः शर्यहेव शुरुधः ॥५॥
स मातरा न ददृशान उस्रियो नानददेति मरुतामिव स्वनः ।
जानन्नृतं प्रथमं यत् स्वर्णरं प्रशस्तये कमवृणीत सुक्रतुः ॥६॥
रुवति भीमो वृषभस्तविष्यया शृङ्गे शिशानो हरिणी विचक्षणः ।
आ योनिं सोमः सुकृतन्नि षीदति गव्ययी त्वग्भवति निर्णिगव्ययी ॥७॥
शुचिः पुनानस्तन्वमरेपसमव्ये हरिर्न्यधाविष्ट सानवि ।
जुष्टो मित्राय वरुणाय वायवे त्रिधातु मधु क्रियते सुकर्मभिः ॥८॥

---

४ शोभन कर्मवाली दस अँगुलियोंसे शोधित होकर सोम लोकोंके निरीक्षणके लिये अन्तरीक्षस्थ मध्यमा वाग्में रहते हैं। मनुष्यदर्शक और क्षरणशील सोम सुन्दर जलके बरसनेके लिये, यज्ञादिकी रक्षा करते हुए, अन्तरीक्षसे मनुष्यों और देवोंको देखते हैं।

५ इन्द्रके बलके लिये पवित्र द्वारा शोधित और द्यावापृथिवीके बीचमें वर्त्तमान सोम चारो ओर जाते हैं। जैसे वीर शत्रुओंको बाणोंसे मारता है, वैसे ही सोम दुःखद असुरोंको बार बार ललकारते हुए शोषक बलसे दुर्बुद्धि असुरोंको मारते हैं।

६ मातृ-भूत द्यावापृथिवीको बार-बार देखते हुए और शब्द करते हुए सोम उसी प्रकार सर्वत्र जाते हैं, जिस प्रकार बछड़ा गायको देखकर शब्द करते हुए जाता है और मरुद्गण शब्द करते हुए जाते हैं। जो जल मनुष्योंका कल्याणकारक है, उस मुख्य जलको जानते हुए शोभनकर्मा और क्षरणशील सोम, अपने स्तोत्रके लिये, मुझे छोड़कर, किस मनुष्यका वरण करेंगे ?

७ शत्रुओंके लिये भयङ्कर, जल-वर्षक, सबके दर्शक और क्षरणशील सोम अपने बलकी इच्छासे दो हरितवर्णकी सींगों ( धाराओं) को तेज करते हुए शब्द करते हैं। अनन्तर सोम अपने स्थान द्रोण-कलसमें बैठते हैं। सोमके शोधक मेषचर्म और गोचर्म हैं।

८ पात्रमें स्थित, अपने शरीरका शोधन करते हुए, पवित्र और हरितवर्ण सोम उन्नत होकर मेषलोममय दशापवित्रमें रखे जाते हैं। अनन्तर मित्र, वरुण और वायुके लिये पर्याप्त जल, दधि तथा दुग्धसे मिश्रित और मदकर सोम शोभनकर्मा ऋत्विकोंके द्वारा प्रदत्त होते हैं।

पवस्व सोम देववीतये वृषेन्द्रस्य हार्दि सोमधानमा विश।
पुरा नो बाधाद्दुरितातिपारय क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते ॥९॥
हितो न सप्तिरभि वाजमर्षेन्द्रस्येन्दो जठरमा पवस्व
नावा न सिन्धुमति पर्षि विद्वाञ्छूरो न युध्यन्नव नो निदस्पः ॥१०॥

## ७१ सूक्त

पवमान सोम देवता। विश्वामित्रगोत्रीय ऋषभ ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

आ दक्षिणा सृज्यते शुष्म्यासदं वेति द्रुहो रक्षसः पाति जागृविः।
हरिरोपशं कृणुते नभस्पय उपस्तिरे चम्वोर्ब्रह्म निर्णिजे ॥१॥
प्र कृष्टिहेव शूष एति रोरुवदसुर्यं वर्णं नि रिणीते अस्य तम्।
जहाति वव्रिं पितुरेति निष्कृतमुपप्रुतं कृणुते निर्णिजं तना ॥२॥

---

९ सोम, तुम जल-वर्षक हो। देवोंके पानके लिये क्षरित होओ। सोम, तुम इन्द्रके प्रिय-कर पात्रमें पैठो। हमें पीड़ा देनेके पहले ही दुर्गम राक्षसोंके हाथोंसे हमें बचाओ। मार्गज्ञाता पुरुष मार्ग-जिज्ञासुको जैसे मार्ग बता देता है, वैसे ही यज्ञमार्गज्ञाता तुम हमें यज्ञ-पथ बता कर रक्षा करो।

१० जैसे भेजा गया घोड़ा युद्ध-भूमिको जाता है, वैसे ही ऋत्विकोंके द्वारा प्रेरित होकर तुम द्रोण-कलसमें जाओ। अनन्तर, हे सोम, इन्द्रके जठरको सींचो। जैसे नाविक नौकाओंसे मनुष्योंको नदी पार कराते हैं, वैसे ही सब जाननेवाले तुम हमें पापोंके पार ले जाओ। शूरके समान शत्रुओंको मारते हुए निन्दक शत्रुसे हमें बचाओ।

---

१ यज्ञमें ऋत्विकोंको दक्षिणा दी जाती है। बलवान् सोम द्रोणकलसमें पैठ रहे हैं। जागरणशील सोम द्रोही राक्षसोंसे स्तोताओंको बचाते हैं। सोम आकाशको जल-धारक बनाते हैं। द्यावापृथिवीके अन्धकार-विनाशके लिये सोम सूर्यको द्युलोकमें सुदृढ़ किये हुए हैं।

२ शत्रुहन्ता योद्धाके समान बलवान् सोम शब्द करते हुए जाते हैं। सोम अपने असुर-बाधक बलको प्रकट करते हैं। सोम बुढ़ापा छोड़ रहे हैं। पीनेका द्रव्य होकर सोम संस्कृत द्रोण-कलसमें जा रहे हैं। मेषलोममय पवित्रमें अपने गतिपरायण रूपको स्थापित कर रहे हैं।

अद्रिभिः सुतः पवते गभस्त्योर्वृषायते नभसा वेपते मती ।
स मोदते नसते साधते गिरा नेनिक्ते अप्सु यजते परीमणि ॥३॥
परि द्युक्षं सहसः पर्वतावृधं मध्वः सिञ्चन्ति हर्म्यस्य सक्षणिम् ।
आ यस्मिन् गावः सुहुताद ऊधनि मूर्धञ्छ्रीणन्त्यग्रियं वरीमभिः ॥४॥
समी रथं न भुरिजोरहेषत दश स्वसारो अदितेरुपस्थ आ ।
जिगादुप ज्रयति गोरपीच्यं पदं यदस्य मतुथा अजीजनन् ॥५॥
श्येनो न योनिं सदनं धियाकृतं हिरण्ययमासदं देव एषति ।
एरिणन्ति बर्हिषि प्रियं गिराश्वो न देवाँ अप्येति यज्ञियः ॥६॥
परा व्यक्तो अरुषो दिवः कविर्वृषा त्रिपृष्ठो अनविष्ट गा अभि ।
सहस्रणीतिर्यतिः परायती रेभो न पूर्वीरुषसो वि राजति ॥७॥

---

३ पत्थरों और बाहुओंसे अभिषुत सोम पात्रोंमें जाते हैं। सोम वृषके समान आचरण करते हैं। स्तोत्रसे स्तुत होकर अन्तरीक्षमें सर्वत्र जाते हुए सोम प्रसन्न होते हैं। वह पात्रोंमें जाते हैं। स्तुत होकर वह स्तोताओंको धन देते हैं। जलसे शोधित होते हैं। देवोंको जिस यज्ञमें हवि दिया जाता है, उसमें पूजित होते हैं।

४ मदकर सोम दीप्त द्युलोकमें रहनेवाले, मेघोंके वर्द्धक और शत्रुपुरके नाशक इन्द्रको सींचते हैं। हविको भक्षण करनेवाली गायें अपने उन्नत स्तनमें स्थित दुग्धको, अपनी महिमाके द्वारा, इन्द्रको देती हैं।

५ बाहुओंकी दस अङ्गुलियाँ यज्ञ-देशमें सोमको वैसे ही भेज रही हैं, जैसे रथको भेजा जाता है। गायका दूध भी उस समय जाता है, जिस समय मननीय स्तोत्रवाले इन सोमके स्थानको बनाते हैं।

६ जैसे श्येन पक्षी अपने घोसलेको जाता है, वैसे ही प्रकाशमान और पवमान सोम अपने कर्म द्वारा निर्मित और सुवर्णमय गृहको जाते हैं। स्तोता लोग यज्ञमें प्रिय सोमकी स्तुति करते हैं। यजनीय सोम, अश्वके समान, देवोंके पास जाते हैं।

७ शोभन, क्रान्तप्रज्ञ और जलसे विशेष रूपसे सिक्त सोम पवित्रसे कलसमें जाते हैं। सोम वृषभ (मनोरथपूरक) हैं। वह तीनों सवनोंमें रहनेवाले (त्रिपृष्ठ) हैं। वह स्तुतिको लक्ष्य करके शब्द करते हैं। वह नाना पात्रोंमें आते-जाते हैं। वह अनेक उषाओंमें शब्द करते हुए सुशोभित होते हैं।

त्वेषं रूपं कृणुते वर्णो अस्य स यत्राशयत् समृता सेधति स्रिधः ।
अप्सा याति स्वधया दैव्यं जनं सं सुष्टुती नसते सं गो अग्रया ॥८॥
उक्षेव यूथा परियन्नरावीदधि त्विषीरधित सूर्यस्य ।
दिव्यः सुपर्णोऽव चक्षत क्षां सोमः परि क्रतुना पश्यते जाः ॥९॥

---

## ७२ सूक्त

पवमान सोम देवता। आङ्गिरस हरिमन्त ऋषि। जगती छन्द।

हरिं मृजन्त्यरुषो न युज्यते सं धेनुभिः कलशे सोमो अज्यते ।
उद्वाचमीरयति हिन्वते मती पुरुष्टुतस्य कतिचित् परिप्रियः ॥१॥
साकं वदन्ति बहवो मनीषिण इन्द्रस्य सोमं जठरे यदादुहुः ।
यदी मृजन्ति सुगभस्तयो नरः सनीलाभिर्दशभिः काम्य मधु ॥२॥

---

८ शत्रु-निवारक सोम-किरण अपने रूपको प्रदीप्त करती है। वह युद्ध-भूमिमें रहती है। वह युद्धमें शत्रुओंको मारती है। वह जलदाता है। वह हवीरूप अन्नके साथ देव-भक्तके पास जाती है। वह स्तुतिसे मिलती है। जिन वाक्योंसे स्तोता पशुओंसे प्रार्थना करते हैं, उनसे सोम मिलित होता है।

९ जैसे साँड़ गायोंको देखकर बोलता है, वैसे ही स्तुतियाँ सुनकर सोम शब्द करते हैं। वह सूर्य-रूपसे द्युलोकमें रहते हैं। सोम द्युलोकोत्पन्न और शोभनगमन हैं। वह पृथिवीको देखते हैं। सोम परिज्ञानसे प्रजागणको देखते हैं।

---

१ ऋत्विक् लोग हरितवर्ण सोमका शोधन करते हैं। घोड़ेके समान सोमकी योजना की जाती है। कलसमें अवस्थित सोम दूधमें मिलाये जाते हैं। जब सोम शब्द करते हैं, तब स्तोता लोग स्तुति करते हैं। अनन्तर बहु-स्तोत्रयुक्त स्तोताके प्रिय सोम धन देते हैं।

२ विद्वान् स्तोता लोग उस समय एक साथ ही मन्त्र पढ़ते हैं, जिस समय इन्द्रके जठरमें ऋत्विक् लोग सोमका दोहन करते हैं और जिस समय शोभन बाहुओंवाले कर्मनेता अभिलषणीय और मदकर सोमका, दस अङ्गुलियोंसे, अभिषव करते हैं।

अरममाणो अत्येति गा अभि सूर्यस्य प्रियं दुहितुस्तिरो रवम् ।
अन्वस्मै जोषमभरद्विनङ्गृसः सं द्वयीभिः स्वसृभिः क्षेति जामिभिः ॥३॥
नृधूतो अद्रिषुतो बर्हिषि प्रियः पतिर्गवां प्रदिव इन्दुर्ऋत्वियः ।
पुरन्धिवान्मनुषो यज्ञसाधनः शुचिर्धिया पवते सोम इन्द्र ते ॥४॥
नृबाहुभ्यां चोदितो धारया सुतोऽनुष्वधं पवते सोम इन्द्र ते ।
आप्राः क्रतून्समजैरध्वरे मतीर्वेर्न द्रुषच्चम्वोऽरासदद्धरिः ॥५॥
अंशुं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितं कविं कवयोऽपसो मनीषिणः ।
समी गावो मतयो यन्ति संयत ऋतस्य योना सदने पुनर्भुवः ॥६॥
नाभा पृथिव्या धरुणो महो दिवोऽपामूर्मौ सिन्धुष्वन्तरुक्षितः ।
इन्द्रस्य वज्रो वृषभो विभूवसुः सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥७॥

---

३ देवोंको प्रसन्न करनेके लिये कलस आदिमें जानेवाले सोम दूध आदिको लक्ष्य कर जाते हैं। उस समय सोम सूर्य-पुत्री उषाके श्रेष्ठ शब्दका तिरस्कार करते हैं। स्तोता सोमके लिये पर्याप्त स्तोत्र करता है। सोम दोनों बाहुओंसे उत्पन्न, परस्पर मिलित और इधर-उधर जानेवाली अङ्गुलियोंसे मिलते हैं।

४ पवमान गुणवाले इन्द्र, कर्मनेताओंके द्वारा शोधित, पत्थरोंसे अभिषुत, देवोंके प्रसन्नकर्त्ता, गोपति, प्राचीन, पात्रोंमें बहनेवाले, बहुकर्मवान्, मनुष्योंके यज्ञ-साधक और दशापवित्रसे शुद्ध सोम अपनी धारासे, यज्ञमें, पात्रोंमें, तुम्हारे लिये, गिरते हैं।

५ इन्द्र, कर्मकर्त्ताओंकी भुजाओंसे प्रेरित और अभिषुत सोम तुम्हारे बलके लिये आते हैं। अनन्तर, तुम सोमपान करके, कर्मोंको पूर्ण करते हो। तुम यज्ञमें शत्रुओंको भली भाँति विजित करते हो। जैसे पक्षी वृक्षपर बैठता है, वैसे ही हरितवर्ण सोम अभिषवण-फलकपर बैठते हैं।

६ क्रान्तकर्मा और मनीषी ऋत्विक् शब्द करनेवाले और क्रान्तदर्शी सोमका अभिषव करते हैं। अनन्तर पुनः उत्पत्तिशील गायें और मननीय स्तुतियाँ, एक साथ होकर, सत्यरूप यज्ञके सदन उत्तर वेदी पर इन सोमसे मिलती हैं।

७ महान् द्युलोकके धारक, पृथिवीकी नाभि—उन्नत स्थान—उत्तर वेदी—पर ऋत्विकोंके द्वारा निहित, बहनेवाले जलसङ्घके बीच सिक्त, इन्द्रके वज्रस्वरूप, कामवर्षक और व्यापक धनवाले सोम, मङ्गलके साथ, इन्द्रके मादयिता होकर मनसे, सुखके लिये, क्षरित होते हैं।

स तू पवस्व परि पार्थिवं रजः स्तोत्रे शिक्षन्नाधून्वते च सुक्रतो ।
मा नो निर्भाग्वसुनः सादनस्पृशो रयिं पिशङ्गं बहुलं वसीमहि ॥८॥
आ तू न इन्दो शतदात्वश्व्यं सहस्रदातु पशुमद्धिरण्यवत् ।
उप मास्व बृहती रेवतीरिषोऽधि स्तोत्रस्य पवमान नो गहि ॥९॥

## ७३ सूक्त

पवमान सोम देवता । आङ्गिरस पवित्र ऋषि । जगती छन्द ।

स्रक्वे द्रप्सस्य धमतः समस्वरन्नृतस्य योना समरन्त नाभयः ।
त्रीन्त्स मूर्ध्नो असुरश्चक्र आरभे सत्यस्य नावः सुकृतमपीपरन् ॥१॥
सम्यक् सम्यञ्चो महिषा अहेषत सिन्धोरूर्मावधि वेना अवीविपन् ।
मधोर्धाराभिर्जनयन्तो अर्कमित् प्रियामिन्द्रस्य तन्वमवीवृधन् ॥२॥

---

८ सुन्दर कर्मवाले सोम, पार्थिव शरीरधारी मनुष्योंके लिये, शीघ्र गिरो । तुम्हारे तीनों सवन करनेवाले स्तोताको धन आदि दो । हमारे गृहके पुत्रों और धनोंको हमसे अलग नहीं करो । हम नानाविध सुवर्ण आदि सम्पदाको प्राप्त करें ।

९ क्षरणशील सोम, हमें अनेकानेक, अश्व-सहित, हजार दानोंसे युक्त, पशु आदिसे समन्वित और सुवर्णसे संवलित धन दो । सोम हमें बहुत दूध देनेवाली गायोंसे युक्त धन दो । क्षरणशील सोम, हमारे स्तोत्रको सुननेके लिये, आओ ।

१ यज्ञके ओष्ठप्रान्त अभिषववाले सोमकी किरणें ऊपर उठती हैं । यज्ञके उत्पत्ति-स्थानमें सोमरस ऊपर उठते हैं । बलवान् सोम तीनों लोकोंको मनुष्य आदिके संचरणके योग्य बनाते हैं । सत्यभूत सोमकी, नौकाके समान, चार स्थालियाँ ( आदित्य, आग्रयण, कुक्ष्य और ध्रुव आदि चार याज्ञिक हाँड़ियाँ वा थालियाँ ) सुकृती यजमानकी, अभिमत-फलदान द्वारा, पूजा करती हैं । *

२ प्रधान ऋत्विक् आपसमें मिलकर, सोमको भली भाँति अभिषुत करते हैं । स्वर्गादि फलकी कामना करनेवाले ऋत्विक् लोग बहनेवाले जलमें सोमको भेजते हैं । पूजनीय स्तोत्र करते हुए स्तोताओंने इन्द्रके प्रिय धामको, मदकर सोमकी धाराओंसे, वर्द्धित किया ।

---

* सातवें अष्टकमें "असुर" शब्दका प्रयोग छः बार हुआ है—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ९ मण्डल | ७३ सूक्त | १ ऋचामें | असुर शब्द | सोमके लिये |
| " " | ७४ " | ७ " | " | " |
| " " | ९९ " | १ " | " | " |
| १० " | १० " | २ " | " | स्वर्गधारक देवके लिये |
| " " | ११ " | ६ " | " | पुरोहितके लिये |
| " " | २१ " | ६ " | " | यज्ञके लिये |

पवित्रवन्तः परि वाचमासते पितैषां प्रत्नो अभि रक्षति व्रतम् ।
महः समुद्रं वरुणस्तिरो दधे धीरा इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम् ॥३॥
सहस्रधारेव ते समस्वरन्दिवो नाके मधुजिह्वा असश्चतः ।
अस्य स्पशो न नि मिषन्ति भूर्णयः पदेपदे पाशिनः सन्ति सेतवः ॥४॥
पितुर्मातुरध्या ये समस्वरन्नृचा शोचन्तः सन्दहन्तो अव्रतान् ।
इन्द्रद्विष्टामप धमन्ति मायया त्वचमसिक्नीं भूमनो दिवस्परि ॥५॥
प्रत्नान्मानादध्या ये समस्वरञ्छ्लोकयन्त्रासो रभसस्य मन्तवः ।
अपानक्षासो बधिरा अहासत ऋतस्य पन्थां न तरन्ति दुष्कृतः ॥६॥
सहस्रधारे वितते पवित्र आ वाचं पुनन्ति कवयो मनीषिणः ।
रुद्रास एषामिषिरासो अद्रुहः स्पशः स्वञ्चः सुदृशो नृचक्षसः ॥७॥

---

३ शोधक शक्तिसे युक्त सोमकी किरणें माध्यमिकी वाक्के पास बैठती हैं अर्थात् अन्तरीक्षमें रहती हैं। उनके पिता सोम प्रकाशन-कर्मकी रक्षा करते हैं। अपने तेजसे आच्छादक सोम अपनी रश्मियोंसे महान् अन्तरीक्षको व्याप्त करते हैं। ऋत्विक्लोग सबके धारक जलमें सोमका प्रारम्भ कर सकते हैं।

४ सहस्र धाराओंवाले अन्तरीक्षमें वर्तमान सोमकिरणें नीचे स्थित पृथिवीको वृष्टिसे युक्त करती हैं। द्युलोकके उन्नत देशमें वर्तमान, मधु जीभवाली, परस्पर सङ्गरहित कल्याणकर किरणें शीघ्रगामी रहती हैं—कभी पलक भी नहीं गिरातीं (दुष्ट-नाशके लिये सदा जागी रहती हैं)। इस प्रकार स्थान-स्थानपर रहकर किरणें पापियोंको बाधा देती हैं।

५ सोमकी जो किरणें द्यावापृथिवीसे अधिक प्रादुर्भूत हुई हैं, वे ऋत्विकोंके द्वारा की जाती स्तुतिसे प्रदीप्त होकर और कर्म-शून्योंको भली भाँति नष्ट कर इन्द्रके लिये काले चमड़े वाले राक्षसको, ज्ञान द्वारा, विस्तृत भूलोक और द्युलोकसे दूर हटाती हैं।

६ स्तुति-नियत और क्षिप्रकारी सोमरश्मियाँ प्राचीन अन्तरीक्षसे एक साथ प्रादुर्भूत हुईं। नेत्रशून्य, असाधुदर्शी, देवस्तुति-विवर्जित और पापी नर उन रश्मियों (किरणों) का त्याग कर देते हैं। पापी मनुष्य सत्यमार्गसे नहीं तरते।

७ क्रान्तकर्मा और मनीषी ऋत्विक् लोग अनेक धाराओंवाले तथा विस्तृत पवित्रमें वर्त्तमान सोमकी माध्यमिकी वाक्की स्तुति करते हैं, जो मरुतोंकी माता (वाक्) की स्तुति करते हैं, उनके वचनका आश्रयण रुद्रपुत्र मरुत् करते हैं। वे आगमनशील, द्रोह-शून्य दूसरोंके द्वारा अहिंसनीय, शोभन-गति सुदर्शन और कर्मनेता हैं।

ऋतस्य गोपा न दभाय सुक्रतुस्त्री ष पवित्रा हृद्यन्तरादधे ।
विद्वान्त्स विश्वा भुवनाभि पश्यत्यवाजुष्टान्विध्यति कर्ते अव्रतान् ॥८॥
ऋतस्य तन्तुर्विततः पवित्र आ जिह्वया अग्रे वरुणस्य मायया ।
धीराश्चित्तत् समिनक्षन्त आशता । त्रा कर्तमव पदात्यप्रभुः ॥६॥

---

## ७४ सूक्त

पवमान सोम देवता । दीर्घतमाके पुत्र कक्षीवान् ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द

शिशुर्न जातोऽवचक्रदद्वने स्वर्यद्वाज्यरुषः सिषासति ।
दिवो रेतसा सचते पयोवृधा तमीमहे सुमती शर्म सप्रथः ॥१॥
दिवो यः स्कम्भो धरुणः स्वातत आपूर्णो अंशुः पर्येति विश्वतः ।
सेमे मही रोदसी यक्षदावृता समीचीने दाधार समिषः कविः ॥२॥

---

८ सत्यरूप यज्ञके रक्षक और शोभनकर्मा सोमसे कोई दम्भ नहीं कर सकता। सोम अग्नि, वायु और सूर्य आदिके रूप तीन पवित्रोंको अपनेमें धारण करते हैं। विद्वान् सोम सारे भुवनों को देखते हुए कर्म्म-भ्रष्टोंको नीचे मुंह करके मारते हैं।

६ सत्यभूत यज्ञके विस्तारक और मेषलोममय पवित्रमें विस्तृत सोम वरुणकी जीभके आगे (वसतीवरीमें) रहते हैं। कर्म-निष्ठ लोग ही उन सोमको प्राप्त करते हैं। कर्मशून्यके लिये यह वात असम्भव है। कर्मशून्य नरकमें जाता है।

---

१ वसतीवरी-जलमें उत्पन्न होकर सोम, शिशुके समान, नीचे मुंह करके रोते हैं। वली अश्वके समान गमनशील सोम स्वर्गलोकका आश्रय लेना चाहते हैं। गौओं और औषधियोंके रसके साथ सोम द्युलोकसे पृथिवी लोकपर आना चाहते हैं। वैसे सोमसे हम धनादि-युक्त गृह, शोभन स्तुतिके साथ, माँगते हैं।

२ द्युलोकके स्तम्भ, धारक, सर्वत्र विस्तृत और पात्रोंमें पूर्ण सोमकी किरणें चारो ओर जाती हैं। सोम महती द्यावापृथिवीको अपनी क्षमताके द्वारा योजित करें। सोमने परस्पर मिलित द्यावापृथिवीको धारण किया। क्रान्तदर्शी सोम स्तोताओंका अन्न दें।

महि प्सरः सुकृतं सोम्यं मधूर्वी गव्यूतिरदितेर्ऋतं यते।
ईशे यो वृष्टेरित उस्रियो वृषापां नेता य इत ऊतिर्ऋग्मियः ॥३॥

आत्मन्वन्नभो दुह्यते घृतं पय ऋतस्य नाभिरमृतं वि जायते।
समीचीनाः सुदानवः प्रीणन्ति तन्नरो हितमव मेहन्ति पेरवः ॥४॥

अराव्वीदंशुः सचमान ऊर्मिणा देवाव्यं मनुषे पिन्वति त्वचम्।
दधाति गर्भमदितेरुपस्थ आ येन तोकं च तनयं च धामहे ॥५॥

सहस्रधारेव ता असश्चतस्तृतीये सन्तु रजसि प्रजावतीः ।
चतस्रो नाभो निहिता अवो दिवो हविर्भरन्त्यमृतं घृतश्चुतः ॥६॥

श्वेतं रूपं कृणुते यत् सिषासति सोमो मीढ्वाँ असुरो वेद भूमनः।
धिया शमी सचते सेमभि प्रवद्दिवस्कबन्धमवदर्षदुद्रिणम् ॥७॥

---

३ यज्ञमें आनेवाले इन्द्रके लिये संस्कृत सोमरस यथेष्ट मधुर रसवाला खाद्य होता है। इन्द्रादिका पृथिवी-मार्ग भी विस्तीर्ण है। इन्द्र इस पृथिवीपर बरसनेवाली वर्षाके ईश्वर हैं। गौओंके हितैषी. जल-वर्षक और यज्ञ-नेता इन्द्र इस यज्ञमें जाते हुए स्तुत्य होते हैं।

४ सोम आकाशरूप आदित्यसे घृत और दुग्ध को दूहते हैं। सोम यज्ञकी नाभि हैं। उनसे ही अमृत और जल उत्पन्न होते हैं। सुन्दर दाता यजमान सोम परस्पर मिलकर इन सोमको प्रसन्न करते हैं। सर्व-रक्षक सोम-किरणें पृथिवीपर उपयोगी वर्षण करती हैं।

५ जलमें ऋत्विकोंके द्वारा मिलाये जानेपर सोम शब्द करते हैं। सोम अपने देव-पालक शरीरको पात्रोंमें प्रवाहित करते हैं। पृथिवीकी ओषधियोंमें सोम, अपनी किरणोंसे, गर्भ धारण करते हैं। उस गर्भसे हम दुःखविदारक पुत्र और पौत्रका धारण करते हैं।

६ अनेक धाराओंवाले, स्वर्गमें वर्त्तमान, परस्पर मिलित और प्रजावाली सोमकिरणें पृथिवीपर गिरती हैं। वे चार सोम-किरणें द्युलोकके नीचे सोमके द्वारा स्थापित हैं। वे जल-वर्षक होकर देवोंको हवि देती हैं और ओषधियोंमें अमृत देती हैं।

७ सोम पात्रोंका रूप शुभ्र कर देते हैं। काम-सेचक और बली ( असुर ) सोम स्तोताओंको बहुत धन देते हैं। सोम अपनी प्रज्ञाके द्वारा प्रकृष्ट कर्मको प्राप्त करते हैं। अन्तरीक्षके जलवान् मेघको वे, जल-वर्षणके लिये, फाड़ते हैं।

अध श्वेतं कलशं गोभिरक्तं कार्ष्मन्ना वाज्यक्रमीत् ससवान् ।
आ हिन्विरे मनसा देवयन्तः कक्षीवते शतहिमाय गोनाम् ॥८॥
अद्भिः सोम पपृचानस्य ते रसोऽव्यो वारं वि पवमान धावति ।
स मृज्यमानः कविभिर्मदिन्तमः स्वदस्वेन्द्राय पवमान पीतये ॥९॥

## ७५ सूक्त

पवमान सोम देवता । भार्गव कवि ऋषि । जगती छन्द ।

अभि प्रियाणि पवते चनोहितो नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते ।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन्नधि रथं विष्वञ्चमरुहद्विचक्षणः ॥१॥
ऋतस्य जिह्वा पवते मधु प्रियं वक्ता पतिर्धियो अस्या अदाभ्यः ।
दधाति पुत्रः पित्रोरपीच्यं नाम तृतीयमधि रोचने दिवः ॥२॥

---

८ सोम श्वेत और गोरससे युक्त द्रोणकलसको, अश्वके समान, लाँघते हैं। देवाभिलाषी ऋत्विक् लोग सोमके लिये स्तुति प्रेरित करते हैं। सोम बहुत चलनेवाले कक्षीवान् ऋषिके लिये पशु देते हैं।

९ शोधित सोम, जलमें मिश्रित होकर तुम्हारा रस मेषलोममय दशापवित्रकी ओर जाता है। मादक-श्रेष्ठ सोम, क्रान्तकर्मा ऋत्विकोंके द्वारा शोधित होकर इन्द्रके पानके लिये प्रिय रसवाले बनो।

१ अन्नके लिये सोम उपयोगी हैं। संसारके प्रिय और नमनशील जलकी चारो ओर सोम क्षरित होते हैं। जलमें महान् सोम बढ़ते हैं। महान् सोम महान् सूर्यके रथके ऊपर चढ़ गये। सोम सबके द्रष्टा हैं।

२ सत्यरूप यज्ञके प्रधान सोम प्रियकर और मदकर रस गिराते हैं। सोम शब्द करनेवाले, कर्मपालक और अबध्य हैं। द्युलोकके दीपक सोमका अभिषव होनेपर पुत्र ( यजमान ) एक ऐसा नाम धारण करता है, जिसे उसके माता-पिता नहीं जानते।

अव द्युतानः कलशाँ अचिक्रदन्नृभिर्येमानः कोश आ हिरण्यये ।
अभीमृतस्य दोहना अनूषताधि त्रिपृष्ठ उषसो वि राजति ॥३॥
अद्रिभिः सुतो मतिभिश्चनोहितः प्ररोचयन्रोदसी मातरा शुचिः ।
रोमाण्यव्या समया वि धावति मधोर्धारा पिन्वमाना दिवेदिवे ॥४॥
परि सोम प्र धन्वा स्वस्तये नृभिः पुनानो अभि वासयाशिरम् ।
ये ते मदा आहनसो विहायसस्तेभिरिन्द्रं चोदय दातवे मघम् ॥५॥

---

३ दीप्तिमान् और ऋत्विकोंके द्वारा सुवर्णमय अभिषवण-चर्मपर रखे गये सोमका, यज्ञका दोहन करनेवाले ऋत्विक् लोग, अभिषव करते हैं। सोम कलसमें शब्द करते हैं। तीन सवनोंवाले सोम यज्ञ-दिनमें प्रातःकाल शोभा पाते हैं।

४ पत्थरोंसे अभिषुत, अन्नके हितैषी और शुद्ध सोम द्यावा-पृथिवीको प्रकाशित करके मेषलोममय पवित्रकी ओर जाते हैं। जलमिश्रित और मदकर सोमकी धारा अनुदिन पवित्रपर प्रवाहित होती है।

५ सोम, कल्याणके लिये तुम चारो ओर जाओ। कर्म-निष्ठाके द्वारा शोधित होकर तुम क्षीर आदिमें मिलो। वचनवाले, शत्रु-हन्ता, अभिषुत और महान् सोम प्रशस्य धन देनेवाले इन्द्रको हमारे पास भेजें।

---

# द्वितीय अध्याय समाप्त

# तृतीय अध्याय

## ७६ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगुगोत्रीय कवि ऋषि । जगती छन्द ।

धर्ता दिवः पवते कृत्व्यो रसो दक्षो देवानामनुमाद्यो नृभिः ।
हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिर्वृथा पाजांसि कृणुते नदीष्वा ॥१॥
शूरो न धत्त आयुधा गभस्त्योः स्वः सिषासन्रथिरो गविष्टिषु ।
इन्द्रस्य शुष्ममीरयन्नपस्युभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते मनीषिभिः ॥२॥
इन्द्रस्य सोम पवमान ऊर्मिणा तविष्यमाणो जठरेष्वाविश ।
प्रणः पिन्व विद्युदभ्रेव रोदसी धिया न वाजाँ उपमासि शश्वतः ॥३॥
विश्वस्य राजा पवते स्वर्दृश ऋतस्य धीतिमृषिषालवीवशत् ।
यः सूर्यस्यासिरेण मृज्यते पिता मतीनामसमष्टकाव्यः ॥४॥

---

१ सोम सबके धारक हैं। वह अन्तरीक्ष (अन्तरीक्षस्थ दशापवित्र) से क्षरित होते हैं। सोम शोधनीय, रस-रूप देवोंके बल, वर्द्धक-ऋत्विकोंके द्वारा स्तुत्य, हरितवर्ण और प्राणियोंके द्वारा बनाये जानेवाले हैं। वसतीवरीमें घोड़ेके समान वह अपने वेगको करते हैं।

२ वीर पुरुषके समान सोम दोनों हाथोंमें अस्त्र धारण करते हैं। गायोंके खोजनेके समय स्वर्गकी इच्छा करनेवाले सोम, यजमानोंके लिये, रथवाले हुए थे। इन्द्रके बलका प्रेरण करनेवाले सोम कर्मेच्छु मेधावियोंके द्वारा भेजे जाकर दूध आदिमें मिलाये जाते हैं।

३ क्षरणशील सोम, वर्द्धिष्णु होकर इन्द्रके पेटमें प्रचुर धारासे पैठो। जैसे बिजली मेघका दोहन करती है, वैसे ही तुम अपने कर्मोंके द्वारा द्यावापृथिवीका दोहन करके हमें बहुत अन्न देते हो।

४ विश्वके राजा सोम क्षरित होते हैं। सर्वदर्शक और सत्यभूत सोम वा इन्द्रका कर्म-ऋषियोंसे भी श्रेष्ठ है। सोमने इन्द्रके कर्मकी इच्छा की। सोम सूर्यकी क्षेपक किरणोंसे शोधित होते हैं। सोमके कर्मको कवि लोग नहीं व्याप्त कर सकते। सोम हमारी स्तुतियोंके पालक हैं।

वृषेव यूथा परि कोशमर्षस्यपामुपस्थे वृषभः कनिक्रदत् ।
स इन्द्राय पवसे मत्सरिन्तमो यथा जेषामा समिथे त्वोतयः ॥५॥

## ७७ सूक्त

पवमान सोम देवता । कवि ऋषि । जगती छन्द ।

एष प्र कोशे मधुमाँ अचिक्रददिन्द्रस्य वज्रो वपुषो वपुष्टरः ।
अभीमृतस्य सुदुघा घृतश्चुतो वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः ॥१॥
स पूर्व्यः पवते यं दिवस्परि श्येनो मथायदिषितस्तिरो रजः ।
स मध्व आ युवते वेविजान इत् कृशानोरस्तुर्मनसाह बिभ्युषा ॥२॥
ते नः पूर्वास उपरास इन्दवो महे वाजाय धन्वन्तु गोमते ।
ईक्षेण्यासो अह्यो न चारवो ब्रह्मब्रह्म ये जुजुषुर्हविर्हविः ॥३॥

---

५ सोम, जैसे गोसमूहमें साँड़ जाता है, वैसे ही तुम वर्षक शब्दकर्त्ता होकर और अन्तरीक्षमें अवस्थित रहकर द्रोण—कलसमें जाते हो । मादकतम होकर तुम इन्द्रके लिये क्षरित होते हो । तुमसे रक्षित होकर हम युद्धमें विजयी होंगे ।

---

१ इन्द्रके वज्र, बीजोंके बोनेवाले और मधुर रसवाले सोम द्रोण-कलसमें शब्द करते हैं । उनकी धाराएँ फलोंको दूहनेवाली, जल वा रसको बरसानेवाली, और शब्द करनेवाली हैं । दूधवाली गायोंके समान वे जा रही हैं ।

२ प्राचीन सोम क्षरित होते हैं । अपनी माताके द्वारा भेजा जाकर श्येन पक्षी द्युलोकसे उन सोमको ले आया था । वे ही मधुर रसवाले सोम तीसरे लोकको अलग करते हैं । कृशानु नामक धनुर्धारीके वाण-पातसे डरकर सोम, उद्विग्न भावसे. मधुर रसके साथ मिश्रित होते हैं ।

३ दर्शनीय स्त्रियोंके समान रमणीय, हविका सेवन करनेवाले, प्राचीन तथा आधुनिक सोम महान् गौवाले मुझे, अन्न-लाभके लिये, प्राप्त करें ।

अयं नो विद्वान्वनवद्वनुष्यत इन्दुः सत्राचा मनसा पुरुष्टुतः ।
इनस्य यः सदने गर्भमादधे गवामुरुब्जमभ्यर्षति व्रजम् ॥४॥
चक्रिर्दिवः पवते कृत्व्यो रसो महाँ अदब्धो वरुणो हुरुग्यते ।
असावि मित्रो वृजनेषु यज्ञियोऽत्यो न यूथे वृषयुः कनिक्रदत् ॥५॥

## ७८ सूक्त

पवमान सोम देवता । कवि ऋषि । जगती छन्द ।

प्र राजा वाचं जनयन्नसिष्यददपो वसानो अभि गा इयक्षति ।
गृभ्णाति रिप्रमविरस्य तान्वा शुद्धो देवानामुप याति निष्कृतम् ॥१॥
इन्द्राय सोम परिषिच्यसे नृभिर्नृचक्षा ऊर्मिः कविरज्यसे वने ।
पूर्वीर्हि ते स्रुतयः सन्ति यातवे सहस्रमश्वा हरयश्चमूषदः ॥२॥

---

४ बहुतोंके द्वारा स्तुत, उत्तर वेदोमें वर्त्तमान और क्षरणशील सोम मनोयोगपूर्वक हमारे मारनेवाले शत्रुओंको समझकर मारें । वह ओषधियोंमें गर्भ धारण करते हैं । वे बहुत दूध देनेवाली गायोंकी ओर जाते हैं ।

५ सबके कर्त्ता, कर्मठ, रसात्मक, अहिंसनीय और वरुणके समान महान् सोम इधर-उधर विचरण करते हैं । विपत्ति आनेपर सबके मित्र और भजनीय सोम क्षरित किये जाते हैं । जैसे अश्व घोड़ियोंके झुंडमें जाता है, वैसे ही वर्षक सोम शब्द करते हुए क्षरित होते हैं ।

१ शोभायमान सोम शब्द करते हुए और जलको आच्छादित करते हुए स्तुतिकी ओर जाते हैं । सोमका जो असार भाग है, उसे मेषलोममय दशापवित्र रख लेता है । शुद्ध होकर सोम देवोंके संस्कृत स्थानको जाते हैं ।

२ सोम, तुम्हें, इन्द्रके लिये, ऋत्विक् लोग ढालते हैं । यजमानोंके द्वारा वर्द्धित होकर मेधावी तुम जलमें मिलाये जाते हो । तुम्हें गिरनेके लिये अनेक मार्ग (छिद्र) हैं । प्रस्तर-फलकोंपर अवस्थित तुम्हारी असङ्ख्य और हरित-वर्ण किरणें हैं ।

समुद्रिया अप्सरसो मनीषिणमासीना अन्तरभि सोममक्षरन् ।
ता ईं हिन्वन्ति हर्म्यस्य सक्षणिं याचन्ते सुम्नं पवमानमक्षितम् ॥३॥
गोजिन्नः सोमो रथजिद्धिरण्यजित् स्वर्जिदब्जित् पवते सहस्रजित् ।
यं देवासश्चक्रिरे पीतये मदं स्वादिष्ठं द्रप्समरुणं मयोभुवम् ॥४॥
एतानि सोम पवमानो अस्मयुः सत्यानि कृण्वन्द्रविणान्यर्षसि ।
जहि शत्रुमन्तिके दूरके च य उर्वीं गव्यूतिमभयं च नस्कृधि ॥५॥

## ७६ सूक्त

पवमान सोम देवता। कवि ऋषि। जगती छन्द।

अचोदसो नो धन्वन्त्विन्दवः प्र सुवानासो बृहद्दिवेषु हरयः
वि च नशन्न इषो अरातयोऽर्यो नशन्त सनिषन्त नो धियः ॥१॥
प्र णो धन्वन्त्विन्दवो मदच्युतो धना वा येभिरर्वतो जुनीमसि ।
तिरो मर्त्तस्य कस्यचित् परिह्वृतिं वयं धनानि विश्वधा भरेमहि ॥२॥

---

३ अन्तरीक्ष-स्थित अप्सराएँ यज्ञके बीचमें बैठकर पात्रोंमें स्थित मेधावी सोमको क्षरित करती हैं। इन क्षरणशील और कोठेके समान सुखकर यज्ञ-गृहको चेतनशील करनेवाले सोमको अप्सराएँ बढ़ाती हैं। स्तोता लोग सोमसे ह्रासहीन सुख माँगते हैं।

४ क्षरणशील सोम गायों, रथ, सुवर्ण, सुख, जल और अपरिमित धनके जेता हैं। मदकर, स्वादुतम, रसात्मक, अरुणवर्ण और सुखकर्त्ता सोमको, पानके लिये, देवोंने बनाया है।

५ सोम, तुम पूर्वोक्त समस्त वस्तुओंको हमारे लिये यथार्थ करते हो। शोधित होकर क्षरित होते हो. जो शत्रु दूर वा समीप है, उसे मारो और विस्तीर्ण मार्गको हमारे लिये अभय करो।

१ प्रभूतदीप्ति यज्ञमें सोम स्वयं हमारे पास आवें। सोम क्षरणशील और हरित-वर्ण हैं। हमारे अन्नके नाशक नष्ट हो जायँ। शत्रु भी नष्ट हो जायँ। हमारे कर्मोंको देवता लोग ग्रहण करें।

२ मद-स्रावी सोम हमारे पास आवें। धन भी आवे। सोमकी कृपासे हम बलवान् शत्रुओंका भी सामना कर सकें। किसी भी प्रबल मनुष्यकी बाधाको तिरस्कार करके हम सदा धन प्राप्त करें।

उत स्वस्या अरात्या अरिर्हि ष उतान्यस्या अरात्या वृको हि षः ।
धन्वन्न तृष्णा समरीत ताँ अभि सोम जहि पवमान दुराध्यः ॥३॥
दिवि ते नाभा परमो य आददे पृथिव्यास्ते रुरुहुः सानवि क्षिपः ।
अद्रयस्त्वा वप्सति गोरधित्वच्यप्सु त्वा हस्तैर्दुदुहुर्मनीषिणः ॥४॥
एवा त इन्दो सुभ्वं सुपेशसं रसं तुञ्जन्ति प्रथमा अभिश्रियः ।
निदंनिदं पवमान नि तारिष आविस्ते शुष्मो भवतु प्रियो मदः ॥५॥

## ८० सूक्त

पवमान सोम देवता । भरद्वाजगोत्रीय वसुनामा ऋषि । जगती छन्द ।

सोमस्य धारा पवते नृचक्षस ऋतेन देवान् हवते दिवस्परि ।
बृहस्पते रवथेना वि दिद्युते समुद्रासो न सवनानि विव्यचुः ॥१॥

---

३ सोम अपने और हमारे शत्रुओंके हिंसक हैं । जैसे मरुभूमिमें पिपासा लगी रहती है, वैसे ही तुम भी उक्त दोनों प्रकारके शत्रुओंके पीछे लगे रहते हो । क्षरणशील सोम, उन्हें नष्ट करो ।

४ सोम, तुम्हारा परम अंश द्युलोकमें है । वहाँसे तुम्हारे अंश पृथिवीके उन्नत प्रदेश ( पर्वत ) पर गिरे और वहाँ वृक्ष हो गये । पत्थरोंसे कूटे जाकर तुम्हें मेधावी लोग हाथोंसे गोचर्मपर, जलमें, दूहते हैं ।

५ सोम, प्रधान-प्रधान पुरोहित लोग तुम्हारे सुन्दर और सुरूप रसको चलाते हैं । सोम, हमारे निन्दक शत्रुको नष्ट करो । अपना बलकर, प्रियकर और मदकर रस प्रकट करो ।

१ यजमानोंके दर्शक और अभिषुत सोमकी धारा क्षरित होती है । सोम यज्ञके द्वारा देवोंका पूजन करते हैं । आकाशवासी बृहस्पति अथवा स्तोताके शब्द वा मन्त्रसे वह चमकते हैं । समुद्रके समान पृथिवीको सवन व्याप्त करते हैं ।

---

* सायणचार्यका मत है कि, इस समय काले हरिणके चमड़ेपर ही अभिषव होता है, गोचर्मपर नहीं । परन्तु खरीदते समय गोचर्मपर भी सोमको तौला जाता है । इसलिये लोग गोचर्मको ही अभिषवण-चर्म कहा करते हैं । फलतः गोचर्मका ही अभिषवण-चर्म बनाना आवश्यक नहीं ।

यं त्वा वाजिन्नघ्न्या अभ्यनूषतायोहतं योनिमा रोहसि द्युमान् ।
मघोनामायुः प्रतिरन्महि श्रव इन्द्राय सोम पवसे वृषा मदः ॥२॥
एन्द्रस्य कुक्षा पवते मदिन्तम ऊर्जं वसानः श्रवसे सुमङ्गलः ।
प्रत्यङ् स विश्वा भुवनाभि पप्रथे क्रीलन् हरिरत्यः स्यन्दते वृषा ॥३॥
तं त्वा देवेभ्यो मधुमत्तमं नरः सहस्रधारं दुहते दशक्षिपः ।
नृभिः सोम प्रच्युतो ग्रावभिः सुतो विश्वान्देवाँ आपवस्वा सहस्रजित् ॥४॥
तं त्वा हस्तिनो मधुमन्तमद्रिभिर्दुहन्त्यप्सु वृषभं दशक्षिपः ।
इन्द्रं सोम मादयन्दैव्यं जनं सिन्धोरिवोर्मिः पवमानो अर्षसि ॥५॥

## ८१ सूक्त

पवमान सोम देवता । भरद्वाज वसुनामा ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र सोमस्य पवमानस्योर्मय इन्द्रस्य यन्ति जठरं सुपेशसः ।
दध्ना यदीमुन्नीता यशसा गवां दानाय शूरमदमन्दिषुः सुताः ॥१॥

---

२ अन्नवाले सोम, न मारने योग्य स्तुति वाक्य तुम्हारी स्तुति करते हैं। सोनेकी भुजासे संस्कृत स्थानको दीप्त होकर तुम जाते हो। सोम, हविवाले यजमानोंकी आयु और महती कीर्त्तिको तुम बढ़ाते हुए, इन्द्रके लिये, क्षरित होते हो। तुम वर्षक और मदकर हो।

३ यजमानकी अन्न-प्राप्तिके लिये सोम इन्द्रके पेटमें गिरते हैं। अत्यन्त मदकर, बलकर रसवाले और सुमङ्गल सोम सारे भूतोंको विस्तारित करते हैं। यज्ञवेदीपर क्रीड़ा करनेवाले, हरितवर्ण, गतिशील और वर्षक सोम गिर रहे हैं।

४ मनुष्य और उनकी दसो अँगुलियाँ इन्द्रादिके लिये अतिशय मधुर और बहुधाराओंवाले सोमको दूहती हैं। सोम, मनुष्योंके द्वारा निचोड़े गये और पत्थरोंसे अभिषुत तुम अपरिमित धनके जेता होकर देवोंके लिये प्रवाहित होओ।

५ सुन्दर हाथोंवाले व्यक्तिकी दसो अँगुलियाँ पत्थरोंसे जलमें मधुर रसवाले और कामनाओंके वर्षक सोमको दूहती हैं। सोम, इन्द्रको मत्त करके समुद्र-तरङ्गके समान क्षरित होकर अन्य देव-संघको जाते हो।

---

१ शोधित सोमकी सुरूप तरङ्गें उस समय इन्द्रके पेटमें जाती हैं, जिस समय अभिषुत सोम गायके दधिमें मिलाये जाकर यजमानका मनोरथ पूर्ण करनेके लिये शूर इन्द्रको प्रमत्त करते हैं।

अच्छा हि सोमः कलशाँ असिष्यदद्त्यो न वोह्ला रघुवर्तनिर्वृषा ।
अथा देवानामुभयस्य जन्मनो विद्वाँ अश्नोत्यमुत इतश्च यत् ॥२॥
आ नः सोम पवमानः किरा वस्विन्दो भव मघवा राधसो महः ।
शिक्षा वयोधो वसवे सु चेतुना मा नो गयमारे अस्मत् परासिचः ॥३॥
आ नः पूषा पवमानः सुरातयो मित्रो गच्छन्तु वरुणः सजोषसः ।
बृहस्पतिर्मरुतो वायुरश्विना त्वष्टा सविता सुयमा सरस्वती ॥४॥
उभे द्यावापृथिवी विश्वमिन्वे अर्यमा देवो अदितिर्विधाता ।
भगो नृशंस उर्वन्तरिक्षं विश्वेदेवाः पवमानं जुषन्त ॥५॥

## ८२ सूक्त

पवमान सोम देवता । वसुनामा ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारं पर्येत्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदम् ॥१॥

---

२ जैसे रथवाहक अश्व वेगसे जाता है, वैसे ही सोम कलसमें जाते हैं । काम—वर्षक और द्युलोक तथा पृथिवीमें उत्पन्न लोगोंको जाननेवाले सोम देवोंके प्रसन्नता-कारक हैं ।

३ सोम, शोधित सोम, तुम हमें गवादिरूप धन दो । दीप्त सोम, तुम धनी हो । महान् धनके दाता होओ । अन्न-धारक सोम, मैं तुम्हारा सेवक हूँ । कष्ट करके मेरे लिये कल्याण दो । हमें दिये जानेवाले धनको हमसे दूर मत करो ।

४ सुन्दर दाता पूषा, पवमान सोम, मित्र, वरुण, बृहस्पति, मरुत् वायु, अश्विद्वय, त्वष्टा, सविता और सुरूपिणी सरस्वती आदि देवता, एक साथ, हमारे यज्ञमें पधारें ।

५ सर्व-व्यापिनी द्यावापृथिवी, अर्यमा, अदिति, विधाता, मनुष्योंके प्रशस्य भग, विशाल अन्तरीक्ष और विश्वदेव आदि क्षरणशील सोमका आश्रय करें ।

१ शोभन, वर्षक और हरित-वर्ण सोमका अभिषव किया गया । वह राजाके समान दर्शनीय होकर और जलको लक्ष्यकर, रस निचोड़नेके समय, शब्द करते हैं । अनन्तर शोधित होकर सोम उसी प्रकार ( मेषलोममय ) दशापवित्रकी ओर जाते हैं, जिस प्रकार अपने स्थानको बाज पक्षी जाता है । सोम जलीय स्थानके लिये क्षरित होते हैं ।

कविर्वेधस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टो अभि वाजमर्षसि ।
अपसेधन्दुरिता सोम मृलय घृतं वसानः परियासि निर्णिजम् ॥२॥
पर्जन्यः पिता महिषस्य पर्णिनो नाभा पृथिव्या गिरिषु क्षयं दधे ।
स्वसार आपो अभि गा उतासरन्त्सं ग्रावभिर्नसते वीते अध्वरे ॥३॥
जायेव पत्यावधि शेव मंहसे पज्राया गर्भ शृणुहि ब्रवीमि ते ।
अन्तर्वाणीषु स प्र चरा सु जीवसेऽनिन्द्यो वृजने सोम जागृहि ॥४॥
यथा पूर्वेभ्यः शतसा अमृध्रः सहस्रसा पर्यया वाजमिन्दो ।
एवा पवस्व सुविताय नव्यसे तव व्रतमन्वापः सचन्ते ॥५॥

२ सोम, तुम क्रान्तकर्मा हो । यज्ञ करनेकी इच्छासे तुम पूजनीय पवित्रको प्राप्त होते हो। प्रक्षालित होकर, अश्वके समान, तुम युद्धकी ओर जाते हो । सोम, हमारे पापोंका विनाश करके हमें सुखी करो। जलमें मिश्रित होकर तुम पवित्रकी ओर जाते हो ।

३ विशाल पत्तोंवाले जिन सोमके पिता मेघ हैं, वे सोम पृथिवीकी नाभि (यज्ञ) में, पत्थरपर, निवास करते हैं। अङ्गुलियाँ, जलके पास, दुग्ध आदि ले जाती हैं। रमणीय यज्ञमें सोम पत्थरसे मिलते हैं।

४ पृथिवीके पुत्र सोम, तुम्हारी जो स्तुति मैं करता हूँ, उसे सुनो। जैसे स्त्री पुरुषको सुख प्रदान करती है, वैसे ही तुम भी यजमानको सुख देते हो। हमारी स्तुतिमें विचरण करो। हमारे जीवनके लिये तुम जी रहे हो। सोम, तुम स्तुत्य हो। हमारे शत्रु-बलके लिये बराबर सावधान रहना।

५ सोम, जैसे तुम प्राचीन स्तोताओंके लिये शत-सहस्र-सङ्ख्यक धनके दाता हुए थे, वैसे ही इस समय भी अभिनव अभ्युदयके लिये क्षरित होओ। तुम्हारे कर्मको करनेके लिये तुमसे जल मिलता है।

# ८३ सूक्त

पवमान सोम देवता। अङ्गिरोगोत्रीय पवित्र ऋषि। जगती छन्द।

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः।

अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद्वहन्तस्तत् समाशत ॥१॥

तपोष्पवित्रं विततं दिवस्पदे शोचन्तो अस्य तन्तवो व्यस्थिरन्।

अवन्त्यस्य पवीतारमाशवो दिवस्पृष्ठमधितिष्ठन्ति चेतसा ॥२॥

अरूरुचदुषसः पृश्निरग्रिय उक्षा बिभर्ति भुवनानि वाजयुः।

मायाविनो ममिरे अस्य मायया नृचक्षसः पितरो गर्भमादधुः ॥३॥

गन्धर्व इत्था पदमस्य रक्षति पाति देवानां जनिमान्यद्भुतः।

गृभ्णाति रिपुं निधया निधापतिः सुकृत्तमा मधुनो भक्षमाशत ॥४॥

---

१ मन्त्रोंके स्वामी सोम, तुम्हारा शोधक अङ्ग (वा तेज) सर्वत्र विस्तृत हुआ है। तुम्हारा जो पान करता है, उसके सारे अङ्गोंमें, प्रभु होकर, तुम विस्तृत हो जाते हो। व्रत आदिसे जिसका शरीर तपाया हुआ और परिपक्व नहीं है, वह तुम्हारे सर्वत्र विस्तृत शोधक अङ्गको नहीं ग्रहण वा धारण कर सकता। जिनका शरीर परिपक्व है और जो यज्ञ-कर्त्ता हैं, वही तुम्हारे शोधक अङ्गको धारण कर सकते हैं।

२ शत्रु-तापक सोमका शोधक अङ्ग (वा तेज) द्युलोकके उन्नत स्थानमें विस्तृत है। सोमकी प्रदीप्त किरणें नाना प्रकारसे रहती हैं। पृथिवीपर सोमका शीघ्रगामी रस पवित्र यजमानकी रक्षा करता है। अनन्तर वह स्वर्गके उन्नत प्रदेशमें, देव-गमनेच्छावाली बुद्धिसे, आश्रित होता है।

३ मुख्य और सूर्यात्मक सोम दीप्ति पाते हैं। सोम अभिषेक करनेवाले हैं। सोम जलके द्वारा प्राणियोंको अन्न देते हैं। ज्ञानी सोमकी प्रज्ञासे अग्नि आदि संसारको बनाते हैं। सोमकी प्रज्ञासे मनुष्य-दर्शक देवोंने ओषधियोंमें गर्भ धारण किया।

४ जलधारक आदित्य सोमके स्थानकी रक्षा करते हैं। सोम देवोंके जन्मोंकी रक्षा करते हैं। महान् सोम हमारे शत्रुको पाशमें बाँधते हैं। सोम पशुओंके स्वामी हैं। पुण्यकर्त्ता ही इनके मधुर रसको ग्रहण कर सकते हैं।

हविर्हविष्मो महि सद्म दैव्यं नभो वसानः परियास्यध्वरम् ।
राजा पवित्ररथो वाजमारुहः सहस्रभृष्टिर्जयसि श्रवो बृहत् ॥५॥

## ८४ सूक्त

पवमान सोम देवता। वाक्पुत्र प्रजापति ऋषि। जगती छन्द।

पवस्व देवमादनो विचर्षणिरप्सा इन्द्राय वरुणाय वायवे ।
कृधी नो अद्य वरिवः स्वस्तिमदुरुक्षितौ गृणीहि दैव्यं जनम् ॥१॥
आ यस्तथौ भुवनान्यमर्त्यो विश्वानि सोमः परि तान्यर्षति ।
कृण्वन्त्सञ्चृतं विचृतमभिष्टय इन्दुः सिषक्त्युषसं न सूर्यः ॥२॥
आ यो गोभिः सृज्यत ओषधीष्वा देवानां सुम्न इषयन्नुपावसुः ।
आ विद्युता पवते धारया सुत इन्द्रं सोमो मादयन्दैव्यं जनम् ॥३॥
एष स्य सोमः पवते सहस्रजिद्धिन्वानो वाचमिषिरामुषर्बुधम् ।
इन्दुः समुद्रमुदियर्ति वायुभिरेन्द्रस्य हार्दि कलशेषु सीदति ॥४॥

---

५ जलवान् सोम, जलमें मिलकर महान् और दिव्य यज्ञगृहकी रक्षा करते हो। सोम, तुम राजा हो। पवित्र रथवाले होकर तुम युद्धमें जाते हो। असीम-गमन, तुम महान् अन्नको जीतते हो।

१ सोम, तुम देवोंके मदकर, सूक्ष्मदर्शक और जलदाता हो। इन्द्र, वरुण और वायुके लिये क्षरित होओ। हमें अविनाशी धन दो। विस्तृत पृथिवीपर मुझे देवोंका भक्त कहो।

२ जो सोम सारे भुवनोंमें व्याप्त हैं, वे उन लोकोंकी चारो ओरसे रक्षा करते हैं। सोम यज्ञको फल-समन्वित और असुरोंसे मुक्त करके यज्ञका वैसे ही आश्रय करते हैं, जैसे सूर्य संसारको प्रकाशवान् और तमोमुक्त करके उसीका सेवन करते हैं।

३ देवोंके सुखके लिये रश्मियोंसे ओषधियोंमें सोमको स्थापित किया जाता है। सोम देशाभिलाषी, शत्रु-धन-जेता और देव-संघ तथा इन्द्रको प्रमत्त करनेवाले हैं। अभिषुत होकर सोम प्रदीप्त धारासे बहते हैं।

४ गमनशील, प्रतिगामी और प्रातःकाल-कृत स्तोत्रको प्रेरित करते हुए सहस्रजित् सोम क्षरित होते हैं। वायु-प्रेरित सोम क्षरणशील रसको ऊपर उठाते हैं।

अभि त्यं गावः पयसा पयोवृधं सोमं श्रीणन्ति मतिभिः स्वर्विदम् ।
धनञ्जयः पवते कृत्व्यो रसो विप्रः कविः काव्येना स्वर्चनाः ॥५॥

## ८५ सूक्त

पवमान सोम देवता। भार्गव वेन ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

इन्द्राय सोम सुषुतः परिस्रवापामीवा भवतु रक्षसा सह ।
मा ते रसस्य मत्सत द्वयाविनो द्रविणस्वन्त इह सन्त्विन्दवः ॥१॥
अस्मान्त्समर्ये पवमान चोदय दक्षो देवानामसि हि प्रियो मदः ।
जहि शत्रूँरभ्या भन्दनायतः पिबेन्द्र सोममव नो मृधो जहि ॥२॥
अदब्ध इन्दो पवसे मदिन्तम आत्मेन्द्रस्य भवसि धासिरुत्तमः ।
अभिस्वरन्ति बहवो मनीषिणो राजानमस्य भुवनस्य निंसते ॥३॥

५ दुग्ध-वर्द्धक सोमको गायें अपने दूधसे सिक्त करनेको खड़ी हैं। सोम, स्तुतियोंके द्वारा सब कुछ देते हैं। कर्मठ, रसरूप, मेधावी, क्रान्तप्रज्ञ, अन्नवाले और शत्रु-धन-जेता सोम कर्मके द्वारा क्षरित होते हैं।

---

१ सोम, भली भाँति अभिषुत होकर तुम इन्द्रके लिये चारो ओर जाओ और रस गिराओ। राक्षसके साथ रोग दूर हो। तुम्हारे रसको पीकर पापी लोग प्रमत्त वा आनन्दित न होने पावें। इस यज्ञमें तुम्हारा रस धनसे युक्त हो।

२ क्षरणशील सोम, हमें समरभूमिमें भेजो । तुम निपुण हो । तुम देवोंके प्रियकर मादक हो। हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। शत्रुओंको मारो। हमारे लिये आओ । इन्द्र, हमारे शत्रुओंका विनष्ट करो ।

३ क्षरणशील सोम, अहिंसित और मादकतम होकर तुम क्षरित होते हो । तुम स्वयं उत्तम होकर इन्द्रके अन्न हो । इस विश्वके राजा सोमका स्तोता लोग स्तोत्र करते और सोमके पास जाते हैं।

सहस्रणीथः शतधारो अद्भुत इन्द्रायेन्दुः पवते काम्यं मधु ।
जयन् क्षेत्रमभ्यर्षा जयन्नप उरुं नो गातुं कृणु सोम मीढ्वः ॥४॥
कनिक्रदत् कलशे गोभिरज्यसे व्यव्ययं समया वारमर्षसि ।
मर्मृज्यमानो अत्यो न सानसिरिन्द्रस्य सोम जठरे समक्षरः ॥५॥
स्वादुः पवस्व दिव्याय जन्मने स्वादुरिन्द्राय सुहवीतुनाम्ने ।
स्वादुर्मित्राय वरुणाय वायवे बृहस्पतये मधुमाँ अदाभ्यः ॥६॥
अत्यं मृजन्ति कलशे दशक्षिपः प्र विप्राणां मतयो वाच ईरते ।
पवमाना अभ्यर्षन्ति सुष्टुतिमेन्द्रं विशन्ति मदिरास इन्दवः ॥७॥
पवमानो अभ्यर्षा सुवीर्यमुर्वीं गव्यूतिं महि शर्म सप्रथः ।
माकिर्नो अस्य परिषूतिरीसतेन्दो जयेम त्वया धनन्धनम् ॥८॥
अधि द्यामस्थाद्वृषभो विचक्षणोऽरूरुचद्वि दिवो रोचना कविः ।
राजा पवित्रमत्येति रोरुवद्दिवः पीयूषं दुहते नृचक्षसः ॥९॥

---

४ सहस्र-विध-नेत्र, असीम धाराओंसे युक्त, आश्चर्यंकर और महान् सोम इन्द्रके लिये अभिलषित मधुको क्षरित करते हैं। सोम, तुम हमारे लिये क्षेत्र और जलको जीतकर पवित्रकी ओर जाओ। सोम, तुम सेचक हो। हमारा मार्ग विस्तृत करो।

५ सोम, शब्द करते हुए और कलसमें वर्त्तमान तुम गोदुग्धमें मिश्रित किये जाते हो। मेष-लोममय दशापवित्रके पास जाते हो। सोम, तुम शोधित और अश्वके समान भजनीय होकर इन्द्रके उदरमें भली भाँति क्षरित होते हो।

६ सोम, तुम स्वादु हो। दिव्यजन्मा देवोंके लिये और शोभननामा इन्द्रके लिये क्षरित होओ। मधुमान् और अन्योंके द्वारा अहिंसनीय होकर तुम मित्र, वरुण, वायु और बृहस्पतिके लिये क्षरित होओ।

७ अध्वर्युओंकी दस अँगुलियाँ अश्वके समान गतिशील सोमको कलसमें शोधित करती हैं। विप्रोंके बीच स्तोतालोग स्तुतियाँ भेजते हैं। क्षरणशील सोम जाते हैं। शोभन स्तुतिवाले इन्द्रमें मदकर सोम प्रविष्ट होते हैं।

८ सोम, क्षरणशील तुम सुन्दर वीर्य, दो कोश, भूमिखण्ड और विशाल गृह हमें दो। हमारे कर्मोंके द्वेषियोंको स्वामी मत बनाओ। तुम्हारी कृपासे हम महान् धनको जीतें।

९ दूरदर्शी और वर्षक सोम द्युलोकमें थे। उन्होंने द्युलोकके नक्षत्र आदिको सुशोभित किया। क्रान्तप्रज्ञ और राजा सोम दशापवित्रको लाँघकर जाते हैं। शब्द करते हुए नर-दर्शक सोम द्युलोकके अमृतको गिराते हैं।

दिवो नाके मधुजिह्वा असश्चतो वेना दुहन्त्युक्षणं गिरिष्ठाम् ।
अप्सु द्रप्सं वावृधानं समुद्र आ सिन्धोरूर्मा मधुमन्तं पवित्र आ ॥१०॥
नाके सुपर्णमुपपप्तिवांसं गिरो वेनानामकृपन्त पूर्वीः ।
शिशुं रिहन्ति मतयः पनिप्नतं हिरण्ययं शकुनं क्षामणि स्थाम् ॥११॥
ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधि नाके अस्थाद्विश्वा रूपा प्रतिचक्षाणो अस्य ।
भानुः शुक्रेण शोचिषा व्यद्यौत् प्रारूरुचद्रोदसी मातरा शुचिः ॥१२॥

## ५ अनुवाक । ८६ सूक्त

पवमान सोमन देवता । १—१० तक आकृष्ट और माष, ११—२० तक सिकता और निवावरी, २१—३० तक पृश्नि और अज, ३१—४० तक आकृष्ट और माष, ४१—४५ तक अत्रि और ४६—४८ तक गृत्समद ऋषि। जगती छन्द ।

प्र त आशवः पवमान धीजवो मदा अर्षन्ति रघुजाइव त्मना ।
दिव्याः सुपर्णा मधुमन्त इन्दवो मदिन्तमासः परि कोशमासते ॥१॥

---

१० मधुर वचनवाले वेन लोग, अलग-अलग, यज्ञके दुःखहीन स्थानमें सोमाभिषव करते हैं। वे लोग सेका, उन्नत स्थानमें वर्त्तमान, जलमें वर्द्धमान और रसरूप सोमको समुद्रके समान प्रवृद्ध द्रोण-कलसमें, जल तरङ्गसे, सींचते हैं। वे मधुरस सोमको दशापवित्रमें सींचते हैं।

११ द्युलोकमें स्थित, शोभन पत्तोंवाले और गिरनेवाले सोमका, हमारी स्तुतियाँ, स्तोत्र करती हैं। शिशुके समान संस्कारके योग्य, शब्दकर्त्ता, सुवर्णमय, पक्षिवत् और हविर्द्धानमें स्थित सोमको स्तुतियाँ प्राप्त करती हैं।

१२ किरण-धारक (गन्धर्व-सूर्य) सोम सूर्यके सारे रूपोंको देखते हुए द्युलोकमें रहते हैं। सोम-स्थित सूर्य शुभ्र तेजके द्वारा चमकते हैं। प्रदीप्त सूर्य द्यावापृथिवीको शोभित करते हैं।

---

१ क्षरणशील सोम, मनोवेगके समान तुम्हारा व्यापक और मदकर रस घोड़ियोंके बछड़ोंकी तरह दौड़ रहा है। रस द्युलोकोत्पन्न है। सुन्दर पत्तोंवाला, मधुरता-युक्त, अतीव मदकर और दीप्त रस द्रोण-कलसमें जा रहा है।

प्र ते मदासो मदिरास आशवोऽसृक्षत रथ्यासो यथा पृथक् ।
धेनुर्न वत्सं पयसाभि वज्रिणमिन्द्रमिन्दवो मधुमन्त ऊर्मयः ॥२॥

अत्यो न हियानो अभि वाजमर्ष स्वर्वित् कोशं दिवो अद्रिमातरम् ।
वृषा पवित्रे अधिसानो अव्यये सोमः पुनान इन्द्रियाय धायसे ॥३॥

प्र त आश्विनीः पवमान धीजुवो दिव्या असृग्रन् पयसा धरीमणि ।
प्रान्तऋषयः स्थाविरीरसृक्षत ये त्वा मृजन्त्यृषिषाण वेधसः ॥४॥

विश्वा धामानि विश्वचक्ष ऋभ्वसः प्रभोस्ते सतः परियन्ति केतवः ।
व्यानशिः पवसे सोम धर्मभिः पतिर्विश्वस्य भुवनस्य राजसि ॥५॥

उभयतः पवमानस्य रश्मयो ध्रुवस्य सतः परि यन्ति केतवः ।
यदी पवित्रे अधि मृज्यते हरिः सत्ता नि योना कलशेषु सीदति ॥६॥

---

२ सोम, तुम्हारा मदकर और व्याप्त रस अश्वके समान बनाया जाता है। मधुर, प्रवृद्ध और क्षरणशील सोम वज्री इन्द्रकी ओर उसी प्रकार जा रहे हैं, जिस प्रकार दूधवाली गाय बछड़ेके पास जाती है।

३ सोम, तुम अश्वके समान भेजे गये संग्राममें जाओ। सर्ववेत्ता सोम, द्युलोकसे मेघ-निर्माताके पास जाओ। वर्षक सोम धारक इन्द्रके लिये मेषलोममय दशापवित्रमें शोधित होते हैं।

४ सोम, व्याप्त, मनोवेगवान्, दिव्य, शून्य पथसे गिरनेवाली और दुग्धसे युक्त तुम्हारी धाराएँ धारक द्रोण-कलसमें जाती हैं। तुम्हें बनानेवाले ऋषि लोग तुम्हें अभिषुत करते हैं। तुम्हारी धाराको कलसके बीच, ऋषि लोग, कर देते हैं।

५ सर्वद्रष्टा सोम, तुम प्रभु हो। तुम्हारी महान् किरणें सारे देव-शरीरोंको प्रकाशित करती हैं। सोम, तुम व्यापक हो। तुम धारक रसका प्रस्रवण करते हो। तुम विश्वके स्वामी होकर शोभित होते हो।

६ क्षरणशील, अविचलित और विद्यमान सोमकी प्रज्ञापक किरणें इधर-उधर जाती हैं। जब दशापवित्रमें हरितवर्ण सोम शोधित होते हैं, तब निवासशील सोम अपने स्थान (द्रोण-कलस) में बैठते हैं।

यज्ञस्य केतुः पवते स्वध्वरः सोमो देवानामुप याति निष्कृतम् ।
सहस्रधारः परि कोशमर्षति वृषा पवित्रमत्येति रोरुवत् ॥७॥
राजा समुद्रं नद्यो वि गाहतेऽपामूर्मिं सचते सिन्धुषु श्रितः ।
अध्यस्थात् सानु पवमानो अव्ययं नाभा पृथिव्या धरुणो महो दिवः ॥८॥
दिवो न सानु स्तनयन्नचिक्रदद्द्यौश्च यस्य पृथिवी च धर्मभिः ।
इन्द्रस्य सख्यं पवते विवेविदत् सोमः पुनानः कलशेषु सीदति ॥६॥
ज्योतिर्यज्ञस्य पवते मधु प्रियं पिता देवानां जनिता विभूवसुः ।
दधाति रत्नं स्वधयोरपीच्यं मदिन्तमो मत्सर इन्द्रियो रसः ॥१०॥
अभिक्रन्दन् कलशं वाज्यर्षति पतिर्दिवः शतधारो विचक्षणः ।
हरिर्मित्रस्य सदनेषु सीदति मर्मृजानोऽविभिः सिन्धुभिर्वृषा ॥११॥
अग्रे सिन्धुनां पवमानो अर्षत्यग्रे वाचो अग्रियो गोषु गच्छति ।
अग्रे वाजस्य भजते महाधनं स्वायुधः सोतृभिः पूयते वृषा ॥१२॥

७ यज्ञके प्रज्ञापक और शोभन-यज्ञ सोम क्षरित होते हैं। सोम देवोंके संस्कृत स्थानके पास जाते हैं। अमितधार होकर वह द्रोण-कलसमें जाते हैं। सेक्ता सोम शब्द करते हुए पवित्रको लाँघकर नीचे जाते हैं।

८ जैसे नदियाँ समुद्रमें जाती हैं। वैसे ही राजा सोम जलमें मिलते हैं। जलमें आश्रित होकर पवित्रमें जाते और उन्नत दशापवित्रमें रहते हैं। वह पृथिवीकी नाभि ( यज्ञ ) में रहते हैं। वह महान् द्युलोकके धारक हैं।

६ सोम द्युलोकके उन्नत स्थानको शब्दायमान कर रहे हैं। सोम अपनी धारक शक्तिसे द्यौ और पृथिवीका धारण करते हैं। सोम इन्द्रकी मैत्रीके लिये दशापवित्रमें शोधित होते और कलसमें बैठते हैं।

१० यज्ञ-प्रकाशक सोम देवोंके प्रिय और मधुर रसको प्रवाहित करते हैं। देवोंके रक्षक, सबके उत्पादक और प्रचुर धनी सोम द्यावापृथिवीके बीचमें रखे रमणीय धनको स्तोताओंको देते हैं। मादकतम सोम इन्द्रके वर्द्धक और रस-रूप हैं।

११ गतिशील, द्युलोकके स्वामी, शतधार, दूरदर्शी, हरितवर्ण और रसरूप सोम देवोंके मित्र यज्ञमें, शब्द करते हुए, कलसमें जाते हैं। सोम स्रवणशील दशापवित्रके छिद्रोंमें शोधित और वर्षक हैं।

१२ सोम स्पन्दनशील जलके आगे जाते हैं। श्रेष्ठ सोम माध्यमिकी वाक्के आगे जाते हैं। वह किरणोंमें जाते हैं। वह बल लाभके लिये युद्धका सेवन करते हैं। सुन्दर आयुधवाले और वर्षक सोम अभिषवकर्त्ताओंके द्वारा शोधित होते हैं।

अयं मतवाञ्छकुनो यथा हितोऽव्ये ससार पवमान ऊर्मिणा।
तव क्रत्वा रोदसी अन्तरा कवे शुचिर्धिया पवते सोम इन्द्र ते ॥१३॥
द्रापिं वसानो यजतो दिविस्पृशमन्तरिक्षप्रा भुवनेष्वर्पितः।
स्वर्जज्ञानो नभसाभ्यक्रमीत् प्रत्नमस्य पितरमाविवासति ॥१४॥
सो अस्य विशे महि शर्म यच्छति यो अस्य धाम प्रथमं व्यानशे।
पदं यदस्य परमे व्योमन्यतो विश्वा अभि सं याति संयतः ॥१५॥
प्रो अयासीदिन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतं सखा सख्युर्न प्र मिनाति सङ्गिरम्।
मर्यऽइव युवतिभिः समर्षति सोमः कलशे शतयाम्ना पथा ॥१६॥
प्र वो धियो मन्द्रयुवो विपन्युवः पनस्युवः संवसनेष्वक्रमुः।
सोमं मनीषा अभ्यनूषत स्तुभोऽभि धेनवः पयसेमशिश्रयुः ॥१७॥

१३ स्तोत्रवान्, शोध्यवान् और प्रेरित सोम, पक्षीके समान, रसके साथ दशापवित्रमें शीघ्र ही जाते हैं। क्रान्तप्रज्ञ इन्द्र, तुम्हारे कर्म और बुद्धिसे द्यावापृथिवीके बीचमें पूत सोम प्रवाहित होते हैं।

१४ स्वर्गस्पर्शी और तेजोरूप कवचको पहननेवाले सोम यजनीय और अन्तरीक्षके पूरक हैं। सोम जलमिश्रत होकर और नये स्वर्गको उत्पन्न करके जलके द्वारा बहते हैं। वह जलके पिता और प्राचीन इन्द्रकी परिचर्या करते हैं।

१५ सोम इन्द्रके प्रवेशके लिये महान् सुख देते हैं। सोमने इन्द्रके तेजस्वी शरीरको पहले ही प्राप्त किया था। सोमका स्थान उत्तम वेदीपर है। सोमसे तृप्त होकर इन्द्र सारे संग्रामोंमें जाते हैं।

१६ सोम इन्द्रके पेटमें जाते हैं। इन्द्र-मित्र सोम इन्द्रके आधारभूत हृदयको नहीं कष्ट देते। जैसे युवतियाँ पुरुषोंसे मिलती हैं, वैसे ही सोम जलमें मिलते हैं। सोम सौ छिद्रोंवाले मार्गसे कलसमें जाते हैं।

१७ सोम, तुम्हारा ध्यान धरनेवाले, मदकर सोम और स्तुतिकी इच्छा करनेवाले स्तोता लोग निवास-योग्य यज्ञ-गृहोंमें घूमते हैं। वशीकृतमना स्तोता लोग सोमकी स्तुति करते और गायें सोमको दूधसे सींचती हैं।

आ नः सोम संयतं पिप्युषीमिषमिन्दो पवस्व पवमानो अस्त्रिधम् ।
या नो दोहते त्रिरहन्नसश्चुषी क्षुमद्वाजवन्मधुमत् सुवीर्यम् ॥१८॥
वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सोमो अह्नः प्रतरीतोषसो दिवः ।
क्राणा सिन्धूनां कलशाँ अवीवशदिन्द्रस्य हार्द्याविशन्मनीषिभिः ॥१९॥
मनीषिभिः पवते पूर्व्यः कविर्नृभिर्यतः परि कोशाँ अचिक्रदत् ।
त्रितस्य नाम जनयन्मधु क्षरदिन्द्रस्य वायोः सख्याय कर्तवे ॥२०॥
अयं पुनान उषसो विरोचयदयं सिन्धुभ्यो अभवदु लोककृत् ।
अयं त्रिः सप्त दुदुहान आशिरं सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥२१॥
पवस्व सोम दिव्येषु धामसु सृजान इन्दो कलश पवित्र आ ।
सीदन्निन्द्रस्य जठरे कनिक्रदन्नृभिर्यतः सूर्यमारोहयो दिवि ॥२२॥
अद्रिभिः सुतः पवसे पवित्र आँ इन्दविन्द्रस्य जठरेष्वाविशन् ।
त्वं नृचक्षा अभवो विचक्षण सोम गोत्रमङ्गिरोभ्योऽवृणोरप ॥२३॥

---

१८ दीप्त सोम, हमें संगृहीत, प्रवृद्ध और ह्रास-शून्य अन्न दो । वह अन्न बेरोक-टोक तीन पवनोंमें शब्दवान्, आश्रयमाण, मधुरता-युक्त और शोभन सामर्थ्यवाला पुत्र देता है ।

१९ स्तोताओंके काम-वर्षक, दूरदर्शी, सूर्यके वर्द्धक और जल-कर्त्ता सोम कलसमें घुसनेकी इच्छा करते हैं । सोम इन्द्रके हृदयमें पैठते हैं ।

२० प्राचीन, मेधावी और पुरोहितोंके द्वारा नियमित सोम, अध्वर्युओंके द्वारा शोधित होकर कलसमें जानके लिये लिये शब्द करते हैं । इन्द्र और वायुकी मित्रताके लिये और तीनों स्थानोंमें विस्तृत यजमानके लिये जल उत्पन्न करनेवाले सोम मधुर रस चुला रहे हैं ।

२१ सोम प्रातःकालको नाना प्रकारसे शोभित करते हैं । वह वसतीवरी-जलमें समृद्ध होते हैं । सोम लोक-कर्त्ता हैं । वह इक्कीस ( गायों वा ऋत्विकों द्वारा ) दुहे जाते हैं । मदकर सोम, हृदयमें जानेके लिये भली भाँति क्षरित होते हैं ।

२२ सोम, देवोंके उदरमें गिरो । दीप्त सोम, तुम कलसमें बनाये जाते हो । सोम इन्द्रके पेटमें जाकर शब्द करते हैं । वह ऋत्विकोंके द्वारा हुत हैं । सोमने सूर्यको प्रादुर्भूत किया ।

२३ इन्द्रके उदरमें पैठनेके लिये पत्थरोंसे अभिषुत होकर तुम दशापवित्रमें क्षरित होते हो । दूरदर्शी सोम, तुम मनुष्योंके अनुग्रहसे दर्शक होते हो । सोम, अङ्गिरा लोगोंके लिये तुमने गौओंको छिपानेवाले पर्वतको अलग किया था ।

त्वां सोम पवमानं स्वाध्योऽनु विप्रासो अमदन्नवस्यवः ।
त्वां सुपर्ण आभरद्दिवस्परीन्दो विश्वाभिर्मतिभिः परिष्कृतम् ॥२४॥
अव्ये पुनानं परि वार ऊर्मिणा हरिं नवन्ते अभि सप्त धेनवः ।
अपामुपस्थे अध्यायवः कविमृतस्य योना महिषा अहेषत ॥२५॥
इन्दुः पुनानो अतिगाहते मृधो विश्वानि कृण्वन्त्सुपथानि यज्यवे ।
गाः कृण्वानो निर्णिजं हर्यतः कविरत्यो न क्रीळन् परि वारमर्षति ॥२६॥
असश्चतः शतधारा अभिश्रियो हरिं नवन्तेऽव ता उदन्युवः ।
क्षिपो मृजन्ति परि गोभिरावृतं तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥२७॥
तवेमाः प्रजा दिव्यस्य रेतसस्त्वं विश्वस्य भुवनस्य राजसि ।
अथेदं विश्वं पवमान ते वशे त्वमिन्दो प्रथमो धामधा असि ॥२८॥
त्वं समुद्रो असि विश्ववित् कवे तवेमाः पञ्च प्रदिशो विधर्मणि ।
त्वं द्यां च पृथिवीं चाति जभ्रिषे तव ज्योतींषि पवमान सूर्यः ॥२९॥

---

२४ सोम, क्षरणशील तुम्हारा, सुकर्मा और मेधावी स्तोता लोग, रक्षाभिलाषी होकर, स्तोत्र करते हैं। सभी स्तुतियोंसे अलङ्कृत तुम्हें द्युलोकसे सुन्दर पङ्खोंवाला श्येन पक्षी ले आया।

२५ प्रीतिकर सप्त गायत्री आदि छन्द मेषलोममय दशापवित्रपर तुम हरितवर्णको क्षरितकर प्राप्त करते हैं। क्रान्तकर्मा, तुम्हें अन्तरीक्षके जलमें महान् आयु लोग प्रेरित करते हैं।

२६ दीप्त सोम याज्ञिक यजमानके लिये शत्रुओंको दूरकर और सुन्दर मार्ग बनाकर कलसमें जाते हैं। सुन्दर और क्रान्तकर्मा सोम, अश्वके समान क्रीड़ा करते हुए और अपने रूपको रसमय करते हुए मेषलोममय दशापवित्रमें जाते हैं।

२७ परस्पर सङ्गत, शतधार और सोमका आश्रय करनेवाली सूर्यकी किरणें हरि (इन्द्र वा सोम) के पास जाती हैं। अङ्गुलियाँ किरणोंमें ढके और द्युलोकमें स्थित सोमका शोधन करती हैं।

२८ सोम, तुम्हारे दिव्य तेजसे सब प्राणी उत्पन्न हुए हैं। तुम सारे संसारके स्वामी हो। यह संसार तुम्हारे अधीन है। तुम मुख्य हो। तुम सबके धारक हो।

२९ सोम, तुम द्रवात्मक और संसारके ज्ञाता हो। तुम्हीं इन पांचों दिशाओं (आकाश और चार दिशाओं) के धारक हो। तुम द्युलोक और पृथिवीको धारण किये हुए हो। तुम्हारी



किरणोंको सूर्य प्रफुल्ल करते हैं।

त्वं पवित्रे रजसो विधर्मणि देवेभ्यः सोम पवमान पूयसे ।
त्वामुशिजः प्रथमा अगृभ्णत तुभ्येमा विश्वा भुवनानि येमिरे ॥३०॥
प्र रेभ एत्यति वारमव्ययं वृषा वनेष्वव चक्रदद्धरिः ।
सं धीतयो वावशाना अनूषत शिशुं रिहन्ति मतयः पनिप्नतम् ॥३१॥
स सूर्यस्य रश्मिभिः परि व्यत तन्तुं तन्वानस्त्रिवृतं यथा विदे ।
नयन्नृतस्य प्रशिषो नवीयसीः पतिर्जनीनामुप याति निष्कृतम् ॥३२॥
राजा सिन्धूनां पवते पतिर्दिव ऋतस्य याति पथिभिः कनिक्रदत् ।
सहस्रधारः परि षिच्यते हरिः पुनानो वाचं जनयन्नुपावसुः ॥३३॥
पवमान मह्यर्णो वि धावसि सूरो न चित्रो अव्ययानि पव्यया ।
गभस्तिपूतो नृभिरद्रिभिः सुतो महे वजाय धन्याय धन्वसि ॥३४॥
इषमूर्जं पवमानाभ्यर्षसि श्येनो न वंसु कलशेषु सीदसि ।
इन्द्राय मद्वा मद्यो मदः सुतो दिवो विष्टम्भ उपमो विचक्षणः ॥३५॥

---

३० सोम, तुम देवोंके लिये संसार वा रसके धारक दशापवित्रमें शोधित किये जाते हो। अभिलाषी और मुख्य पुरोहित तुम्हारा ग्रहण करते हैं। तुम्हारे लिये सारे प्राणी अपनेको अर्पित करते हैं।

३१ सोम मेषलोममय दशापवित्रमें जाते हैं। हरितवर्ण और सेचक सोम जलमें बोलते हैं। ध्यान करनेवाले और सोमकी अभिलाषा करनेवाली स्तुतियाँ शिशुके समान और शब्दवान् सोमका गुण-गान करती हैं।

३२ सूर्य-किरणोंसे सोम, तीनों सवनोंसे यज्ञ-विस्तार करते हुए, अपनेको परिवेष्टित करते हैं। सबके ज्ञाता और प्राणियोंके पति सोम संस्कृत पात्रमें जाते हैं।

३३ जल-पति और स्वर्ग-स्वामी सोम संस्कृत किये जाते हैं। वह यज्ञ-पथसे शब्द करते हुए जाते हैं। असीम धाराओंवाले सोम नेताओंके द्वारा पात्रोंमें सिञ्चित होते हैं। सोम शोधित, शब्दकर्त्ता और पास जानेवाले हैं।

३४ सोम, तुम बहुत रस भेजते हो। सूर्यके समान ही तुम पूज्य हो। मेषलोममय पात्रमें जाते हो। अनेकोंके द्वारा शोधित और ऋत्विकों तथा पत्थरोंके द्वारा अभिषुत होकर तुम विराट् संग्राम और धनके हितके लिये जाते हो।

३५ क्षरणशील सोम, तुम अन्न और बलवाले हो। जैसे श्येन (बाज) पक्षी घोसलेमें जाता है, वैसे ही तुम कलसमें जाते हो। इन्द्रके लिये मदकर और मद-कारण रस अभिषुत हुआ है। तुम, द्युलोकके स्तम्भ और दूरदर्शी हो।

सप्त स्वसारो अभि मातरः शिशुं नवं जज्ञानं जेन्यं विपश्चितम् ।
अपां गन्धर्वं दिव्यं नृचक्षसं सोमं विश्वस्य भुवनस्य राजसे ॥३६॥
ईशान इमा भुवनानि वीयसे युजान इन्दो हरितः सुपर्ण्यः ।
तास्ते क्षरन्तु मधुमद्धृतं पयस्तव व्रते सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥३७॥
त्वं नृचक्षा असि सोम विश्वतः पवमान वृषभ ता वि धावसि
स नः पवस्व वसुमद्धिरण्यवद्वयं स्याम भुवनेषु जीवसे ॥३८॥
गोवित् पवस्व वसुविद्धिरण्यविद्रेतो इन्दो भुवनेष्वर्पितः ।
त्वं सुवीरो असि सोम विश्ववित्तं त्वा विप्रा उप गिरेम आसते ॥३९॥
उन्मध्व ऊर्मिर्वनना अतिष्ठिपदपो वसानो महिषो वि गाहते ।
राजा पवित्ररथो वाजमारुहत् सहस्रभृष्टिर्जयति श्रवो बृहत् ॥४०॥
स भन्दना उदियर्ति प्रजावतीर्विश्वाः सुभरा अहर्दिवि ।
ब्रह्म प्रजावद्रयिमश्वपस्त्यं पीत इन्दविन्द्रमस्मभ्यं याचतात् ॥४१॥

---

३६ नवीन उत्पन्न, जेता, विद्वान्, जलके पिता, जलके धारक, स्वर्गोत्पन्न और नर-दर्शक सोमके पास, शिशुके समान, गङ्गा आदि सात मातृ-स्थानीया नदियाँ जाती हैं ।

३७ सोम, हरितवर्ण, सबके स्वामी और घोड़ियोंको रथमें जोतनेवाले तुम इन सारे भुवनोंमें गति-विधि करते हो। घोड़ियाँ मधुर घृत, दीप्त दुग्ध और जल ले आवें। तुम्हारे कर्ममें मनुष्य रहें।

३८ सोम, तुम सारे भुवनोंमें मनुष्योंके दर्शक हो। जलवर्षक, तुम विविध गतियोंवाले हो। गौ आदिसे युक्त, सुवर्णमय धन हमें दो। हम सब द्रव्योंसे युक्त होकर संसारमें जी सकें।

३९ सोम, तुम गौ, धन और सुवर्णको लानेवाले और जलके धारक हो। सोम, क्षरित होओ। तुम सुन्दर वीर्यवाले हो। तुम सर्वज्ञ हो। स्तोता लोग स्तोत्र द्वारा तुम्हारी उपासना करते हैं।

४० मधुर सोम-रस, अभिषव-कालमें, मननीय स्तोत्रका उत्थापन करते हैं। महान् सोम, जलमें मिलकर कलसमें जाते हैं। सोमका रथ दशापवित्र है। सोम युद्धमें जाते हैं। असीम-गति सोम हमारे लिये महान अन्नको जीतते हैं।

४१ सबके गन्ता सोम दिन-रात प्रजा और सुन्दर भरणवाली सारी स्तुतियोंको प्रेरित करते हैं। दीप्त सोम, तुम इन्द्रसे हमारे लिये प्रजासे युक्त अन्न और घर भरनेवाला धन, इन्द्र द्वारा पिये जाकर, माँगो।

सो अग्रे अह्नां हरिर्हर्यतो मदः प्र चेतयते अनु द्युभिः ।
द्वा जना यातयन्नन्तरीयते नराशंसं दैव्यं च धर्तरि ॥४२॥
अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मधुनाभ्यञ्जते ।
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमासु गृभ्णते ॥४३॥
विपश्चिते पवमानाय गायत मही न धारात्यन्धो अर्षति ॥
अहिर्न जूर्णामति सर्पति त्वचमत्यो न क्रीलन्नसरद्वृषा हरिः ॥४४॥
अग्रेगो राजाप्यस्तविष्यते विमानो अह्नां भुवनेष्वर्पितः ।
हरिर्घृतस्नुः सुदृशीको अर्णवो ज्योतीरथः पवते राय ओक्यः ॥४५॥
असर्जि स्कम्भो दिव उद्यतो मदः परि त्रिधातुर्भुवनान्यर्षति ।
अंशुं रिहन्ति मतयः पनिप्नतं गिरा यदि निर्णिजमृग्मिणो ययुः ॥४६॥

४२ हरित-वर्ण, रमणीय और मदकर सोम प्रातःकाल स्तोताओंके ज्ञान और स्तुतियोंसे जाने जाते हैं। मनुष्य और देवताके द्वारा प्रशंसित धन यजमानको देनेवाले और मर्त्य तथा स्वर्गके जीवोंको अपने कर्ममें प्रेरित करनेवाले सोम द्यावापृथिवीके बीच जाते हैं।

४३ ऋत्विक् लोग गोदुग्धमें सोमको मिलाते हैं, विविध प्रकारसे मिलाते हैं, भली भाँति मिलाते हैं। देवगण लोग बलकर्ता सोमका आस्वाद लेते हैं और सोमको मधुर गव्यमें मिलाते हैं। जिस समय रस ऊपर उठता है, उस समय सोम नीचे गिरते हैं। सोम सेचक हैं। जैसे लोग पशुको स्नानके लिये जलमें ले जाते हैं, वैसे ही सुवर्ण-भरणधारी पुरोहित लोग सोमको जलमें ले जाते हैं।

४४ ऋत्विको, मेधावी और क्षरणशील सोमके लिये गाओ। महती वर्षा धाराके समान रस-रूप अन्नको लाँघकर सोम जाते हैं। वह सर्पके समान सोम अभिषवादि कर्मके द्वारा अपने चमड़ेको छोड़ते हैं। वर्षक और हरितवर्ण सोम क्रीड़ापरायण अश्वके समान दशापवित्रसे कलसमें जाते हैं।

४५ अग्रगन्ता, शोभन और जलमें संस्कृत सोमकी स्तुति की जाती है। सोम दिनोंको मापने वाले है। सोम हरित-वर्ण, जलमिश्रित, शोभन-दर्शन, जलवान और धनप्रापक हैं। उनका रथ ज्योतिर्मय है। वह प्रवाहित होते हैं।

४६ सोम द्युलोकके धारक और स्तम्भ हैं। मादक सोम अभिषुत किये जाते हैं। वह तीन धातुओं (द्रोण-कलस, आधवनीय और पूतभृत्) वाले हैं। सोम सारे भुवनोंमें विहार करते हैं। जिस समय ऋत्विक्लोग रूपवान् सोमकी स्तुति करते हैं, उस समय शब्दायमान सोमको पुरोहित लोग चाहते हैं।

प्र ते धारा अत्यण्वानि मेष्यः पुनानस्य संयतो यन्ति रंहयः ।
यद्गोभिरिन्दो चम्वोः समज्यस आ सुवानः सोम कलशेषु सीदसि ॥४७॥
पवस्व सोम क्रतुविन्न उक्थ्योऽव्यो वारे परि धाव मधु प्रियम् ।
जहि विश्वान्रक्षस इन्दो अत्रिणो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥४८॥

## ८७ सूक्त

पवमान सोम देवता । काव्यके पुत्र उशना ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र तु द्रव परि कोशं निषीद नृभिः पुनानो अभि वाजमर्ष ।
अश्वं न त्वा वाजिनं मर्जयन्तोऽच्छा बर्ही रशनाभिर्नयन्ति ॥१॥
स्वायुधः पवते देव इन्दुरशस्तिहा वृजनं रक्षमाणः ।
पिता देवानां जनिता सुदक्षो विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्याः ॥२॥
ऋषिर्विप्रः पुरएता जनानामृभुर्धीर उशना काव्येन ।
स चिद्विवेद निहितं यदासामपीच्यं गुह्यं नाम गोनाम् ॥३॥

---

४७ शोधन-कालमें तुम्हारी चञ्चल धाराएं सूक्ष्म मेषलोमोंको लाँघकर जाती हैं। सोम, जिस समय तुम दो अभिषव-फलकोंपर जलमें मिलाये जाते हो, उस समय चुलाये जाकर तुम कलसमें बैठते हो।

४८ सोम, तुम हमारी स्तुतिको जानते हो। हमारे यज्ञके लिये क्षरित होओ। मेषलोममय दशापवित्रमें प्रिय मधु (रस) गिराओ। दीप्त सोम, सारे भक्षक राक्षसोंको विनष्ट करो। यज्ञमें सुपुत्र-वाले हम महान् धनकी याचना करेंगे और प्रचुर स्तोत्रका पाठ करेंगे।

---

१ सोम, शीघ्र जाओ और द्रोणकलसमें बैठो। नेताओं (मनुष्यों) के द्वारा शोधित होकर यजमानके लिये अन्न दो। अध्वर्यु लोग यज्ञके लिये बली सोमका उसी प्रकार मार्जन करते हैं, जिस प्रकार बली अश्वका मार्जन किया जाता है।

२ शोभन आयुधवाले, क्षरणशील, दिव्य, राक्षस-नाशक, उपद्रव-रक्षक, देवोंके पालक, उत्पादक, सुबल, स्वर्ग-स्तम्भ और पृथिवीके धारक सोम क्षरित हो रहे हैं।

३ अतीन्द्रिय-द्रष्टा, मेधावी, अग्रगन्ता, मनुष्योंके प्रकाशक और धीर उशना ऋषि गायोंके गुह्य और दुग्ध-मिश्रित जलको प्राप्त करते हैं।

एष स्य ते मधुमाँ इन्द्र सोमो वृषा वृष्णे परि पवित्रे अक्षाः।
सहस्राः शतसा भूरिदावा शश्वत्तमं बर्हिरा वाज्यस्थात् ॥४॥
एते सोमा अभि गव्या सहस्रा महे वाजायामृताय श्रवांसि।
पवित्रेभिः पवमाना असृग्रञ्छ्रवस्यवो न पृतनाजो अत्याः ॥५॥
परि हि ष्मा पुरुहूतो जनानां विश्वासरद्भोजना पूयमानः।
अथा भर श्येनभृत प्रयांसि रयिं तुञ्जानो अभि वाजमर्ष ॥६॥
एष सुवानः परि सोमः पवित्रे सर्गो न सृष्टो अदधावदर्वा।
तिग्मे शिशानो महिषो न शृङ्गे गा गव्यन्नभि शूरो न सत्वा ॥७॥
एषा ययौ परमादन्तरद्रेः कूचित् सतीरूर्वे गा विवेद।
दिवो न विद्युत् स्तनयन्त्यभ्रैः सोमस्य ते पवत इन्द्र धारा ॥८॥
उत स्म राशिं परि यासि गोनामिन्द्रेण सोम सरथं पुनानः।
पूर्वीरिषो बृहतीर्जीरदानो शिक्षा शचीवस्तव ता उपष्टुत् ॥९॥

---

४ वर्षक इन्द्र, तुम्हारे लिये मधुर और वर्षक सोम पवित्रमें क्षरित होते हैं। वही सौ और असीम धनोंके दाता, अगणित दान-दाता, नित्य और बली हैं। वह यज्ञमें रहते हैं।

५ अन्नाभिलाषी और सेना-विजयी अश्वके समान सोम गो-मिश्रित अन्नोंको लक्ष्य करके महान् और अमर बलके लिये, मेषलोमके छननेसे शोधित होकर, बनाये जाते हैं।

६ बहुतोंके द्वारा आहूत और शोध्यमान सोम मनुष्योंके लिये सारे भोज्य धनोंको देते हैं। श्येन द्वारा लाये गये सोम अन्न दो, धन दो और अन्न-रसकी ओर जाओ।

७ गतिशील और अभिषुत सोम छोड़े हुए घोड़ेके समान पवित्रकी ओर दौड़ते हैं। अपनी सींगोंको तेज करके महिष और गवाभिलाषी शूरके समान वह दौड़ते हैं।

८ सोम-धारा ऊँचे स्थानसे पात्रकी ओर जाती है। पणियोंके निवासस्थान पर्वतके गूढ़ स्थानमें वर्त्तमान गायोंको इसी सोम-धाराने प्राप्त किया था। आकाशसे शब्द करनेवाली, बिजलीके समान यह सोम-धारा, इन्द्र, तुम्हारे लिये क्षरित होती है।

९ सोम, शोधित तुम खोये हुए गोसमूहको प्राप्त करते हो। इन्द्रके साथ ही रथपर जाते हो। शीघ्रदाता सोम, तुम्हारी स्तुति की जाती है। हमें महान् धन दो। अन्नवाले सोम, सब अन्न तुम्हारा है।

## ८८ सूक्त

पवमान सोम देवता। उशना ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्वे तुभ्यं पवते त्वमस्य पाहि।
त्वं ह यं चकृषे त्वं ववृष इन्दुं मदाय युज्याय सोमम् ॥१॥
स ईं रथो न भुरिषाळयोजि महः पुरूणि सातये वसूनि।
आदीं विश्वा नहुष्याणि जाता स्वर्षाता वन ऊर्ध्वा नवन्त ॥२॥
वायुर्न यो नियुत्वाँ इष्टयामा नासत्येव हव आ शम्भविष्ठः।
विश्ववारो द्रविणोदा इव त्मन् पूषेव धीजवनोऽसि सोम ॥३॥
इन्द्रो न यो महा कर्माणि चक्रिर्हन्ता वृत्राणामसि सोम पूर्भित्।
पैद्वो न हि त्वमहिनाम्नां हन्ता विश्वस्यासि सोम दस्योः ॥४॥
अग्निर्न यो वन आसृज्यमानो वृथा पाजांसि कृणुते नदीषु।
जनो न युध्वा महत उपब्दिरियर्ति सोमः पवमान ऊर्मिम् ॥५॥

---

१ इन्द्र, तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत होते हैं। यह तुम्हारे लिये क्षरित होते हैं। इन्हें पियो। तुम जिन सोमको बनाते हो, जिनको स्वीकार करते हो, मद और सहायताके लिये उन्हें तुम पियो।

२ सोम, रथके समान, प्रचुर भारके वहन करनेवाले हैं। सोम महान् हैं। रथके समान ही लोग उनको योजित करते हैं। सोम प्रभूत धनके दाता हैं। युद्धार्थी सोमको संग्राममें ले जाते हैं।

३ सोम वायुके नियुत् नामक अश्वोंके स्वामी हैं और वायुके समान ही इष्ट-गमन हैं। वह अश्विद्वयके समान आह्वान सुनते ही आते हैं। सोम धनोंके समान सबके प्रार्थनीय हैं। वह सूर्यके समान वेगवाले हैं।

४ इन्द्रके समान तुमने महान् कार्योंको किया है। सोम, तुम शत्रुओंके हन्ता और ८-योंके भेदन-कर्त्ता हो। अश्वके समान अहियोंके हन्ता हो। तुम सारे शत्रुओंके हन्ता हो।

५ जैसे अग्नि वनमें उत्पन्न होकर अपने बलको प्रकट करते हैं, वैसे ही सोम जलमें उत्पन्न होकर वीर्यका प्रकाश करते हैं। युद्ध-कर्ता, वीरके समान, शत्रुके पास भयंकर शब्द करनेवाले सोम प्रबुद्ध रस देते हैं।

एते सोमा अति वाराण्यव्या दिव्या न कोशासो अभ्रवर्षाः ।
वृथा समुद्रं सिन्धवो न नीचीः सुतासो अभि कलशाँ असृग्रन् ॥६॥
शुष्मी शर्धो न मारुतं पवस्वानभिशस्ता दिव्या यथा विट् ।
आपो न मक्षू सुमतिर्भवा नः सहस्राप्साः पृतनाषाण्न यज्ञः ॥७॥
राज्ञो नु ते वरुणस्य व्रतानि बृहद्गभीरं तव सोम धाम ।
शुचिष्ट्वमसि प्रियो न मित्रो दक्षाय्यो अर्यमेवासि सोम ॥८॥

## ८६ सूक्त

पवमान सोम देवता । उशना ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रो स्य वह्निः पथ्याभिरस्यान्दिवो न वृष्टिः पवमानो अक्षाः ।
सहस्रधारो असदन्न्यस्मे मातुरुपस्थे वन आ च सोमः ॥१॥
राजा सिन्धूनामवसिष्ट वास ऋतस्य नावमारुहद्रजिष्ठाम् ।
अप्सु द्रप्सो वावृधे श्येनजूतो दुह ईं पिता दुह ईं पितुर्जाम् ॥२॥

६ जैसे आकाशके मेघसे वर्षा होती है और जैसे नदियाँ नीचे समुद्रकी ओर जाती हैं; वैसे ही अभिषुत सोम मेषलोमका अतिक्रम करके कलसमें जाते हैं ।

७ सोम, तुम बली हो । मरुतोंके बलके समान क्षरित होओ । स्वर्गकी सुन्दर प्रजाके समान ( वायुके समान ) बहो । जलके सामान हमारे लिये सुमतिदाता होओ । तुम बहुरूप हो । सेना-जेता इन्द्रके समान तुम यजनीय हो ।

८ सोम, तुम वारक राजा हो । तुम्हारे कामोंको मैं शीघ्र करता हूँ । सोम, तुम्हारा तेज महान् और गम्भीर है । तुम प्रिय मित्रके समान शुद्ध हो । तुम अर्जमा देवताके समान पूजनीय हो ।

१ जैसे आकाशसे वृष्टि होती है, वैसे ही यज्ञ-मार्गोंसे वोढ़ा सोम प्रवाहित हो रहे हैं । असीम धाराओंवाले सोम हमारे पास अथवा द्युलोकके पास बैठते हैं ।

२ दुग्ध देनेवाली गायोंके राजा सोम हैं । वह क्षीरमें मिल रहे हैं । वह यज्ञकी सरल नौकामें चढ़ते हैं । श्येन द्वारा लगाये गये सोम जलमें बढ़ते हैं । द्युलोकके पुत्र सोमको पालक लोग दूहते हैं । अध्वर्यु भी दूहते हैं ।

सिंहं नसन्त मध्वो अयासं हरिमरुषं दिवो अस्य पतिम् ।
शूरो युत्सु प्रथमः पृच्छते गा अस्य चक्षसा परि पात्युक्षा ॥३
मधुपृष्ठं घोरमयासमश्वं रथे युञ्जन्त्युरुचक्र ऋष्वम् ।
स्वसार ईं जामयो मर्जयन्ति सनाभयो वाजिनमूर्जयन्ति ॥४॥
चतस्र ईं घृतदुहः सचन्ते समाने अन्तर्धरुणे निषत्ताः ।
ता ईमर्षन्ति नमसा पुनानास्ता ईं विश्वतः परिषन्ति पूर्वीः ॥५
विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्या वश्वा उत क्षितयो हस्ते अस्य ।
असत्त उत्सो गृणते नियुत्वान्मध्वो अंशुः पवत इन्द्रियाय ।
वन्वन्नवातो अभि देववीतिमिन्द्राय सोम वृत्रहा पवस्व ।
शग्धि महः पुरुश्चन्द्रस्य रायः सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥७॥

---

३ शत्रु-हिंसक, जल-प्रेरक, हरित-वर्ण, रूपवान् और द्युलोकके स्वामी सोमको यजमान लोग व्याप्त करते हैं। संग्रामोंमें शूर और देवोंमें मुख्य सोम पणियोंके द्वारा अपहृत गायोंको खोजनेके लिये मार्ग पूछ रहे हैं। सोमकी ही सहायतासे सेचक इन्द्र संसारकी रक्षा करते हैं।

४ मधुर पृष्ठवाले, भयानक, गन्ता और दर्शनीय सोमको अनेक चक्रोंवाले रथमें ( यज्ञमें ), अश्वके समान, जोता जाता है। परस्पर भगिनियों और बन्धुओंके समान अङ्गुलियाँ सोमका शोधन करती हैं। समान बन्धनवाले अध्वर्यु आदि सोमको बली करते हैं।

५ घी देनेवाली चार गायें सोमकी सेवा करती हैं। गायें सबके धारक अन्तरीक्ष . एक ही स्थान ) में बैठी हुई हैं। अन्नसे शोधित करनेवाली वे अनेक और बड़ी गायें चारो ओरसे सोमको घेर कर रहती हैं।

६ सोम द्युलोकके स्तम्भ और पृथिवीके धारक हैं। सारी प्रजा उनके हाथमें है। वह स्तुति करते हैं। तुम्हारे लिये वह अश्ववाले हों। सोम मधुर रस वाले हैं। वह इन्द्रके लिये अभिषुत होते हैं।

७ सोम, तुम बली और महान् हो। देवों और इन्द्रके पानके लिये वृत्रघ्न तुम, क्षरित होओ। तुम्हारी कृपासे हम अतीव आह्लादक और शोभन-वीर्य धनके स्वामी बन जाय।

## ९० सूक्त

पवमान सोम देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र हिन्वानो जनिता रोदस्यो रथो न वाजं सनिष्यन्नयासीत् ।
इन्द्रं गच्छन्नायुधा संशिशानो विश्वा वसु हस्तयोरादधानः ॥१॥

अभि त्रिपृष्ठं वृषणं वयोधामाङ्गूषाणामवावशन्त वाणीः ।
वना वसानो वरुणो न सिन्धून्वि रत्नधा दयते वार्याणि ॥२॥

शूरग्रामः सर्ववीरः सहावाञ्जेता पवस्व सनिता धनानि ।
तिग्मायुधः क्षिप्रधन्वा समत्स्वषाह्ळः साह्वान् पृतनासु शत्रून् ॥३॥

उरुगव्यूतिरभयानि कृण्वन्त्समीचीने आ पवस्वा पुरन्धी ।
अपः सिषासन्नुषसः स्वर्गाः सं चिक्रदो महो अस्मभ्यं वाजान् ॥४॥

मत्सि सोम वरुणं मत्सि मित्रं मत्सीन्द्रमिन्दो पवमान विष्णुम् ।
मत्सि शर्धो मारुतं मत्सि देवान्मत्सि महामिन्द्रमिन्दो मदाय ॥५॥

---

१ अध्वर्युओंके द्वारा प्रेरित और द्यावापृथिवीके उत्पादक सोम रथके समान अन्न प्रदान करनेवाले हैं। इन्द्रको पाकर, आयुधोंको तेज कर और सारे धनोंको हाथोंमें धारण कर सोम हमें देनेको प्रस्तुत हैं।

२ तीन सवनोंवाले, वर्धक और अन्नदाता सोमको स्तोताओंकी वाणी शब्दायमान कर रही है। जलमिश्रित सोम, वरुणके समान, जलके आच्छादक हैं और वह रत्न-दाता होकर स्तोताओंको धन देते हैं।

३ सोम, तुम शूरोंके समुदायक और वीरोंवाले हो। सोम सामर्थ्यवान्, विजेता, संभक्ता, तीक्ष्ण आयुधवाले, क्षिप्र और धनुर्धारी हाथवाले, युद्धमें अजेय और शत्रुओंको हरानेवाले हैं।

४ सोम, तुम विस्तृत मार्गवाले हो। स्तोताओंके लिये अभय देते हुए और द्यावापृथिवीको सङ्गत करते हुए क्षरित होओ। हमें प्रचुर अन्न देनेके लिये तुम उषा, आदित्य और किरणोंको प्राप्त करनेकी इच्छासे शब्द करते हो।

५ क्षरणशील सोम, तुम वरुण, मित्र, विष्णु, बली मरुत्, इन्द्र और अन्य देवोंके मदके लिये उन्हें तृप्त करो।

एवा राजेव क्रतुमाँ अमेन विश्वा घनिघ्नद् रिता पवस्व ।
इन्दो सूक्ताय वचसे वयोधा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

६ सोम, तुम यज्ञवाले हो। राजाके समान बलके द्वारा सारे पापोंको नष्ट करके क्षरित होओ। दीप्त सोम, हमारे सुन्दर स्तोत्रके लिये हमें अन्न दो। कल्याणके द्वारा सदा हमारा पालन करो।

# तृतीय अध्याय समाप्त

# चतुर्थ अध्याय

## ६१ सूक्त

पवमान सोम देवता मारीच कश्यप ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

असर्जि वक्वा रथ्ये यथाजौ धिया मनोता प्रथमो मनीषी।
दश स्वसारो अधि सानौ अव्येऽजन्ति वह्निं सदनान्यच्छ ॥१॥
वीती जनस्य दिव्यस्य कव्यैरधि सुवानो नहुष्येभिरिन्दुः।
प्र यो नृभिरमृतो मर्त्येभिर्मर्मृजानोऽविभिर्गोभिरद्भिः ॥२॥
वृषा वृष्णे रोरुवदंशुरस्मै पवमानो रुशदीर्ते पयो गोः।
सहस्रमृक्वा पथिभिर्वचोविदध्वस्मभिः सूरो अण्वं वि याति ॥३॥
रुजा दृह्ला चिद्रक्षसः सदांसि पुनान इन्द ऊर्णुहि वि वाजान्।
वृश्चोपरिष्टात्तुजता वधेन ये अन्ति दूरादुपनायमेषाम् ॥४॥

---

१ जैसे युद्धभूमिमें अश्वका अङ्गुलिसे परिमार्जन किया जाता है, वैसे ही शब्दायामान और क्षरणशील सोमका, कर्मके द्वारा यज्ञमें सृजन होता है। सोम देवोंके मनके अनुकूल, देवोंमें श्रेष्ठ और स्तुति वा मनके अधिपति हैं। भगिनी-स्वरूप दस अंगुलियाँ, यज्ञ-गृहके सम्मुख, ढोनेवाले सोमको उन्नत देश—मेषलोममय दशापवित्रपर प्रेरित करती हैं।

२ कवि (स्तोता) नहुष-वंशीयोंके द्वारा अभिषुत, क्षरणशील और देवोंके समीपवर्ती सोम यज्ञमें जाते हैं। अमर सोम, कर्मनिष्ठ मनुष्योंके द्वारा, पवित्र अभिषवचर्म, गोरस और जलके द्वारा बार बार शोधित होकर यज्ञमें जाते हैं।

३ काम-वर्षक, बार बार शब्दायमान और क्षरणशील सोम वर्षक इन्द्रके लिये शोभन और श्वेत गोरसके पास जाते हैं। स्तोत्रवान्, स्तोत्रज्ञ और सुवीर्य सोम हिंसा-शून्य अनेक मार्गोंसे सूक्ष्म-च्छिद्र पवित्रको लाँघकर द्रोणकलसमें जाते हैं।

४ सोम, सुदृढ़ राक्षस-पुरियोंका विनष्ट करो। इन्दु (सोम), पवित्रमें शोध्यमान (शोधन किये जाते हुए) तुम अन्न ले आओ। जो राक्षस दूर वा समीपसे आते हैं, उनके स्वामीको तुम घातक हथियारसे काट डालो।

स प्रत्नवन्नव्यसे विश्ववार सूक्ताय पथः कृणुहि प्राचः ।
ये दुःषहासो वनुषा बृहन्तस्ताँस्ते अश्याम पुरुकृत् पुरुक्षो ॥५॥
एवा पुनानो अपः स्वर्गा अस्मभ्यं तोका तनयानि भूरि ।
शं नः क्षेत्रमुरु ज्योतींषि सोम ज्योङ्नः सूर्यं दृशये रिरीहि ॥६॥

## ९२ सूक्त

पवमान सोम देवता। मरीचि-पुत्र कश्यप ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द ।

परि सुवानो हरिरंशुः पवित्रे रथो न सर्जि सनये हियानः ।
आपच्छ्लोकमिन्द्रियं पूयमानः प्रति देवाँ अजुषत प्रयोभिः ॥१॥
अच्छा नृचक्षा असरत् पवित्रे नाम दधानः कविरस्य योनौ ।
सीदन् होतेव सदने चमूषूपेमग्मन्नृषयः सप्त विप्राः ॥२॥

---

५ सबके प्रार्थनीय सोम, प्राचीन कालके समान स्थित तुम नवीन सूक्त और शोभन स्तोत्रवाले मेरे मार्गोंको पुराने करो अर्थात् मेरे लिये कोई मार्ग नया न रहे। बहुकर्मा और शब्दायमान सोम, राक्षसोंके लिये असह्य, हिंसक और महान् जो तुम्हारे अंश हैं, उन्हें हम यज्ञमें प्राप्त करें।

६ क्षरणशील (पवमान) सोम, हमें जल, स्वर्ग, गोधन और अनेक पुत्र-पौत्र दो। हमारे खेतका मङ्गल करो। सोम, अन्तरीक्षमें नक्षत्रोंको विस्तृत करो। हम चिर काल तक सूर्यको देख सकें।

---

१ शोध्यमान, पुरोहितोंके द्वारा भेजे जाते और हरित-वर्ण सोम वैसे ही मेषलामके पवित्र (चलनी या छनने) में, देवोंके उपासनके लिये, संचालित किये जाते हैं, जैसे युद्धमें, शत्रु-बधके लिये, रथ-संचालित किया जाता है। शोध्यमान सोम इन्द्रका स्तोत्र प्राप्त करते हैं। सोम प्रसन्नकर अन्नसे देवोंकी सेवा करते हैं।

२ मनुष्योंके दर्शक और क्रान्तप्रज्ञ सोम जलमें मिलकर तथा अपने स्थान पवित्रमें फैल कर यज्ञमें उसी प्रकार जाते हैं, जिस प्रकार स्तोत्रके लिये होता देवोंके पास जाता है। अनन्तर सोम चमस आदि पात्रोंमें जाते हैं। सात मेधावी (भरद्वाज, कश्यप, गोतम, अत्रि, विश्वामित्र, जमदग्नि और वसिष्ठ) ऋषि सोमके पास जाते हैं।

प्र सुमेधा गातुविद्विश्वदेवः सोमः पुनानः सद एति नित्यम् ।
भुवद्विश्वेषु काव्येषु रन्तानु जनान्यतते पञ्च धीरः ॥३॥
तव त्ये सोम पवमान निण्ये विश्वे देवास्त्रय एकादशासः ।
दश स्वधाभिरधि सानो अव्ये मृजन्ति त्वा नद्यः सप्त यह्वीः ॥४॥
तन्नु सत्यं पवमानस्यास्तु यत्र विश्वे कारवः संनसन्त ।
ज्योतिर्यदह्ने अकृणोदु लोकं प्रावन्मनुं दस्यवे करभीकम् ॥५॥
परि सद्मेव पशुमान्ति होता राजा न सत्यः समितीरियानः ।
सोमः पुनानः कलशाँ अयासीत् सीदन्मृगो न महिषो वनेषु ॥६॥

## ९३ सूक्त

पवमान सोम देवता। गोतम-वंशीय नोधा ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

साकमुक्षो मर्जयन्त स्वसारो दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः ।
हरिः पर्यद्रवज्जाः सूर्यस्य द्रोणं ननक्षे अत्यो न वाजी ॥१॥

---

३ शोभन-प्रज्ञ, मार्गज्ञ, सब देवोंके समीपी और पवमान (शोध्यमान) सोम अविनश्वर द्रोण-कलसमें जाते हैं। सारे कार्योंमें रमणीय और प्राज्ञ सोम निषाद आदि पाँच वर्णोंका अनुगमन करते हैं।

४ पवमान (शोध्यमान) सोम, तुम्हारे ये प्रसिद्ध ३३ देवता अन्तर्हित स्थान (स्वर्ग = द्युलोक) में रहते हैं। दस अँगुलियाँ उन्नत और मेषलोमके पवित्रमें जलके द्वारा तुम्हें शोधित करती हैं।

५ पवमान सोमके जिस प्रसिद्ध स्थानपर स्तोता लोग, स्तुतिके लिये, एकत्र होते हैं, उस सत्य स्थानको हम प्राप्त करें। सोमकी जो ज्योति दिनके लिये प्रकाश प्रदान करती है, उसने मनु नामक राजर्षिकी उत्तम रूपसे रक्षा की है। सोमने अपने तेजको सर्वनाशक असुरके लिये अभिगमनशील किया है।

६ जैसे देवोंको बुलानेवाले ऋत्विक् पशुवालेके सदन (यज्ञगृह) में जाते हैं और जैसे सत्यकर्मा राजा युद्ध-क्षेत्रमें जाता है, वैसे ही पवमान सोम, गमनशील जलमें महिषके सदृश रहकर, द्रोणकलसमें जाते हैं।

१ एक साथ सिञ्चन करनेवाली भगिनी-स्वरूप जो दस अङ्गुलियाँ सोमका शोधन करती हैं, वे ही प्राज्ञ और देवोंके द्वारा काम्यमान सोमकी प्रेरिका हैं। हरितवर्ण सोम सूर्यकी पत्नियों (दिशाओं) की ओर जाते हैं। गतिशील अश्वके समान स्थित सोम कलसमें जाते हैं।

सं मातृभिर्न शिशुर्वावशानो वृषा दधन्वे पुरुवारो अद्भिः ।
मर्यो न योषामभि निष्कृतं यन्त्संगच्छते कलश उस्त्रियाभिः ॥२॥
उत प्र पिप्य ऊधरघ्न्याया इन्दुर्धाराभिः सचते सुमेधाः ।
मूर्धानं गावः पयसा चमूष्वभिश्रीणन्ति वसुभिर्न निक्तैः ॥३॥
स नो देवेभिः पवमान रदेन्दो रयिमश्विनं वावशानः ।
रथिरायतामुशती पुरन्धिरस्मद्र्यगा दावनेद्य वसूनाम् ॥४॥
नू नो रयिमुप मास्व नृवन्तं पुनानो वाताप्यं विश्वश्चन्द्रम् ।
प्र वन्दितुरिन्दो तार्यायुः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥५॥

## ९४ सूक्त ।

पवमान सोम देवता। आङ्गिरस कण्व ऋषि। त्रिष्टुप्छन्द ।

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ॥१॥

---

२ देवकामी, कामवर्षक और वरणीय सोम जलके द्वारा उसी प्रकार धृत किये जाते हैं, जिस प्रकार माताएँ शिशुका धारण करती हैं। जैसे पुरुष अपनी स्त्रीके पास जाता है, वैसे ही सोम अपने संस्कृत स्थानको प्राप्त करते हुए, दूध आदिके साथ, द्रोणकलसमें जाते हैं।

३ सोम गायके स्तनको आप्यायित करते हैं। शोभनप्रज्ञ सोम धाराओंके रूपमें क्षरित होते हैं। चमसोंमें स्थित उन्नत सोमको गायें श्वेत दुग्धसे उसी प्रकार आच्छादित करती हैं, जिस प्रकार धौत वस्त्रसे कोई पदार्थ आच्छादित किया जाता है।

४ पवमान सोम, पात्रोंमें गिरते-गिरते देवोंके साथ कामयमान तुम अश्वसे युक्त धन दो। रथियोंकी इच्छा करनेवाले सोमकी अभिलाषिणी और बहुविध बुद्धि धन-दानके लिये हमारे सामने आवे।

५ सोम, हमारे लिये शीघ्र ही पुत्रादि-युक्त धन दो। जलको सबके लिये आह्लादक बनाओ। सोम, स्तोताकी आयुको बढ़ाओ। सोम अपने कर्मसे सवनमें, हमारे यज्ञके प्रति, शीघ्र आवें।

---

१ जिस समय घोड़ेके समान सोम अलङ्कृत होते हैं और जिस समय सूर्यके समान सोमकी किरणें उदित होती हैं, उस समय अङ्गुलियाँ स्पर्द्धा करके सोमका शोधन करती हैं। अनन्तर कवि सोम जलमें मिलकर उसी प्रकार कलसमें क्षरित होते हैं, जिस प्रकार पशुपोषणके लिये गोपाल गोष्ठमें जाता है।

द्विता व्यूर्ण्वन्नमृतस्य धाम स्वर्विदे भुवनानि प्रथन्त ।
धियः पिन्वानाः स्वसरे न गाव ऋतायन्तीरभि वावश्र इन्दुम् ॥२॥
परि यत् कविः काव्या भरते शूरो न रथो भुवनानि विश्वा ।
देवेषु यशो मर्ताय भूषन्दक्षाय रायः पुरुभूषु नव्यः ॥३॥
श्रिये जातः श्रिय आ निरियाय श्रियं वयो जरितृभ्यो दधाति ।
श्रियं वसाना अमृतत्वमायन् भवन्ति सत्या समिथा मितद्रौ ॥४॥
इषमूर्जमभ्यर्षाश्वं गामुरु ज्योतिः कृणुहि मत्सि देवान् ।
विश्वानि हि सुषहा तानि तुभ्यं पवमान बाधसे सोम शत्रून् ॥५॥

२ जल-धारक अन्तरीक्षको सोम अपने तेजसे दोनों ओरसे आच्छादित करते हैं । सवज्ञ सोमके लिये सारे भुवन विस्तृत हों । प्रसन्नता-कारिणी और यज्ञ-विधायिनी स्तुतियाँ सोमको लक्ष्य करके यज्ञ-दिनोंमें वैसे ही शब्द करती हैं, जैसे दुग्धदायिनी गायें गोष्ठमें शब्द करती हैं ।

३ बुद्धिमान् सोम जिस समय स्तोत्रोंकी ओर जाते हैं, उस समय वीर पुरुषके रथके समान वह सर्वत्र गात-विधि करते हैं । सोम देवोंका धन मनुष्यको देते हैं । प्रदत्त धनकी वृद्धिके लिये सोमकी स्तुति की जाती है ।

४ सम्पत्तिके लिये सोम अंशुओं ( लता-प्रतान ) से निकलते हैं । स्तोताओंको सोम अन्न और आयु प्रदान करते हैं । सोमसे सम्पत्ति प्राप्त करके स्तोता लोगोंने अमरत्व प्राप्त किया । सोमसे युद्ध यथार्थ होते हैं ।

५ सोम, सम्पत्ति, बल; अश्व, गौ आदि दो । महान् ज्योतिका विस्तार करो । इन्द्रादि देवोंको तृप्त करो । सोम, तुम्हारे लिये सारे राक्षस पराजेय हैं । क्षरणशील सोम, सारे शत्रुओंको मारो ।

# ९५ सूक्त

पवमान सोम देवता । कवि-पुत्र प्रस्कण्व ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

कनिक्रन्ति हरिरा सृज्यमानः सीदन्वनस्य जठरे पुनानः ।
नृभिर्यतः कृणुते निर्णिजं गा अतो मतीर्जनयत स्वधाभिः ॥१॥
हरिः सृजानः पथ्यामृतस्येयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
देवो देवानां गुह्यानि नामाविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे ॥२॥
अपामिवेदूर्मयस्तर्तुराणाः प्र मनीषा ईरते सोममच्छ ।
नमस्यन्तीरुप च यन्ति सञ्चा च विशन्त्युशतीरुशन्तम् ॥३॥
तं मर्मृजानं महिषं न सानावंशुं दुहन्त्युक्षणं गिरिष्ठाम् ।
तं वावशानं मतयः सचन्ते त्रितो बिभर्ति वरुणं समुद्रे ॥४॥
इष्यन्वाचमुपवक्तेव होतुः पुनान इन्दो विष्या मनीषाम् ।
इन्द्रश्च यत् क्षयथः सौभगाय सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥५॥
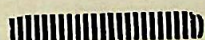
१ चारो ओर अभिषुत होनेवाले और हरित-वर्ण सोम शब्द करते है तथा शोधित होते-होते कलसके पेटमें बैठते हैं । मनुष्योंके द्वारा संयत सोम दुग्धमें मिश्रित होकर अपने रूपको प्रकट करते हैं । इन सोमके लिये, स्तोताओ, हविके साथ मननीय स्तुति उत्पन्न करो ।

२ जैसे नाविक नौकाको चलाता है, वैसे ही बनाये जानेवाले और हरितवर्ण सोम सत्यरूप यज्ञके उपयोगी वचनको प्रेरित करते हैं । दीप्यमान सोम इन्द्रादि देवोंके अन्तर्हित शरीरोंको यज्ञमें उत्तम वक्ताके लिये आविष्कृत करते हैं ।

३ स्तुतिके लिये शीघ्रता करनेवाले ऋत्विक् लोग, जल-तरङ्गके समान, मनकी स्वामिनी स्तुतिओंको सोमके लिये प्रेरित करते हैं । सोमकी पूजा करनेवाली स्तुतियाँ सोमके पास जाती हैं । अभिलाषिणी स्तुतियाँ अभिलाषी सोममें प्रविष्ट होती हैं ।

४ ऋत्विक् लोग सोमका शोधन करते हुए, महिषके समान, उन्नत देशमें स्थित काम-वर्षक और अभिषवके लिये पत्थरोंमें स्थित उन प्रसिद्ध सोमको दूहते हैं । कामयमान सोमको मननीय स्तुतियाँ सेवित करती हैं । तीन स्थानोंमें वर्त्तमान इन्द्र शत्रु-निवारक सोमको अन्तरीक्षमें धारण करते हैं ।

५ सोम, जैसे स्तोत्र-प्रेरक उपवक्ता नामक पुरोहित होताको उत्साहित करता है, वैसे ही स्तोताओंके प्रशंसनके लिये क्षरणशील तुम बुद्धिको धन-प्रदानाभिमुखी करो । जब तुम इन्द्रके साथ यज्ञमें रहते हो, तब हम स्तोता सौभाग्यशाली हों और शोभन वीर्यवाले धनके अधिपति हों ।

## ९६ सूक्त

पवमान सोम देवता। दिवोदासके पुत्र प्रतर्दन ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र सेनानीः शूरो अग्रे रथानां गव्यन्नेति हर्षते अस्य सेना।
भद्रान् कृण्वन्निन्द्रहवान्त्सखिभ्य आ सोमो वस्त्रा रभसानि दत्ते ॥१॥
समस्य हरिं हरयो मृजन्त्यश्वहयैरनिशितं नमोभिः।
आ तिष्ठति रथमिन्द्रस्य सखा विद्वाँ एना सुमतिं यात्यच्छ ॥२॥
स नो देव देवताते पवस्व महे सोम प्सरस इन्द्रपानः।
कृण्वन्नपो वर्षयन्द्यामुतेमामुरोरा नो वरिवस्या पुनानः ॥३॥
अजीतयेऽहतये पवस्व स्वस्तये सर्वतातये बृहते।
तदुशन्ति विश्व इमे सखायस्तदहं वश्मि पवमान सोम ॥४॥
सोमः पवते जनिता मतीनां जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः।
जनिताग्नेर्जनिता सूर्यस्य जनितेन्द्रस्य जनितोत विष्णोः ॥५॥

१ सेनापति और शत्रु-बाधक सोम शत्रुओंकी गायें पानेकी इच्छासे रथोंके आगे युद्धमें जाते हैं। सोमकी सेना प्रसन्न होती है। मित्र यजमानोंके लिये इन्द्रके आह्वानको कल्याण-कर बनाते हुए सोम उन दुग्ध आदिको ग्रहण करते हैं, जिनके लिये इन्द्र शीघ्र आते हैं।

२ अँगुलियां सोमकी हरित-वर्ण किरणका अभिषव करती हैं। व्याप्त रहनेपर भी सोम अननुगत-रथ रूप दशापवित्रमें ठहरते हैं। इन्द्रके मित्र और प्राज्ञ सोम पवित्रसे शोभन स्तुतिवाले स्तोताके पास जाते हैं।

३ द्योतमान सोम, तुम इन्द्रके पीनेकी वस्तु हो। हमारे देव-व्याप्त यज्ञमें इन्द्रके महान् पानके लिये क्षरित होओ। तुम जल-कर्त्ता और द्यावापृथिवीके अभिषेक्ता हो। विस्तृत अन्तरीक्षसे आगत और शोधित तुम हमें धनादि प्रदान करो।

४ सोम, हमारे अपराजय, अविनाश और यज्ञके लिये सामने आओ। मेरे सारे मित्र स्तोता तुम्हारा रक्षण चाहते हैं। पवमान सोम, मैं भी तुम्हारा रक्षण चाहता हूँ।

५ सोम क्षरित होते हैं। सोम स्तुति, द्युलोक, पृथिवी, अग्नि, प्रेरक सूर्य, इन्द्र और विष्णुके जनक हैं।

ब्रह्मा देवानां पदवीः कवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणाम् ।
श्येनो गृध्राणां स्वधितिर्वनानां सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥६॥
प्रावीविपद्वाच ऊर्मिं न सिन्धुर्गिरः सोमः पवमानो मनीषाः ।
अन्तः पश्यन्वृजनेमावराण्या तिष्ठति वृषभो गोषु जानन् ॥७॥
स मत्सरः पृत्सु वन्वन्नवातः सहस्ररेता अभि वाजमर्ष ।
इन्द्रायेन्दो पवमानो मनीष्यंशोरूर्मिमीरय गा इषण्यन् ॥८॥
परि प्रियः कलशे देववात इन्द्राय सोमो रण्यो मदाय ।
सहस्रधारः शतवाज इन्दुर्वाजी न सप्तिः समना जिगाति ॥९॥
स पूर्व्यो वसुविज्जायमानो मृजानो अप्सु दुदुहानो अद्रौ ।
अभिशस्तिपा भुवनस्य राजा विदद्गातुं ब्रह्मणे पूयमानः ॥१०॥

---

६ सोम देव-स्तोता पुरोहितोंके ब्रह्मा, कवियोंके शब्दविन्यास-कर्त्ता, मेधावियोंके ऋषि, वन्य प्राणियोंके महिष, पक्षियोंके राजा और अस्त्रोंके स्वधिति नामक अस्त्र हैं। शब्द करते हुए सोम पवित्रका अतिक्रम करते हैं।

७ पवमान सोम तरङ्गायित नदीके समान हृदयङ्गम स्तुतिवाक्यके प्रेरक हैं। काम-वर्षक और गोज्ञाता सोम अन्तर्हित वस्तुओंको देखते हुए दुर्बलोंके न रोकने योग्य बलपर अधिष्ठित रहते हैं।

८ सोम, तुम मदकर, युद्धमें शत्रुहन्ता, अगम्य और असीम जल-युक्त हो। शत्रुओंमें बलको अधिकृत करो। सोम, तुम प्राज्ञ हो। तुम गायोंको प्रेरित करते हुए अपनी अंशु-इन्द्रके प्रति भेजो।

९ सोम प्रसन्नता-दायक हैं, रमणीय हैं। उनके पास देव लोग जाते हैं। अनेक धारा-वाले, बहुबल और पात्रोंमें क्षरणशील सोम इन्द्रके मदके लिये द्रोणकलसमें उसी प्रकार जाते हैं, जिस प्रकार युद्धमें बली अश्व जाता है।

१० प्राचीन, धनाधिपति, जन्मके साथ जलमें शोधित, अभिषव-प्रस्तरपर निष्पीड़ित, शत्रु-ओंसे रक्षक, प्राणियोंके राजा और कर्मके लिये क्षरणशील सोम यजमानको समीचीन मार्ग बताते हैं।

त्वया हि नः पितरः सोम पूर्वे कर्माणि चक्रुः पवमान धीराः ।
वन्वन्नवातः परिधीँरपोर्णु वीरेभिरश्वैर्मघवा भवा नः ॥११॥
यथा पवथा मनवे वयोधा अमित्रहा वरिवोविद्धविष्मान् ।
एवा पवस्व द्रविणं दधान इन्द्रे सं तिष्ठ जनयायुधानि ॥१२॥
पवस्व सोम मधुमाँ ऋतावापो वसानो अधि सानो अव्ये ।
अव द्रोणानि घृतवन्ति सीद मदिन्तमो मत्सर इन्द्रपानः ॥१३॥
वृष्टिं दिवः शतधारः पवस्व सहस्रसा वाजयुर्देववीतौ ।
सं सिन्धुभिः कलशे वावशानः समुस्रियाभिः प्रतिरन्न आयुः ॥१४॥
एष स्य सोमो मतिभिः पुनानोऽत्यो न वाजी तरतीदरातीः ।
पयो न दुग्धमदितेरिषिरमुर्विव गातुः सुयमो न वोह्ला ॥१६॥

---

११ पवमान सोम, हमारे कर्मकुशल पूर्वजोंने, तुम्हारी सहायतासे ही अग्निष्टोमादि कर्म किये थे। वेगवान् अश्वोंकी सहायताके द्वारा तुम शत्रुओंको मारते हो। राक्षसोंको हटाओ। तुम हमारे इन्द्र बनो—धन दो।

१२ प्राचीन कालमें जैसे तुम राजा मनुके लिये अन्न-धारक हुए थे, शत्रुओंका संहार किया था और धन, पुरोडाश आदिसे युक्त होकर उनको धन-प्रदान करनेके लिये आये थे, वैसे हमें भी धन देनेके लिये पधारो, इन्द्रका आश्रय करो और उन्हें अस्त्र दो।

जाते १३ सोम, तुम मदकर रसवाले और याज्ञिक हो। जलमें मिश्रित होकर उन्नत मेषलोम-कर पवित्रमें क्षरित होओ। अतीव मदकर इन्द्रके पीने योग्य और मादक सोम, जलवाले द्रोण-में ठहरो।

अननु १४ सोम, तुम यज्ञमें यजमानोंको विविध प्रकारके धन देनेवाले, अन्नकामी और अनेक स्तोत धारोंवाले हो। आकाशसे वृष्टि बरसाओ और जल तथा दुग्धके साथ, हमारे जीवनको बढ़ाते द्रोणकलसमें क्षरित होओ।

ति १५ ऐसे सोम स्तोत्रोंसे शोधित होते हैं। सोम गमनशील अश्वके समान शत्रुओंके ार जाते हैं। वे अदीन गौके दूधके समान परिशुद्ध हैं। वे विस्तीर्ण मार्गके समान सबके आश्रयणीय हैं। वाहक अश्वके समान सोम स्तोत्रोंके द्वारा नियन्त्रणमें आते हैं।

१६ शोभन आयुधवाले और ऋत्विकोंके द्वारा शोधित सोम अपनी गुह्य और रमणीय मूर्त्तिको धारण करो। अश्वके समान वर्त्तमान तुम हमारी अन्नाभिलाषाके लिये हमें अन्न दो। देव सोम, हमें आयु और पशु दो।

ऋत्वायुधः सोतृभिः पूयमानोऽभ्यर्ष गुह्यं चारु नाम ।
अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम ॥१६॥
शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निं मरुतो गणेन ।
कविर्गीर्भिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥१७॥
ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्रणीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनुराजति ष्टुप् ॥१८॥
चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत् ।
अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥१९॥
मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम् ।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन् कनिक्रदच्चम्वो३ रा विवेश ॥२०॥

---

१७ मरुत् लोग, शिशुके समान, प्रकट और सबके अभिलषणीय सोमको शोधित करते हैं। वे वाहक सोमको सप्तसंख्यक गणके द्वारा अलङ्कृत करते हैं। क्रान्तकर्मा और कवि-कार्यके द्वारा कविशब्द-वाच्य सोम, शब्द करते हुए, स्तुतिके साथ पवित्रको लाँघकर जाते हैं।

१८ ऋषियोंके समान मनवाले, सबको देखनेवाले, सूर्यके संभक्त, अनेक स्तुतियोंवाले, कवियोंमें शब्द-विन्यास-कर्त्ता और पूज्य सोम द्युलोकमें रहनेकी इच्छा करते हुए, स्तुत होते हुए और विराजमान इन्द्रको प्रकाशित करते हैं।

१९ अभिषवण-फलकोंपर वर्त्तमान, प्रशंसनीय, समर्थ, पात्रोंमें विहरण करनेवाले, आयुधोंका धारण करनेवाले, जलप्रेरक, अन्तरीक्षका सेवन करनेवाले और महान् सोम चतुर्थचन्द्र-धामका सेवन करते हैं।

२० अलङ्कृत मनुष्यके समान, अपने शरीरके शोधक, धनदानके लिये वेगवान् अश्वके समान चलनेवाले, वृषभके समान शब्द करनेवाले और पात्रमें जानेवाले सोम, शब्द करते हुए, अभिषवण-फलकोंपर बैठते हैं।

पवस्वेन्दो पवमानो महोभिः कनिक्रदत् परि वाराण्यर्ष ।
क्रीळञ्चम्वो३ रा विश पूयमान इन्द्रं ते रसो मदिरो ममत्तु ॥२१॥
प्रास्य धारा बृहतीरसृग्रन्नक्तो गोभिः कलशाँ आ विवेश ।
साम कृण्वन्त्सामन्यो विपश्चित् क्रन्दन्नेत्यभि सख्युर्न जामिम् ॥२२॥
अपघ्नन्नेषि पवमान शत्रून् प्रियां न जारो अभिगीत इन्दुः ।
सीदन्वनेषु शकुनो न पत्वा सोमः पुनानः कलशेषु सत्ता ॥२३॥
आ ते रुचः पवमानस्य सोम योषेव यन्ति सुदुघाः सुधाराः ।
हरिरानीतः पुरुवारो अप्स्वचिक्रदत् कलशे देवयूनाम् ॥२४॥

२१ सोम, ऋत्विकोंके द्वारा शोधित होकर तुम क्षरित होओ । बार-बार शब्द करते हुए मेषलोममय पात्रमें जाओ । अभिषवण-फलकोंपर क्रीड़ा करते हुए पात्रोंमें पैठो । तुम्हारा मदकर रस इन्द्रको प्रमत्त करे ।

२२ सोमकी महती धाराएँ बनायी जा रही हैं । गोरससे मिश्रित होकर सोम द्रोणकलसमें गये । सोम गान करनेमें कुशल हैं; इसलिये गाते हुए विद्वान् सोम वैसे ही पात्रोंमें जाते हैं, जैसे लम्पट मनुष्य अपने मित्रकी स्त्रीके पास जाता है ।

२३ शोध्यमान सोम, जैसे जार व्यभिचारिणी स्त्रीके पास जाता है, वैसे ही स्तोताओंके द्वारा अभिषुत और पात्रोंमें क्षरणशील सोम, तुम शत्रुओंका विनाश करते हुए आते हो । जैसे उड़ने वाला पक्षी वृक्षोंपर बैठा करता है, वैसे ही शोधित सोम कलसमें बैठते हैं ।

२४ सोम, बच्चोंके लिये दूधका दोहन करनेवाली स्त्रीके समान तुम्हारी यजमानोंका धन दोहन करनेवाली और शोभन धाराओंवाली दीप्तियाँ पात्रोंमें जाती हैं । हरित-वर्ण, लाये गये और ऋत्विकोंके द्वारा बहुधा वरणीय सोम वसतीवरी-जलमें और देवकामी यजमानोंके कलसमें बार-बार शब्द करते हैं ।

# ६ अनुवाक । ९७ सूक्त

पवमान सोम देवता। १—३ तक मैत्रावरुण वसिष्ठ, ४—६ तक इन्द्रपुत्र प्रभृति, ७—९ तक वृषगण, १०—१२ तक मन्यु, १३—१५ तक उपमन्यु, १६—१८ तक व्याघ्रपाद्, १९—२१ तक शक्ति, २२—२४ तक कर्णश्रुत, २५—२७ तक मृळीक, २८—३० तक वसुश्रु (ये सब ऋषि वसिष्ठ गोत्रज हैं), ३१—३३ तक शक्ति-पुत्र पराशर और शेषके आङ्गिरस कुत्स ऋषि हैं। त्रिष्टुप् छन्द।

अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो देवो देवेभिः समपृक्त रसम्।
सुतः पवित्रं पर्येति रेभन्मितेव सद्म पशुमान्ति होता ॥१॥
भद्रा वस्त्रा समन्या वसानो महान् कविर्निवचनानि शंसन्।
आ वच्यस्व चम्वोः पूयमानो विचक्षणो जागृविर्देववीतौ ॥२॥
समु प्रियो मृज्यते सानौ अव्ये यशस्तरो यशसां क्षैतो अस्मे।
अभि स्वर धन्वा पूयमानो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥
प्र गायताभ्यर्चाम देवान्त्सोमं हिनोत महते धनाय।
स्वादुः पवाते अति वारमव्यमा सीदाति कलशं देवयुर्नः ॥४॥

---

१ प्रेरक सुवर्णके द्वारा शोधित और प्रदीप्त-किरण सोम अपने रसको देवोंके पास भेजते हैं। अभिषुत सोम शब्दायमान होकर पवित्रकी ओर उसी प्रकार जाते हैं, जिस प्रकार ऋत्विक् यजमानके पशुवाले और सुनिर्मित यज्ञ-गृहमें जाते हैं।

२ संग्रामके योग्य, आच्छादक और कल्याणकर तेजको धारण करनेवाले, पूज्य, कवि, ऋत्विकोंके वक्तव्योंके प्रशंसक, सर्व-द्रष्टा और जागरणशील सोम, तुम यज्ञमें अभिषवण-फलकोंपर बैठो।

३ यशस्वियोंमें भी यशस्वी, पृथिवीपर उत्पन्न और प्रसन्नतादायक सोम उच्च और मेषलोम-मय पवित्रमें शोधित होते हैं। सोम शोधित होकर तुम अन्तरीक्षमें शब्द करो। मङ्गलमय रक्षणोंसे हमारी रक्षा करो।

४ स्तोताओ, भली भाँति स्तुति करो और देवोंकी पूजा करो। प्रचुर धनकी प्राप्तिके लिये सोमको प्रेरित करो। स्वादुकर सोम मेषलोममय पवित्रमें शोधित होते हैं। देवाभिलाषी सोम कलसमें बैठते हैं।

इन्दुर्देवानामुप सख्यमायन्त्सहस्रधारः पवते मदाय ।
नृभिः स्तवानो अनु धाम पूर्वमगन्निन्द्रं महते सौभगाय ॥५॥
स्तोत्रे राये हरिरर्षा पुनान इन्द्रं मदो गच्छतु ते भराय ।
देवैर्याहि सरथं राधो अच्छा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥
प्र काव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानां जनिमा विवक्ति ।
महिव्रतः शुचिबन्धुः पावकः पदा वराहो अभ्येति रेभन् ॥७॥
प्र हंसासस्तृपलं मन्युमच्छामादस्तं वृषगणा अयासुः ।
आङ्गूष्यं पवमानं सखायो दुर्मर्षं साकं प्र वदन्ति वाणम् ॥८॥
स रंहत उरुगायस्य जूतिं वृथा क्रीलन्तं मिमते न गावः ।
परीणसं कृणुते तिग्मशृङ्गो दिवा हरिर्ददृशे नक्तमृज्रः ॥९॥

---

५ देवोंकी मैत्रीकी प्राप्तिकी इच्छासे अनेक धाराओंवाले सोम कलसमें क्षरित होते हैं । कर्म-निष्ठोंके द्वारा स्तुत होकर सोम प्राचीन धाम (द्युलोक) में जाते हैं । महान् सौभाग्यके लिये वह इन्द्रके पास जाते हैं ।

६ हरित-वर्ण और शोधित सोम, स्तोत्र करनेपर तुम धनके लिये पधारो । तुम्हारा मदकर रस, युद्धके लिये, इन्द्रके पास जाय । देवोंके साथ रथपर बैठकर आओ । तुम हमें कल्याण-वचनोंसे हमारी रक्षा करो ।

७ उशना नामक कविके समान काव्य (स्तोत्र) करते हुए इस मन्त्रके कर्त्ता ऋषि इन्द्रादि देवोंका जन्म भली भाँति जानते हैं । प्रचुरकर्मा, साधुमित्र, पवित्रताके उत्पादक और राज-दिनवाले सोम, शब्द करते हुए, पात्रोंमें जाते हैं ।

८ हंसोंके समान विचारण करनेवाले वृषगण नामके ऋषि लोग शत्रु-बल-भीत होकर क्षिप्रघातक और शत्रुहन्ता सोमको लक्ष्य कर यज्ञ-गृहमें जाते हैं । मित्र-रूप स्तोता लोग स्तोत्र-योग्य, दुर्द्धर्ष और क्षरणशील सोमको लक्ष्य करके वाद्यके साथ गान करते हैं ।

९ सोम शीघ्रगामी हैं । बहुतोंके द्वारा स्तुत्य और अनायास क्रीड़ा करनेवाले सोमका अनुगमन दूसरे लोग नहीं कर सकते । तीक्ष्ण-तेजस्वी सोम अनेक प्रकारके तेज प्रकट करते हैं । अन्तरीक्षमें वर्त्तमान सोम दिनमें हरित-वर्णके दिखाई देते हैं और रातमें सरलगामी और प्रकाशयुक्त दिखाई देते हैं ।

इन्दुर्वाजी पवते गोन्योघा इन्द्रे सोमः सह इन्वन्मदाय ।
हन्ति रक्षो बाधते पर्यरातीर्वरिवः कृण्वन्वृजनस्य राजा ॥१०॥
अध धारया मध्वा पृचानस्तिरो रोम पवते अद्रिदुग्धः ।
इन्दुरिन्द्रस्य सख्यं जुषाणो देवो देवस्य मत्सरो मदाय ॥११॥
अभि प्रियाणि पवते पुनानो देवो देवान्त्स्वेन रसेन पृञ्चन् ।
इन्दुर्धर्माण्यृतुथा वसानो दश क्षिपो अव्यत सानौ ये ॥१२॥
वृषा शोणो अभिकनिक्रदद्गा नदयन्नेति पृथिवीमुत द्याम् ।
इन्द्रस्येव वग्नु रा शृण्व आजौ प्रचेतयन्नर्षति वाचमेमाम् ॥१३॥
रसाय्यः पयसा पिन्वमान ईरयन्नेषि मधुमन्तमंशुम् ।
पवमानः सन्तनिमेषि कृण्वन्निन्द्राय सोम परिषिच्यमानः ॥१४॥

---

१० क्षरणशील, बलवान् और गमनशील सोम इन्द्रके लिये बलकर रसको भेजते हुए उनके मदके लिये क्षरित होते हैं। वह राक्षस-कुलको मारते हैं। वरणीय धन देनेवाले और बलके राजा सोम चारो ओरसे शत्रुओंका संहार करते हैं।

११ पत्थरोंसे अभिषुत और मदकारिणी धाराओंसे देवोंकी पूजा करनेवाले सोम मेष-लोममय पवित्रका व्यवधान करके क्षरित होते हैं। इन्द्रकी मैत्रीको आश्रय करते हुए द्योतमान और मदकर सोम इन्द्रके मदके लिये क्षरित होते हैं।

१२ यथाकाल प्रिय कर्मोंके करनेवाले, शोधित, क्रीड़ाशील, और अपने रससे इन्द्रादि देवोंका पूजन करनेवाले दिव्य सोम क्षरित होते हैं। उन्हें उच्च और मेषलोममय पवित्रपर दस अङ्गुलियाँ भेजती हैं।

१३ जैसे गायोंको देखकर लोहित-वर्ण वृषभ शब्द करता है, वैसे ही शब्द करते हुए सोम द्यावापृथिवीको जाते हैं। युद्धमें, इन्द्रके समान ही, सोमका शब्द सब सुनते हैं। सोम अपना परिचय सबको देते हुए जोरसे बोलते हैं।

१४ सोम, तुम दुग्ध-युक्त, क्षरणशील और शब्द-कर्त्ता हो। तुम मधुर रसको प्राप्त करते हो। सोम, जलसे परिषिक्त और शोधित तुम, अपनी धाराको विस्तृत करके, इन्द्रके लिये जाते हो।

एवा पवस्व मदिरो मदायोदग्राभस्य नमयन् वधस्नैः ।
परि वर्णं भरमाणो रुशन्तं गव्युर्नो अर्ष परि सोम सिक्तः ॥१५॥
जुष्ट्वी न इन्दो सुपथा सुगान्युरौ पवस्व वरिवांसि कृण्वन् ।
घनेव विष्वग्दुरितानि विघ्नन्नधि ष्णुना धन्व सानौ अव्ये ॥१६॥
वृष्टिं नो अर्ष दिव्यां जिगत्नुमिळावतीं शङ्गयीं जीरदानुम् ।
स्तुकेव वीता धन्वा विचिन्वन् बन्धूँरिमाँ अवराँ इन्दो वायून् ॥१७॥
ग्रन्थिं न वि ष्य ग्रथितं पुनान ऋजुं च गातुं वृजिनं च सोम ।
अत्यो न क्रदो हरिरा सृजानो मर्यो देव धन्व पस्त्यावान् ॥१८॥
जुष्टो मदाय देवतात इन्दो परि ष्णुना धन्व सानौ अव्ये ।
सहस्रधारः सुरभिरदब्धः परि स्रव वाजसातौ नृषह्ये ॥१९॥

१५ मदकर सोम, तुम जलग्राही मेघको, वृष्टिके लिये, घातक आयुधोंसे निम्नगामी बनाते हुए, मदके लिये क्षरित होओ। शोभन, श्वेतवर्ण, पवित्रमें अभिषिक्त और हमारी गायकी अभिलाषा करनेवाले सोम, क्षरित होओ।

१६ दीप्त सोम, तुम स्तोत्रसे प्रसन्न होकर और हमारे लिये वैदिक मार्गोंको सुगम कर विस्तृत द्रोणकलसमें क्षरित होओ। घने लोहेके हथियारसे दुष्ट राक्षसोंको मारते हुए उन्नत और मेषलोममय पवित्रमें धाराओंके साथ जाओ।

१७ सोम, द्युलोकोत्पन्न, गमनशील, अन्नवाली, सुखदात्री और दान करनेवाली वृष्टिको बरसाओ। सोम पृथिवी-स्थित वायु प्रेमपात्र पुत्रके समान हैं। इन्हें खोजते-खोजते आओ।

१८ जैसे गाँठको सुलझा कर अलग किया जाता है, वैसे ही मुझे पापोंसे अलग करो। सोम, तुम मुझे सरल मार्ग और बल दो। हरित-वर्ण और पात्रोंमें निर्मित होकर वेगशाली अश्वके समान शब्द करते हो। देव, शत्रु-हिंसक तुम गृहवाले हो। मेरे पास आओ।

१९ तुम पर्याप्त मदवाले हो। देवोंके यज्ञमें और मेषलोममय पवित्रमें, धाराओंके साथ, जाओ। अनेक धाराओंसे युक्त और सुन्दर गन्धसे सम्पन्न होकर मनुष्योंके द्वारा क्रियमाण युद्ध-में, अन्न-लाभके लिये, चारों ओर जाओ।

अरश्मानो ये रथा अयुक्ता अत्यासो न ससृजानास आजौ ।
एते शुक्रासो धन्वन्ति सोमा देवासस्ताँउप याता पिबध्यै ॥२०॥
एवा न इन्दो अभि देववीतिं परि स्रव नभो अर्णश्चमूषु ।
सोमो अस्मभ्यं काम्यं बृहन्तं रयिं ददातु वीरवन्तमुग्रम् ॥२१॥
तक्षद्यदी मनसो वेनतो वाग्ज्येष्ठस्य वा धर्मणिक्षोरनीके ।
आदीमायन् वरमा वावशाना जुष्टं पतिं कलशे गाव इन्दुम् ॥२२॥
प्र दानुदो दिव्यो दानुपिन्व ऋतमृताय पवते सुमेधाः ।
धर्मा भुवद्वृ जन्यस्य राजा प्र रश्मिभिर्दशभिर्भारि भूम ॥२३॥
पवित्रेभिः पवमानो नृचक्षा राजा देवानामुत मर्त्यानाम् ।
द्विता भुवद्रयिपती रयीणामृतं भर सुभृतं चार्विन्दुः ॥२४॥

---

२० जैसे रज्जु-रहित, रथ-शून्य और अबद्ध अश्व, युद्धमें सज्जित करके, शीघ्रताके साथ अपने लक्ष्यको जाते हैं, वैसे ही यज्ञमें निर्मित और दीप्त सोम शीघ्र ही कलसकी ओर जाते हैं। देवो, आनेवाले सोमका पान करनेके लिये पास जाओ।

२१ सोम, हमारे यज्ञको लक्ष्य करके द्युलोकसे रसको चमसोमें गिराओ। सोम अभिलषित, प्रवृद्ध और वीर पुत्र तथा बलिष्ठ धन हमें दें ।

२२ ज्यों ही अभिलषित स्तोताका वचन अन्तःकरणसे निकलता है और ज्यों ही अतीव चमत्कृत याज्ञिक द्रव्य, अनुष्ठान-कालमें, लाया जाता है; त्यों ही गौका दूध अभिलाषाके साथ सोमकी ओर जाता है और उस समय सोम कलशमें अवस्थित करते हैं। सोम सबके प्रेमपात्र स्वामीके समान हैं।

२३ द्युलोकोत्पन्न, धन-दाताओंके मनोरथ-रक्षक और शोभन-बुद्धि सोम सत्य-रूप इन्द्रके लिये अपने रसको गिराते हैं। राजा सोम साधु-बलके धारक हैं। दस अँगुलियाँ प्रचुर परिमाणमें सोम प्रस्तुत करती हैं।

२४ पवित्रमें शोधित, मनुष्योंके दर्शक, देवों और मनुष्योंके राजा और धन-पति—असीम धनके स्वामी सोम देवों और मनुष्योंमें सुन्दर और कल्याणकारी जलको धारण करते हैं। स्तोता लोग

अर्वाँ इव श्रवसे सातिमच्छेन्द्रस्य वायोरभि वीतिमर्ष ।
स नः सहस्रा बृहतीरिषो दा भवा सोम द्रविणोवित् पुनानः ॥२५॥
देवाव्यो नः परिषिच्यमानाः क्षयं सुवीरं धन्वन्तु सोमाः ।
आयज्यवः सुमतिं विश्ववारा होतारो न दिवियजो मन्द्रतमाः ॥२६॥
एवा देव देवताते पवस्व महे सोम प्सरसे देवपानः ।
महश्चिद्धि ष्मसि हिताः समर्ये कृधि सुष्ठाने रोदसी पुनानः ॥२७॥
अश्वो न क्रदो वृषभिर्युजानः सिंहो न भीमो मनसो जवीयान् ।
अर्वाचीनैः पथिभिर्ये रजिष्ठा आ पवस्व सौमनसं न इन्दो ॥२८॥
शतं धारा देवजाता असृग्रन्त्सहस्रमेनाः कवयो मृजन्ति ।
इन्दो सनित्रं दिव आ पवस्व पुर एतासि महतो धनस्य ॥२९॥

२५ सोम, जैसे अश्व युद्धमें जाता है, वैसे ही यजमानोंके अन्नके लिये और इन्द्र-वायुके पानके लिये जाओ। तुम बहुविध और प्रवृद्ध अन्न हमें दो। सोम, शोधित तुम हमारे लिये धन-प्रापक हो।

२६ देवोंके तर्पक, पात्रोंमें सिक्त, शोभन-बुद्धि यजमानके यज्ञ-कर्त्ता, सबके स्वीकार्य, होताओंके समान द्युलोक-स्थित इन्द्रादिकी स्तुति करनेवाले और अतीव मदकर सोम हमें वीर पुत्र और गृह प्रदान करें।

२७ स्तुत्य सोम, तुम्हें देवता लोग पीते हैं। देवोंके द्वारा विस्तृत यज्ञमें, महान् भक्षणके लिये, देवोंके पानके लिये क्षरित होओ। तुम्हारे द्वारा भेजे जाकर हम अमर संग्राममें महाबली शत्रुओंको हरावें। शोधित होकर तुम हमारे लिये द्यावापृथिवीको शोभन निवासवाली करो।

२८ सोम, सिंहके समान शत्रुओंके लिये भयङ्कर, मनसे भी अधिक वेगवाले और सोमाभिषव करनेवाले ऋत्विकोंके द्वारा योजित तुम अश्वके समान शब्द करते हो। दीप्त सोम, जो मार्ग अतीव सरल हैं, उन्हींसे हमारे लिये मनकी प्रसन्नता उत्पन्न करो।

२९ सोम, देवोंके लिये उत्पन्न होकर सोमकी सौ धाराएँ बनायी जा रही हैं। क्रान्तदर्शी लोग सोमकी बहुविध धाराओंको शोधित करते हैं। सोम, हमारे पुत्रोंके लिये द्युलोकसे गुप्त धन भेजो। तुम महान् धनके अग्रगामी हो।

दीवो न सर्गा असस्रृग्रमह्नां राजा न मित्रं प्र मिनाति धीरः ।
पितुर्न पुत्रः क्रतुभिर्यतान आ पवस्व विशे अस्या अजीतिम् ॥३०॥
प्र ते धारा मधुमतीरसृग्रन् वारान् यत् पूतो अत्येष्यव्यान् ।
पवमान पवसे धाम गोनां जज्ञानः सूर्यमपिन्वो अर्कैः ॥३१॥
कनिक्रदद्नु पन्थामृतस्य शुक्रो वि भास्यमृतस्य धाम ।
स इन्द्राय पवसे मत्सरवान् हिन्वानो वाचं मतिभिः कवीनाम् ॥३२॥
दिव्यः सुपर्णोऽव चक्षि सोम पिन्वन् धाराः कर्मणा देववीतौ ।
एन्दो विश कलशं सोमधानं क्रन्दन्निहि सूर्यस्योप रश्मिम् ॥३३॥
तिस्रो वाच ईरयति प्र वह्निॠतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम् ।
गावो यन्ति गोपतिं पृच्छमानाः सोमं यन्ति मतयो वावशानाः ॥३४॥

---

३० जसे दीप्त सूर्यकी दिन करनेवाली किरणें बनायी जाती हैं, वैसे ही सोमकी धाराएँ बनायी जाती हैं। सोम धीर राजा और मित्र हैं। कर्मकर्त्ता पुत्र जैसे पिताको नहीं हराता, वैसे ही सोम, तुम प्रजाको पराजित मत करो।

३१ सोम, जिस समय तुम जलसे मेषलोममय पवित्रको लाँघ कर जाते हो, उस समय तुम्हारी मधुर धाराएँ बनायी जाती हैं। शोध्यमान सोम, गोदुग्धको लक्ष्य करके तुम क्षरित होते हो। उत्पन्न होकर तुम अपने पूजनीय तेजके द्वारा आदित्यको भरपूर करते हो।

३२ अभिषुत सोम सत्यरूप यज्ञके मार्गपर बार-बार शब्द करते हैं। अमर और शुक्लवर्ण सोम, तुम विशेष रूपसे शोभित हो रहे हो। स्तोताओंकी बुद्धिके साथ शब्दका प्रेरण करनेवाले सोम, तुम मदकर होकर इन्द्रके लिये क्षरित होते हो।

३३ सोम, देवोंके यज्ञमें कर्मके द्वारा धाराओंको गिराते हुए तुम द्युलोकोत्पन्न और सुन्दर पतनवाले हो। नीचे देखो। सोम, कलसकी ओर जाओ। शब्द करते हुए तुम प्रेरक सूर्यकी कान्तिको प्राप्त करो।

३४ वहनकर्त्ता यजमान तीनों वेदोंकी स्तुतियाँ करता है। वह यज्ञ-धारक और दृढ़ सोमकी कल्याणकर स्तुतिको प्रेरित करता है। जैसे साँढ़ गायोंकी ओर जाता है, वैसे ही अपने पति सोमको दूधमें मिलानेके लिये गायें सोमके पास जाती हैं। अभिलाषी स्तोता लोग स्तुतिके लिये सोमके पास जाते हैं।

सोमं गावो धेनवो वावशानाः सोमं विप्रा मतिभिः पृच्छमानाः ।
सोमः सुतः पूयते अज्यमानः सोमे अर्कास्त्रिष्टुभः सं नवन्ते ॥३५॥
एवा नः सोम परिषिच्यमान आ पवस्व पूयमानः स्वस्ति ।
इन्द्रमा विश बृहता रवेण वर्धया वाचं जनया पुरन्धिम् ॥३६॥
आ जागृविर्विप्र ऋता मतीनां सोमः पुनानो असदच्चमूषु ।
सपन्ति यं मिथुनासो निकामा अध्वर्यवो रथिरासः सुहस्ताः ॥३७॥
स पुनान उप सूरे न धातोभे अप्रा रोदसी वि ष आवः ।
प्रिया चिद्यस्य प्रियसास ऊती स तू धनं कारिणे न प्र यंसत् ॥३८॥
स वर्धिता वर्धनः पूयमानः सोमो मीढ्वाँ अभि नो ज्योतिषावीत् ।
येना नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः स्वर्विदो अभि गा अद्रिमुष्णन् ॥३९॥

---

३५ प्रसन्नता देनेवाली गायें सोमकी अभिलाषा करती हैं। मेधावी स्तोता लोग स्तुतिके द्वारा सोमको पूछते हैं। गोरसके द्वारा सिक्त और अभिषुत सोम ऋत्विकोंके द्वारा परिपूरित किये जाते हैं। त्रिष्टुप् छन्दवाले मन्त्र सोमसे मिलते हैं।

३६ सोम, पात्रोंमें परिषिक्त और शोधित होकर हमारे लिये कल्याण-पूर्वक क्षरित होओ। महान शब्द करते हुए इन्द्रके पेटमें पैठो। स्तुति-रूप वचनको वर्द्धित करो। हमारे लिये अनेक स्तवोंको विस्तृत करो।

३७ जागरणशील, सत्य स्तोत्रोंके ज्ञाता और शोधित सोम चमसोंमें बैठते हैं। परस्पर मिले हुए, अतीव अभिलाषी, यज्ञके नेता और कल्याण-पाणि पुरोहित लोग जिन सोमको पवित्रमें छूते हैं—

३८ वह शोधित सोम इन्द्रके पास वैसे हो जाते हैं, जैसे वर्ष जाता है। वह द्यावापृथिवीको अपनी महिमासे पूरित करते हैं। सोम स्वतेजसे अन्धकारको दूर करते हैं। जिन प्रिय सोमकी प्रियतम धाराएँ रक्षा करती हैं, वह कर्मचारीके वेतनके समान हमें शीघ्र धन दें।

३९ देवोंके वर्द्धक स्वयं वर्द्धमान, पवित्रमें शोधित और मनोरथोंके सेचक सोम अपने तेजसे हमारी रक्षा करें। सोमपानके द्वारा पणियोंके द्वारा अपहृत गायोंके पद-चिन्होंको जानते हुए, सर्वज्ञ, सूर्य-ज्ञाता ( हमारे ) पितर ( अङ्गिरा लोग ) पशुओंको लक्ष्य करके अन्धकारावृत शिला-समूहोंको सोमके तेजसे देखकर पशुओंको ले आये।

अक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधर्मन् जनयन् प्रजा भुवनस्य राजा ।
वृषा पवित्रे अधि सानौ अव्ये बृहत् सोमो वावृधे सुवान इन्दुः ॥४०॥
महत्तत् सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान् ।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजो जनयत् सूर्ये ज्योतिरिन्दुः ॥४१॥
मत्सि वायुमिष्टये राधसे च मत्सि मित्रावरुणा पूयमानः ।
मत्सि शर्धो मारुतं मत्सि देवान्मत्सि द्यावापृथिवी देव सोम ॥४२॥
ऋजुः पवस्व वृजिनस्य हन्तापामीवां बाधमानो मृधश्च ।
अभिश्रीणन् पयः पयसाभि गोनामिन्द्रस्य त्वं तव वयं सखायः ॥४३॥
मध्वः सूदं पवस्व वस्व उत्सं वीरं च न आ पवस्वा भगं च ।
स्वदस्वेन्द्राय पवमान इन्दो रयिं च न आ पवस्वा समुद्रात् ॥४४॥
सोमः सुतो धारयात्यो न हित्वा सिन्धुर्न निम्नमभि वाज्यक्षाः ।
आ योनिं वन्यमसदत् पुनानः समिन्दुर्गोभिरसरत् समद्भिः ॥४५॥

---

४० जल-वर्षक और राजा सोम विस्तृत और भुवनके जलके धारक अन्तरीक्षमें प्रजाका उत्पादन करते हुए सबको लाँघ जाते हैं। काम-वर्षक, अभिषुत और दीप्त सोम उच्च और मेषलोममय पवित्रमें यथेष्ट बढ़ते हैं।

४१ पूज्य सोमने प्रचुर कार्य किये हैं। जलके गर्भ सोमने देवोंका आश्रय किया। शोधित सोमने इन्द्रके लिये बल धारण किया। सोमने सूर्यमें तेज उत्पन्न किया।

४२ सोम, हमारे धन और अन्नके लिये वायुको प्रमत्त करो। शोधित होकर तुम मित्र और वरुणको तृप्त करते हो। मरुतोंके बल और इन्द्रादिको हृष्ट करते हो। स्तुत्य सोम, द्यावा-पृथिवीको प्रमत्त करो। हमें धन दो।

४३ उपद्रवोंके घातक, वेगशाली राक्षस और हिंसकोंके बाधक सोम, क्षरित होओ। अपने रसको दूधमें मिलाते हुए पात्रोंमें जाते हो। तुम इन्द्रके मित्र हो। सोम, हम तुम्हारे मित्र हों।

४४ सोम, मधुर भाण्डारको क्षरित करो। धनके वर्षक रसको क्षरित करो। हमें वीर पुत्र दो। भजनीय अन्न भी दो। सोम शोधित होकर तुम इन्द्रके लिये रुचिकर होओ। हमारे लिये अन्तरीक्षसे धन दो।

४५ अभिषुत सोम अपनी धारासे, वेगशाली अश्वके समान, जानेवाले हैं। जैसे प्रस्रवणशील नदी नीचे जाती है, वैसे ही सोम कलसको जाते हैं। शोधित सोम वृक्षोत्पन्न कलसमें बैठते हैं। सोम जल और दूधमें मिलाये जाते हैं।

एष स्य ते पवत इन्द्र सोमश्चमूषु धीर उशते तवस्वान् ।
स्वर्चक्षा रथिरः सत्यशुष्मः कामो न यो देवयतामसर्जि ॥४६॥
एष प्रत्नेन वयसा पुनानस्तिरो वर्पांसि दुहितुर्दधानः ।
वसानः शर्म त्रिवरूथमप्सु होतेव याति समनेषु रेभन् ॥४७॥
नू नस्त्वं रथिरो देव सोम परि स्रव चम्वोः पूयमानः ।
अप्सु स्वादिष्ठो मधुमाँ ऋतावा देवो न यः सविता सत्यमन्मा ॥४८॥
अभि वायुं वीत्यर्षा गृणानोऽभि मित्रावरुणा पूयमानः ।
अभी नरं धीजवनं रथेष्टामभीन्द्रं वृषणं वज्रबाहुम् ॥४९॥
अभि वस्त्रा सुवसनान्यर्षाभि धेनूः सुदुघाः पूयमानः ।
अभि चन्द्रा भर्तवे नो हिरण्याभ्यश्वान्रथिनो देव सोम ॥५०॥
अभी नोऽर्ष दिव्या वसून्यभि विश्वा पार्थिवा पूयमानः ।
अभि येन द्रविणमश्नवामाभ्यार्षेयं जमदग्निवन्नः ॥५१॥

---

४६ इन्द्र, अभिलाषी तुम्हारे लिये प्राज्ञ और वेगशाली सोम चमसोंमें क्षरित होते हैं । सर्वदर्शी, रथवाले और यथार्थ वली सोम देवकामी यजमानोंके लिये कामदाताके समान बनाये गये हैं ।

४७ पूर्वकालीन और अन्नरूप धारासे गिरते हुए, सबका दोहन करनेवाली पृथिवीके रूपोंको अपने तेजसे ढकते हुए, शीत, आतप और वर्षाके निवारक यज्ञ-गृहको बनाते हुए तथा जलमें अवस्थिति करते हुए सोम, स्तोत्र-ध्वनि करनेवाले होताके समान, शब्द करते हुए यज्ञोंमें जाया करते हैं ।

४८ अभिलषणीय देव, तुम रथवाले हो । हमारे यज्ञमें अभिषवण-फलकोंपर क्षरित होकर वसतीवरी-जलमें शीघ्र और चारों ओर क्षरित होओ । स्वादिष्ट, मधुर, याज्ञिक और सबके प्रेरक तुम, देवताके समान, सत्य स्तोत्रवाले हो ।

४९ स्तुत होते हुए तुम पानके लिये वायुके पास जाओ । पवित्रमें शोधित होकर तुम पानके लिये मित्र और वरुणके पास जाओ । सबके नेता, वेगशाली और रथपर रहनेवाले अश्विद्वयके पास जाओ । काम-वर्षक और वज्रबाहु इन्द्रके पास भी जाओ ।

५० सोम, हमारे लिये तुम सुन्दर-सुन्दर वस्त्र ले आओ । शोधित होकर तुम हमें मधुर दूध देनेवाली और नवप्रसूता गाय दो । हमारे भरणके लिये आह्लादक सोना हमें दो । स्तुत्य सोम, रथवाले अश्व भी हमें दो ।

५१ सोम, पवित्र द्वारा शोधित होकर तुम द्युलोकोत्पन्न धन हमें दो । पृथिवीपर उत्पन्न धन भी हमें दो । हमें द्रव्य प्राप्त करनेकी शक्ति दो । जमदग्नि ऋषिके समान ऋषि-पुत्रोंका योग्य धन हमें दो ।

अया पवा पवस्वैना वसूनि माँश्चत्व इन्दो सरसि प्र धन्व
ब्रध्नश्चिदत्र वातो न जूतः पुरुमेधश्चित्तकवे नरं दात् ॥५२॥
उत न एना पवया पवस्वाधि श्रुते श्रवाय्यस्य तीर्थे ।
षष्टिं सहस्रा नैगुतो वसूनि वृक्षं न पक्वं धूनवद्रणाय ॥५३॥
महीमे अस्य वृषनाम शूषे माँश्चत्वे वा पृशने वा वधत्रे ।
अस्वापयन्निगुत स्नेहयच्चापामित्राँ अपाचितोऽचेतः ॥५४॥
सं त्री पवित्रा विततान्येष्यन्वेकं धावसि पूयमानः ।
असि भगोऽसि दात्रस्य दातासि मघवा मघवद्भ्य इन्दो ॥५५॥
एष विश्ववित् पवते मनीषी सोमो विश्वस्य भुवनस्य राजा ।
द्रप्साँ ईरयन्विदथेष्विन्दुर्वि वारमव्यं समयाति याति ॥५६॥

---

५२ सोम, शोधित धाराके द्वारा ये सारे धन क्षरित करो । सोम, माननेवाले यजमानोंके वसतीवरी-जलमें जाओ । सबके ज्ञापक और वायुके समान वेगशाली सूर्य और अनेक यज्ञांवाले इन्द्र भी सोमके पास जाते हैं । सोम मुझे कर्मनिष्ठ पुत्र दें । सोम, तुम्हारे द्वारा तृप्त किये गये इन्द्र और सूर्य भी पुत्र दें ।

५३ सोम, सबके द्वारा तुम आश्रयणीय हो। हमारे शब्दतीर्थ ( यज्ञ ) में इस धाराके द्वारा भली भाँती क्षरित होओ । जैसे फल पानेकी इच्छा करनेवाला वृक्षको कँपाता है, वैसे ही शत्रु-घातक सोमने साठ हजार धनोंको, शत्रु-जयके लिये, हमें दिया ।

५४ वाण बरसाना और शत्रुओंको नीचे करना—सोमके ये दो कर्म सुखावह हैं । ये दोनों कर्म अश्व-युद्ध और द्वन्द्व-युद्धमें शत्रु-संहारक होते हैं। इन दनों कर्मोंसे सोमने शब्द करनेवाले शत्रुओंका वध किया । सोमने शत्रुओंको युद्धसे दूर किया। सोम, शत्रुओंको दूर करो । अग्निहोत्र न करनेवालोंको भी दूर करो।

५५ सोम, अग्नि, वायु और सूर्य नामके तीन विस्तृत पवित्रोंको तुम भली भाँति प्राप्त करते हो। शोधित होते हुए तुम मेषलोममय पवित्रमें जाते हो। तुम भजनीय हो। दातव्य धनके दाता हो। सोम, सारे धनियोंसे तुम धनी हो।

५६ सर्वज्ञ, मेधावी और सारे संसारके स्वामी सोम क्षरित होते हैं । यज्ञोंमें रस-कणोंको भेजते हुए सोम मेषलोममय पवित्रमें दोनों ओरसे जाते हैं ।

इन्दुं रिहन्ति महिषा अदब्धाः पदे रेभन्ति कवयो न गृध्राः ।
हिन्वन्ति धीरा दशभिः क्षिपाभिः समञ्जते रूपमपां रसेन ॥५७॥
त्वया वयं पवमानेन सोम भरे कृतं वि चिनुयाम शश्वत् ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥५८॥

## ९८ सूक्त

पवमान सोम देवता। वृषागिर राजाके पुत्र अम्बरीष और भरद्वाज-पुत्र ऋजिश्वा ऋषि। अनुष्टुप् और बृहती छन्द।

अभि नो वाजसातमं रयिमर्ष पुरुस्पृहम् ।
इन्दो सहस्रभर्णसं तुविद्युम्नं विभ्वासहम् ॥१॥
परि ष्य सुवानो अव्ययं रथे न वर्माव्यत ।
इन्दुरभि द्रुणा हितो हियानो धाराभिरक्षाः ॥२॥

---

५७ पूज्य और अहिंसित देव लोग सोमका आस्वादन करते हैं। सोमास्वादन करनेवाले देवता सोमकी धाराके पास शब्द करते हैं। जैसे धनाभिलाषी स्तोता लोग शब्द करते हैं, वैसे ही कर्म-कुशल पुरोहित लोग दस अँगुलियोंसे सोमको प्रेरित करते हैं और जलके द्वारा सोम-रूपको मिश्रित करते हैं।

५८ पवित्रमें संशोधित तुम्हारी सहायतासे हम युद्धमें अनेक कर्त्तव्य कर्मोंको करें। मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और द्युलोक, धनके द्वारा, हमारा मान करें।

१ सोम, बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय, अनेक पोषणोंसे युक्त, अनेक यशवाला, महान्को भी पराजित करनेवाला और बलप्रद पुत्र हमें दो।

२ रथपर स्थित पुरुष जैसे कवचको धारण करता है, वैसे ही निष्पीड़ित सोम मेषलोममय पवित्रपर क्षरित होते हैं। स्तुत सोम काष्ठमय कलससे चालित होकर धारा द्वारा क्षरित होते हैं।

परि ष्य सुवानो अक्षा इन्दुरव्ये मदच्युतः ।
धारा य ऊर्ध्वो अध्वरे भ्राजा नैति गव्ययुः ॥३॥
स हि त्वं देव शश्वते वसु मर्ताय दाशुषे ।
इन्दो सहस्रिणं रयिं शतात्मानं विवाससि ॥४॥
वयं ते अस्य वृत्रहन् वसो वस्वः पुरुस्पृहः ।
नि नेदिष्ठतमा इषः स्याम सुम्नस्याध्रिगो ॥५॥
द्विर्यं पञ्च स्वयशसं स्वसारो अद्रिसंहतम् ।
प्रियमिन्द्रस्य काम्यं प्रस्नापयन्त्यूर्मिणम् ॥६॥
परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान्विश्वाँ इत् परि मदेन सह गच्छति ॥७॥
अस्य वो ह्यवसा पान्तो दक्षसाधनम् ।
यः सूरिषु श्रवो बृहद्दधे स्वर्ण हर्यतः ॥८॥

---

३ निष्पीड़ित सोम, मदके लिये देवोंके द्वारा प्रेरित होकर; मेषलोमके पवित्रमें क्षरित होते हैं। जैसे शोभन दीप्तिसे सोम अन्तरीक्षमें जाते हैं, वैसे ही सबके मुख्य सोम दुग्ध आदिकी इच्छा करके धाराके साथ जाते हैं।

४ सोम, तुम अनेक मनुष्यों और हविर्दाता यजमानके लिये धन देते हो। सोम, तुम अनेक पुत्र-पौत्रोंसे युक्त अनेक-सङ्ख्यक धन मुझे देते हो।

५ शत्रुघातक सोम, हम तुम्हारे हों। वासक सोम, अनेकों द्वारा अभिलषणीय और तुम्हारे द्वारा प्रदत्त धन और अन्नके हम अत्यन्त समीपतम हों। धन-स्वरूप सोम, हम सुखके अत्यन्त समीप हों।

६ कर्म करनेके लिये इधर-उधर जानेवाली भगिनी-स्वरूपा दस अंगुलियाँ यशस्वी, पत्थरोंपर अभिषुत, इन्द्रप्रिय, सबके द्वारा अभिलषित और धारावाले जिन सोमकी वसतीवरीके द्वारा सेवा करती हैं, उनको यजमान शोधित करते हैं।

७ सबके काम्य, हरित-वर्ण और बभ्रु-वर्ण (पिङ्गल-वर्ण) सोमको मेषलोमके द्वारा संशोधित किया जाता है। सोम, अपने मदकर रसके साथ, सारे देवोंके पास जाते हैं।

८ तुम लोग सोमके द्वारा रक्षित होकर बल-साधन रसका पान करो। सूर्यके समान सबके अभिलषणीय सोम स्तोताओंको प्रचुर अन्न देते हैं।

स वां यज्ञेषु मानवी इन्दुर्जनिष्ट रोदसी ।
देवो देवी गिरिष्ठा अस्रेधन्तं तुविष्वणि ॥९॥
इन्द्राय सोम पातवे वृत्रघ्ने परि षिच्यसे ।
नरे च दक्षिणावते देवाय सदनासदे ॥१०॥
ते प्रत्नासो व्युष्टिषु सोमाः पवित्रे अक्षरन् ।
अपप्रोथन्तः सनुतर्हुरश्चितः प्रातस्ताँ अप्रचेतसः ॥११॥
तं सखायः पुरोरुचं यूयं वयं च सूरयः ।
अश्याम वाजगन्ध्यं सनेम वाजपस्त्यम् ॥१२॥

---

## ९९ सूक्त

पवमान सोम देवता। काश्यप रेभ और सूनु ऋषि। बृहती और अनुष्टुप् छन्द।

आ हर्यताय धृष्णवे धनुस्तन्वन्ति पौंस्यम् ।
शुक्रां वयन्त्यसुराय निर्णिजं विपामग्रे महीयुवः ॥१॥

---

९ मनुसे उत्पन्न द्यावापृथिवी, पर्वतवासी सोमने यज्ञमें तुम दोनोंको बनाया। उच्च शब्दवाले यज्ञमें ऋत्विकोंने सोमका अभिषव किया।

१० सोम, वृत्रघ्न इन्द्रके पानके लिये पात्रोंमें सिञ्चित किये जाते हो। ऋत्विकोंको दक्षिणा देनेवाले और देवोंके लिये हवि देनेकी इच्छासे यज्ञ-गृहमें बैठे हुए यजमानको फल देनेके लिये तुम सींचे जाते हो।

११ प्रतिदिन प्रातःकाल प्राचीन सोम पवित्रके ऊपर क्षरित होते हैं। मूर्ख "हुरश्चित्" नामके दस्यु लोग प्रातःकाल सोमको देखकर अन्तर्धान और द्रवीभूत हो गये।

१२ मित्रो, प्राज्ञ तुम और हम शोभित और बलकर तथा सुन्दर गन्धसे युक्त सोमको पियें। हम बलिष्ठ सोमका आश्रय करें।

---

१ सबके काम्य और शत्रुओंको रगड़नेवाले सोमके लिये पौरुष प्रकट करनेवाले धनुष्पर ज्या (गुण) को चढ़ाया जाता है। पुजार्थी ऋत्विक लोग मेधावी देवोंके आगे असुर (बली) सोमके लिये शुक्लवर्ण दशापवित्र (छनना) फैलाते हैं।

अध क्षपा परिष्कृतो वाजाँ अभि प्र गाहते ।
यदी विवस्वतो धियो हरिं हिन्वन्ति यातवे ॥२॥
तमस्य मर्जयामसि मदो य इन्द्रपातमः ।
यं गाव आसभिर्दधुः पुरा नूनं च सूरयः ॥३॥
तं गाथया पुराण्या पुनानमभ्यनूषत ।
उतो कृपन्त धीतयो देवानां नाम बिभ्रतीः ॥४॥
तमुक्षमाणमव्यये वारे पुनन्ति धर्णसिम् ।
दूतं न पूर्वचित्तय आ शासते मनीषिणः ॥५॥
स पुनानो मदिन्तमः सोमश्चमूषु सीदति ।
पशौ न रेत आदधत् पतिर्वचस्यते धियः ॥६॥
स मृज्यते सुकर्मभिर्देवो देवेभ्यः सुतः ।
विदे यदासु सन्ददिर्महीरपो वि गाहते ॥७॥

२ रात्रिके अनन्तर जलके द्वारा अलङ्कृत होकर सोम अन्नोंको लक्ष्य करके जा रहे हैं। सेवक यजमानकी कर्मसाधिका अँगुलियाँ हरितवर्ण सोमको पात्रमें जानेके लिये प्रेरित करती हैं। तभी सोम सवनोंके लिये जाते हैं।

३ जिस रसका इन्द्र पान करते हैं, सोमके उसी रसको हम सुशोभित करते हैं। गमनशील स्तोता लोग पहले और इस समय सोमरसको पीते हैं।

४ उन शोधित सोमको प्राचीन गाथाओंके द्वारा स्तोता लोग स्तुत करते हैं। इधर-उधर जानेवाली अंगुलियाँ देवोंको सोम-रूप हवि देनेमें समर्थ हैं।

५ जलसे सिक्त और सर्वधारक सोमको यजमान मेषलोममय पवित्रपर शोधित करते हैं। मेधावी यजमान सोमकी, दूतके समान, देवोंकी सूचनाके लिये, प्रार्थना करते हैं।

६ अतीव मदकर सोम, शोधित होकर, चमसोंपर बैठते हैं। जैसे साँड़ गायमें रेत देता है, वैसे ही सोम चमसोंपर रस देते हैं। सोम कर्मके स्वामी हैं। वह अभिषुत होते हैं।

७ देवोंके लिये अभिषुत और प्रकाशमान सोमको ऋत्विक् लोग शोधित करते हैं। जब सोम प्रजामें धनदाता जाने जाते हैं, तब महान् जलमें स्नान करते हैं।

सुत इन्दो पवित्र आ नृभिर्यतो वि नीयसे ।
इन्द्राय मत्सरिन्तमश्चमूष्वा नि षीदसि ॥८॥

---

## १०० सूक्त

पवमान सोम देवता । रेभ और सूनु ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

अभी नवन्ते अद्रुहः प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।
वत्सं न पूर्व आयुनि जातं रिहन्ति मातरः ॥१॥
पुनान इन्दवा भर सोम द्विबर्हसं रयिम् ।
त्वं वसूनि पुष्यसि विश्वानि दाशुषो गृहे ॥२॥
त्वं धियं मनोऽयुजं सृजा वृष्टिं न तन्यतुः ।
त्वं वसूनि पार्थिवा दिव्या च सोम पुष्यसि ॥३॥
परि ते जिग्युषो यथा धारा सुतस्य धावति ।
रंहमाणा व्यव्ययं वारं वाजीव सानसिः ॥४॥

---

८ सोम, अभिषुत और सर्वत्र विस्तृत होकर तुम ऋत्विक्रोंके द्वारा छनने (पवित्र) में भली भाँति लाये जाते हो । अतीव मदकर तुम इन्द्रके लिये चमसोंपर बैठते हो ।
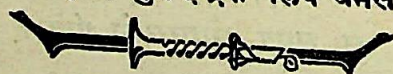
१ जैसे गायें प्रथम आयुमें उत्पन्न बछड़ेको चाटती हैं, वैसे ही द्रोह-शून्य जल इन्द्रके प्रिय और सबके अभिलषणीय सोमके पास जाता है ।

२ दीप्यमान सोम, शोधित होकर तुम दोनों लोकोंमें बढ़नेवाले धनको हमारे लिये ले आओ । तुम यजमानके घरमें रहकर हविर्दाता यजमानके सारे धनोंकी रक्षा करते हो ।

३ सोम, तुम मनोवेगके समान धाराको उसी प्रकार बनाओ, जिस प्रकार मेघ वृष्टिको बनाता है । सोम, तुम पार्थिव और द्युलोकोत्पन्न धन देते हो ।

४ शत्रुजेता शूरका अश्व जैसे युद्धमें दौड़ता है, वैसे ही तुम्हारी भजनीय और वेगवाली धारा मेषलोममय पवित्रपर दौड़ती है ।

कृत्वे दक्षाय नः कवे पवस्व सोम धारया ।
इन्द्राय पातवे सुतो मित्राय वरुणाय च ॥५॥
पवस्व वाजसातमः पवित्रे धारया सुतः ।
इन्द्राय सोम विष्णवे देवेभ्यो मधुमत्तमः ॥६॥
त्वां रिहन्ति मातरो हरिं पवित्रे अद्रुहः ।
वत्सं जातं न धेनवः पवमान विधर्मणि ॥७॥
पवमान महि श्रवश्चित्रेभिर्यासि रश्मिभिः ।
शर्धन्तमांसि जिघ्नसे विश्वानि दाशुषो गृहे ॥८॥
त्वं द्यां च महिव्रत पृथिवीं चाति जभ्रिषे ।
प्रति द्रापिममुञ्चथाः पवमान महित्वना ॥९॥

---
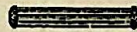
५ क्रान्तदर्शी सोम, इन्द्र, मित्र और वरुणके पानके लिये अभिषुत तुम हमारे ज्ञान और बलके लिये धारासे बहो ।

६ सोम, अत्यन्त अन्नदाता और अभिष्टुत तुम पवित्रमें धारासे गिरो। सोम, तुम इन्द्र, विष्णु और अन्य देवोंके लिये मधुर बनो ।

७. सोम, जैसे बछड़ोंको गायें चाटती हैं, वैसे ही हविर्धारक यज्ञमें द्रोह-शून्य और मातरूप जल हरितवर्ण तुम्हें चाटता है ।

८ सोम, तुम महान् और श्रयणीय अन्तरीक्षको नानाविध किरणोंके साथ जाते हो। वेगवान् तुम हविर्दाता यजमानके गृहमें रहकर सारे अन्धकारोंको नष्ट करते हो ।

९ महान् कर्मवाले सोम, तुम द्यावापृथिवीको धारण करते हो । क्षरणशील सोम, महिमासे युक्त होकर तुम कवचको धारण करते हो ।

---

# चतुर्थ अध्याय समाप्त

# पञ्चम अध्याय

## १०१ सूक्त

पवमान सोम देवता । १—३ तकके श्यावाश्वके पुत्र अन्धीगु, ४—६ तकके नहुष-पुत्र ययाति, ७—९ तकके मनु-पुत्र नहुष, १०—१२ तकके सांवरणके पुत्र मनु और १३—१६ तकके वाक्‌पुत्र विश्वामित्र वा प्रजापति ऋषि हैं । गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

पुरोजिती वो अन्धसः सुताय मादयित्नवे ।
अप श्वानं श्नथिष्टन सखायो दीर्घजिह्व्यम् ॥१॥
यो धारया पावकया परिप्रस्यन्दते सुतः ।
इन्दुरश्वो न कृत्व्यः ॥२॥
तं दुरोषमभी नरः सोमं विश्वाच्या धिया ।
यज्ञं हिन्वन्त्यद्रिभिः ॥३॥
सुतासो मधुमत्तमाः सोमा इन्द्राय मन्दिनः ।
पवित्रवन्तो अक्षरन्देवान् गच्छन्तु वो मदाः ॥४॥

---

१ मित्रो, अग्रे स्थित भक्षणीय ( अन्न ) सोमके अभिषुत और अत्यन्त मदकर रसके लिये लम्बी जीभवाले कुत्ते वा राक्षसको अलग करो—वह चाटने न पावे ।

२ अभिषुत और कर्मनिष्ठ सोम पाप-शोधक धारासे चारो ओर वैसे ही क्षरित होते हैं, जैसे वेगसे घोड़ा जाता है ।

३ ऋत्विक् लोग दुर्द्धर्ष और भजनीय सोमको, सारी लालसाओंकी इच्छासे, पत्थरोंसे अभिषुत करते हैं ।

४ अतीव मधुर, मदकर और अभिषुत सोम पवित्रमें रहकर इन्द्रके लिये पात्रोंमें क्षरित होते हैं । सोम, तुम्हारा मदकर रस इन्द्रादिके पास जाय ।

इन्दुरिन्द्राय पवत इति देवासो अब्रुवन् ।
वाचस्पतिर्मखस्यते विश्वस्येशान ओजसा ॥५॥
सहस्रधारः पवते समुद्रो वाचमीङ्खयः ।
सोमः पती रयीणां सखेन्द्रस्य दिवेदिवे ॥६॥
अयं पूषा रयिर्भगः सोमः पुनानो अर्षति ।
पतिर्विश्वस्य भूमनो व्यख्यद्रोदसी उभे ॥७॥
समु प्रिया अनूषत गावो मदाय घृष्वयः ।
सोमासः कृण्वते पथः पवमानास इन्दवः॥ ८॥
य ओजिष्ठस्तमा भर पवमान श्रवाय्यम् ।
यः पञ्च चर्षणीरभि रयिं येन वनामहै ॥९॥
सोमाः पवन्त इन्दवोऽस्मभ्यं गातुवित्तमाः ।
मित्राः सुवाना अरेपसः स्वाध्यः स्वर्विदः ॥१०॥
सुष्वाणासो व्यद्रिभिश्चिताना गोरधि त्वचि ।
इषमस्मभ्यमभितः समस्वरन् वसुविदः ॥११॥

---

५ सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं—देवता लोग ऐसा स्तोत्र करते हैं। स्तुतियोंके पालक, शब्द-कारी और अपने बलके द्वारा संसारके प्रभु सोम अतिथियोंके द्वारा पूजाकी अभिलाषा करते हैं।

६ अनेक धाराओंवाले सोम क्षरित होते हैं। सोमसे रस बहता है। सोम स्तुतियोंके प्रेरक हैं, धनके प्रभु हैं और इन्द्रके सखा हैं।

७ पोषक, भजनीय और धन-कारण सोम, शोधित होकर गिरते हैं। सारे प्राणियोंके स्वामी सोम अपने तेजसे द्यावापृथ्वीको प्रकाशित करते हैं।

८ सोमके मदके लिये प्रिय गायें शब्द करती हैं। शोधित सोम रक्षणके लिये मार्ग बना रहे हैं।

९ सोम, तुम्हारा जो ओजस्वी और चमत्कार-पूर्ण रस है, उसे क्षरित करो। रस पाँचो वर्णोंके पास रहता है। उस रससे हम धन प्राप्त करें।

१० पथ-प्रदर्शक, देवोंके मित्र, अभिषुत, पाप-शून्य, दीप्त, शोभन-ध्यान और सर्वज्ञ सोम हमारे लिये आ रहे हैं।

११ गोचर्मपर उत्पन्न, पत्थरोंसे भली भाँति अभिषुत और धनके प्रापक सोम चारो ओर शब्द करते हैं।

एते पूता विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः ।
सूर्यासो न दर्शतासो जिगत्नवो ध्रुवा घृते ॥१२॥
प्र सुन्वानस्यान्धसो मर्तो न वृत तद्वचः ।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः ॥१३॥
आ जामिरत्के अव्यत भुजे न पुत्र ओण्योः ।
सरज्जारो न योषणां वरो न योनिमासदम् ॥१४॥
स वीरो दक्षसाधनो वि यस्तस्तम्भ रोदसी ।
हरिः पवित्रे अव्यत वेधा न योनिमासदम् ॥१५॥
अव्यो वारेभिः पवते सोमो गव्ये अधि त्वचि ।
कनिक्रदद्वृषा हरिरिन्द्रस्याभ्येति निष्कृतम् ॥१६॥

१२ पवित्रमें शोधित, मेधावी, दधि-मिश्रित, जलमें गमनशील और स्थिरतासे वर्त्तमान सोम, सूर्यके समान, पात्रोंमें दर्शनीय होते हैं।

१३ अभिषुत और पीने योग्य सोमका प्रसिद्ध घोष कर्मविघ्नकर्त्ता कुत्तेका विनाश करे। स्तोताओ, नम्रता-शून्य उस कुत्तेको उसी प्रकार मारो, जिस प्रकार भृगुओंने प्राचीन कालमें मख नामक व्यक्तिका वध किया था।

१४ जैसे रक्षक माता-पिताकी बाँहोंमें पुत्र कूद पड़ता है, वैसे ही देवोंके मित्र सोम आच्छादक पवित्रमें ढल पड़ते हैं। जैसे जार व्यभिचारिणी स्त्रीकी प्राप्तिके लिये जाता है, वैसे ही सोम अपने स्थान कलसमें जाते हैं।

१५ बलसाधन वह सोम शक्तिमान् हैं। सोम अपने तेजसे द्यावापृथिवीको आच्छादित करते हैं। जैसे विधाता यजमान अपने गृहमें जाता है, वैसे ही हरित-वर्ण सोम अपने कलसमें सम्बद्ध होते हैं।

१६ सोम मेषलोममय पवित्रसे कलशमें जाते हैं। गोचर्मपर शब्दायमान, काम-वर्षक और हरितवर्ण साम इन्द्रके संस्कृत स्थानको जाते हैं।

# १०२ सूक्त

पवमान सोम देवता। आप्त्यके पुत्र त्रित ऋषि। उष्णिक् छन्द।

क्राणा शिशुर्महीनां हिन्वन्नृतस्य दीधितिम्।
विश्वा परि प्रिया भुवदध द्विता ॥१॥
उप त्रितस्य पाष्योरभक्त यद्गुहा पदम्।
यज्ञस्य सप्त धामभिरध प्रियम् ॥२॥
त्रीणि त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वेरया रयिम्।
मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतुः ॥३॥
जज्ञानं सप्त मातरो वेधामशासत श्रिये।
अयं ध्रुवो रयीणां चिकेत यत् ॥४॥
अस्य व्रते सजोषसो विश्वे देवासो अद्रुहः ॥
स्पार्हा भवन्ति रन्तयो जुषन्त यत् ॥५॥
यमी गर्भमृतावृधो दृशे चारुमजीजनन्।
कविं मंहिष्ठमध्वरे पुरुस्पृहम् ॥६॥

---

१ यज्ञ-कर्त्ता और पूजनीय जलके पुत्र सोम यज्ञ-धारक रसको प्रेरित करते हुए समस्त प्रिय हविको व्याप्त करते हैं। सोम द्यावापृथिवीमें रहते हैं।

२ त्रितके यज्ञमें, हविर्द्धानमें, वर्त्तमान और पाषणके समान सुदृढ़ अभिषवण-फलकपर सोम गये। ऋत्विक् लोग यज्ञ-धारक सात गायत्री आदि छन्दोंमें प्रिय सोमकी स्तुति करते हैं।

३ सोम, त्रितके यज्ञके तीनों सवनोंमें प्रवाहित होओ। सामगानके समय दाता इन्द्रका ले आओ। बुद्धिमान् स्तोता इन्द्रका योजक स्तोत्र करता है।

४ प्रादुर्भूत और कर्मधारक सोमका, यजमानोंके ऐश्वर्यके लिये, मातृरूप गंगा आदि सात नदियाँ वा सात छन्द प्रशंसित करते हैं। सोम धनके निश्चित ज्ञाता हैं।

५ समस्त द्रोह-शून्य देवता सोमके कर्ममें मिलकर अभिलाषी होते हैं। रमणशील देवता अभिषुत सोमकी सेवा करते हैं।

६ यज्ञ-वर्द्धक वसतीवरी-जलने गर्भ-रूप सोमको यज्ञमें, दर्शनार्थ, उत्पन्न किया। सोम सबके कल्याणदाता, क्रान्तप्रज्ञ, पूज्य और बहुतोंके अभिलषणीय हैं।

समीचीने अभि त्मना यह्वी ऋतस्य मातरा ।
तन्वाना यज्ञमानुषग्यदञ्जते ॥७॥
क्रत्वा शुक्रेभिरक्षभिर्ऋणोरप व्रजं दिवः ।
हिन्वन्नृतस्य दीधितिं प्राध्वरे ॥८॥

—०—

## १०३ सूक्त

पवमान सोम देवता। आप्त्य त्रित ऋषि। उष्णिक् छन्द ।

प्र पुनानाय वेधसे सोमाय वच उद्यतम् ।
भृतिं न भरा मतिभिर्जुजोषते ॥१॥
परि वाराण्यव्यया गोभिरञ्जानो अर्षति ।
त्री षधस्था पुनानः कृणुते हरिः ॥२॥
परि कोशं मधुश्चुतमव्यये वारे अर्षति ।
अभि वाणीर्ऋषीणां सप्त नूषत ॥३॥

---

७ परस्पर संगत, महान् और सत्य-यज्ञकी मातृ-रूप द्यावापृथिवीके पास सोम स्वयं आगमन करते हैं। याज्ञिक पुरोहित लोग सोमको जलमें मिलाते हैं।

८ सोम, ज्ञान, दीप्त इन्द्रियों और अपने तेजसे द्युलोकसे अन्धकार-समूहको नष्ट करो। तुम हिंसा-शून्य यज्ञमें, अपने सत्य-धारक रसको प्रेरित करते हो।

---

१ त्रित, तुम पवित्रसे शोधित, कर्म-विधाता और स्तोताओंके साथ प्रसन्नता-दायक सोम-के लिये वैसे ही उद्यत वचन कहो, जैसे नौकर वेतन पाता है।

२ गोदुग्धमें मिश्रित सोम मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं। हरितवर्ण सोम, शोधित होकर द्रोणकलस, आधवनीय और पूतभृत् आदि तीन स्थानोंको बनाते हैं।

३ सोम मेषलोममय पवित्रसे मधुर रसको चुलानेवाले द्रोणकलसमें अपना रस भेजते हैं। सातो छन्द सोमकी स्तुति करते हैं।

परि णेता मतीनां विश्वदेवो अदाभ्यः ।
सोमः पुनानश्चम्वोर्विशद्धरिः ॥४॥
परि दैवीरनु स्वधा इन्द्रेण याहि सरथम् ।
पुनानो वाघद्वाघद्भिरमर्त्यः ॥५॥
परि सप्तिर्न वाजयुर्देवो देवेभ्यः सुतः ।
व्यानशिः पवमानो विधावति ॥६॥

## ७ अनुवाक । १०४ सूक्त

पवमान सोम देवता । कश्यप-पुत्र पर्वत और नारद ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

सखाय आ निषीदत पुनानाय प्रगायत । शिशुं न यज्ञैः परिभूषत श्रिये ॥१॥
समी वत्सं न मातृभिः सृजता गयसा धनम् ।
देवाव्यं मदमभि द्विशवसम् ॥२॥

४ स्तुतियोंके नेता, सबके देव, हरित-वर्ण और शोधित सोम अभिषवण-फलकोंपर बैठते हैं। अभिषव हो जानेपर इन्द्रादि सब देवता अहिंसनीय सोमके पास जाते हैं।

५ सोम, तुम इन्द्रके समान रथपर चढ़कर देव-सेनाके पास जाओ । ऋत्विकोंके द्वारा शोधित और अमर सोम स्तोताओंको धन आदि देते हैं ।

६ अश्वके समान युद्धाभिलाषी दीप्यमान, देवोंके लिये अभिषुत, पात्रोंमें व्यापक और पवित्रसे शोधित सोम चारों ओर दौड़ते हैं।

१ मित्र पुरोहितो, बैठो और शोधित सोमके लिये गाओ । अभिषुत सोमका यज्ञीय हवि आदिसे, शोभाके लिये, वैसे ही अलङ्कृत करो, जैसे बच्चोंको गहनोंसे माँ-बाप विभूषित करते हैं।

२ ऋत्विको, गृह-साधन, देवोंके रक्षक, मद-कारण और अतीव बली सोमको मातृ-रूप जलमें वैसे ही मिलाओ; जैसे बछड़ेको गायसे मिलाया जाता है।

पुनाता दक्षसाधनं यथा शर्धाय वीतये ।
यथा मित्राय वरुणाय शन्तमः ॥३॥

अस्मभ्यं त्वा वसुविदम भ वाणीरनूषत ।
गोभिष्टे वर्णमभि वासयामसि ॥४॥

स नो मदानां पत इन्दो देवप्सरा असि ।
सखेव सख्ये गातुवित्तमो भव ॥५॥

सनेमि कृध्यस्मदा रक्षसं कं चिदत्रिणम् ।
अपादेवं द्वयुमंहो युयोधिनः ॥६॥

## १०५ सूक्त

पवमान सोम देवता । ऋषि और छन्द पूर्ववत् ।

तं वः सखायो मदाय पुनानमभिगायत ।
शिशुं न यज्ञैः स्वदयन्त गूर्तिभिः ॥१॥

---

३ बल-साधन सोमको पवित्रमें शोधित करो । सोम वेग, देवोंके पान तथा मित्र और वरुणके पानके लिये अतीव सुख देते हैं ।

४ सोम, हमें दान दिलानेके लिये धनदाता तुम्हें हमारी वाणी स्तुत करती है । हम तुम्हारे आवरक रसको गोदुग्धमें मिलाते हैं ।

५ मदके स्वामी सोम, तुम्हारा रूप दीप्त है । जैसे मित्र मित्रको सच्चा मार्ग बताता है, वैसे ही तुम हमारे मार्ग-ज्ञापक बनो ।

६ सोम, हमारे साथ पुरानी मैत्री करो । उद्दण्ड, बाहर और भीतर मायावाले तथा पेटू राक्षसको मारो और हमारे पापको काटो ।

---

१ मित्र पुरोहितो, देवोंके मदके लिये सोमको स्तुति करो । जैसे शिशुको अलङ्कृत किया जाता है, वैसे ही गोदुग्ध और स्तुति आदिसे सोमको विभूषित किया जाता है ।

सं वत्सइव मातृभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते ।
देवावीर्मदो मतिभिः परिष्कृतः ॥२॥

अयं दक्षाय साधनोऽयं शर्धाय वीतये । अयं देवेभ्यो मधुमत्तमः सुतः ॥३॥

गोमन्न इन्दो अश्ववत् सुतः सुदक्ष धन्व ।
शुचिं ते वर्णमधि गोषु दीधरम् ॥४॥

स नो हरीणां पत इन्दो देवप्सरस्तमः ।
सखेव सख्ये नर्यो रुचे भव ॥५॥

सनेमि त्वमस्मदाँ अदेवं कंचिदत्रिणम् ।
साह्वाँ इन्दो परि बाधो अप द्वयुम् ॥६॥



## १०६ सूक्त

पवमान सोम देवता । १—३ तकके चक्षुः पुत्र अग्नि, ४—६ तकके मनु-पुत्र चक्षु, ७—९ तकके अप्सु-पुत्र मनु और शेषके अग्नि ऋषि उष्णिक् छन्द ।

इन्द्रमच्छ सुता इमे वृषणं यन्तु हरयः ।
श्रुष्टी जातास इन्दवः स्वर्विदः ॥१॥

---

२ सेना-रक्षक, मदकर, स्तुतियोंके द्वारा अलङ्कृत और प्रेरित सोम जलके द्वारा वैसे ही मिश्रित किये जाते हैं, जैसे माता गौके द्वारा बछड़ा मिलाया जाता है।

३ सोम बलके साधक हैं । वेग और देवोंके भक्षणके लिये अभिषुत सोम अत्यन्त मधुर होते हैं ।

४ सुन्दर बलवाले सोम, अभिषुत होकर तुम यज्ञ-साधक तथा गौ और अश्वसे युक्त धन ले आओ । मैं तुम्हारे रसको दुग्ध आदिमें मिलाता हूँ ।

५ हमारे हरित-वर्ण पशुओंके स्वामी सोम, अत्यन्त दीप्त रूपसे युक्त और ऋत्विकोंके द्वारा नियुक्त तुम हमारे लिये दीप्त किरणोंवाले बनो।

६ सोम, तुम हमसे पुरानी मैत्री करो। देव-शून्य और पेटू राक्षसको हमसे अलग करो। सोम, शत्रुओंको हराते हुए बाधकोंको ताड़ित करो। बाह्य और आभ्यन्तरकी मायाओंसे युक्त राक्षसको हमसे दूर करो।

---

१ शीघ्रदाता, पात्रोंमें क्षरणशील, सर्वज्ञ हरितवर्ण, अभिषुत और काम-सेचक सोम इन्द्रके पास जायँ ।

अयं भराय सानसिरिन्द्राय पवते सुतः ।
सोमो जैत्रस्य चेतति यथा विदे ॥२॥
अस्येदिन्द्रो मदेष्वा ग्राभं गृभ्णीत सानसिम् ।
वज्रं च वृषणं भरत् समप्सुजित् ॥३॥
प्र धन्वा सोम जागृविरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ।
द्युमन्तं शुष्ममा भरा स्वर्विदम् ॥४॥
इन्द्राय वृषणं मदं पवस्व विश्वदर्शतः ।
सहस्रयामा पथिकृद्विचक्षणः ॥५॥
अस्मभ्यं गातुवित्तमो देवेभ्यो मधुमत्तमः ।
सहस्रं याहि पथिभिः कनिक्रदत् ॥६॥
पवस्व देववीतय इन्दो धाराभिरोजसा ।
आ कलशं मधुमान्त्सोम नः सदः ॥७॥

२ संग्रामके लिये आश्रयणीय और अभिषुत सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं। जैसे संसार इन्द्रका जानता है, वैसे ही जयशील इन्द्रको सोम जानते हैं।

३ सोमका मद उत्पन्न होनेपर इन्द्र सबके भजनीय और ग्रहणीय धनुष्को धारण करते हैं। अन्तरीक्षमें "अहि" के जेता इन्द्र वर्षक वज्रको धारण करते हैं।

४ सोम, तुम जागरणशील हो। क्षरित होओ। सोम, इन्द्रके किये पात्रोंमें क्षरित होओ। दीप्ति-युक्त, सर्वज्ञ और शत्रु-शोधक बलको ले आओ।

५ तुम सबके दर्शनीय, बहुमार्ग, यजमानोंके सन्मार्गकर्त्ता और सबके द्रष्टा सोम, तुम वर्षक और मद-कारण रस, इन्द्रके लिये क्षरित होओ

६ सोम, अतीव मार्गप्रदर्शक, देवोंके लिये मधुर और शब्दायमान तुम अनेक मार्गोंसे कलसमें जाओ।

७ सोम, देवोंके भक्षणके लिये बल-पूर्वक धाराओंके द्वारा क्षरित होओ। सोम, तुम मदकर रसवाले हो। कलसपर बैठो।

तव द्रप्सा उदप्रुत इन्द्रं मदाय वावृधुः ।
त्वां देवासो अमृताय कं पपुः ॥८॥
आ नः सुतास इन्दवः पुना धावत रयिम् ।
वृष्टिद्यावो रीत्यापः स्वर्विदः ॥९॥
सोमः पुनान ऊर्मिणाव्यो वारं वि धावति ।
अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥१०॥
धीभिर्हिन्वन्ति वाजिनं वने क्रीळन्तमत्यविम् ।
अभि त्रिपृष्ठं मतयः समस्वरन् ॥११॥
असर्जि कलशाँ अभि मीह्ळे सप्तिर्न वाजयुः ।
पुनानो वाचं जनयन्नसिष्यदत् ॥१२॥
पवते हर्यतो हरिरति ह्वरांसि रंह्या । अभ्यर्षन्स्तोतृभ्यो वीरवद्यशः ॥१३॥
अया पवस्व देवयुर्मधोर्धारा असृक्षत ।
रेभन् पवित्रं पर्येषि विश्वतः ॥१४॥

---

८ तुम्हारा जलसे बहनेवाला रस इन्द्रको वर्द्धित करता है। इन्द्रादि देवता अमर होनेके लिये सुखकर तुम्हें पीते हैं।

९ अभिषव किये जाते हुए और पृथिवीपर जल बरसानेवाले सोम, वृष्टिसे युक्त द्युलोकवाले और सर्वज्ञ सोम, तुम हमारे लिये धन ले आओ।

१० पवित्र; स्तोत्रके आगे शब्द करनेवाले और शोधित सोम अपनी धारासे मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं।

११ बली, जलमें क्रीड़ा करनेवाले और पवित्रको लाँघनेवाले सोमको स्तोता लोग, स्तुतिके द्वारा, वर्द्धित करते हैं। तीन सवनोंवाले सोमको स्तुतियाँ स्तुति करती हैं।

१२ जैसे अश्व युद्धमें प्रस्तुत किया जाता है, वैसे ही अन्नाभिलाषी सोमको कलसमें बनाया जाता है। शोधित सोम शब्द करते हुए पात्रोंमें चूते हैं।

१३ श्लाघनीय और हरितवर्ण सोम साधु वेगसे कुटिल पवित्रको लाँघकर जाते हैं। सोम स्तोताओंको पुत्र-युक्त यश दे रहे हैं।

१४ सोम, देवाभिलाषी होकर तुम धारासे क्षरित होओ। तुम्हारी मदकरी धाराएँ बनायी जाती हैं। शब्दायमान सोम पवित्रकी चारो ओर जाते हैं।

—:०:—

## १०७ सूक्त

पवमान सोम देवता। भरद्वाज, कश्यप आदि सात ऋषि। बृहती, सतोबृहतो, विराट्, द्विपदा आदि छन्द।

परीतो षिंचता सुतं सोमो य उत्तमं हविः।
दधन्वाँ यो नर्यो अप्स्वन्तरा सुषाव सोममद्रिभिः ॥१॥
नूनं पुनानोऽविभिः परि स्रवादब्धः सुरभिन्तरः।
सुते चित्त्वाप्सु मदामो अन्धसा श्रीणन्तो गोभिरुत्तरम् ॥२॥
परि सुवानश्चक्षसे देवमादनः क्रतुरिन्दुर्विचक्षणः ॥३॥
पुनानः सोम धारयापो वसानो अर्षसि।
आ रत्नधा योनिमृतस्य सीदस्युत्सो देव हिरण्ययः ॥४॥
दुहान ऊधर्दिव्यं मधु प्रियं प्रत्नं सधस्थमासदत्।
आ पृच्छ्यं धरुणं वाज्यर्षति नृभिर्धूतो विचक्षणः ॥५॥

---

१ जो सोम देवोंकी उत्तम हवि, मनुष्योंके हितैषी और अन्तरीक्षमें जानेवाले हैं, उन्हें पुरोहितोंने पत्थरोंसे अभिषुत किया। उन अभिषुत सोमको, ऋत्विको, तुम कर्मके अनन्तर जलसे सींचो।

२ सोम, अहिंसनीय सुगन्धि और शोधित सोम, तुम मेषलोममय पवित्रसे क्षरित होओ। अभिषव हो जानेपर दूध आदि और सत्तूमें सोमको मिलाते हुए हम जलमें स्थित तुम्हें भजते हैं।

३ अभिषुत देवोंके तर्पक, कर्त्ता, पात्रोंमें क्षरणशील और सबके द्रष्टा सोम, सबके दर्शनके लिये, क्षरित होते हैं।

४ सोम, शोधित होकर तुम वसती-वरी जलमें मिलाकर धारासे क्षरित होते हो। रत्नदाता तुम सत्य-यज्ञके स्थानमें बैठते हो। दीप्त सोम, तुम स्पन्दनशील और हिरण्मय हो।

५ मदकर, प्रसन्नता-कारक और दिव्य गोस्तनको दूहनेवा े सोम प्राचीन स्थान अन्तरीक्षमें बैठते हैं। कर्मनिष्ठ ऋत्विकोंके द्वारा गृहीत, शोधित और सबके द्रष्टा सोम द्रुतवेगसे यज्ञके अवलम्बन तथा यज्ञकर्त्ता यजमानको अन्न देनेके लिये जाते हैं।

पुनानः सोम जागृविरव्यो वारे परि प्रियः ।
त्वं विप्रो अभवोऽङ्गिरस्तमो मध्वा यज्ञं मिमिक्ष नः ॥६
सोमो मीढ्वान् पवते गातुवित्तम ऋषिर्विप्रो विचक्षणः ।
त्वं कविरभवो देववीतम आ सूर्यं रोहयो दिवि ॥७॥
सोम उ षुवाणः सोतृभिरधि ष्णुभिरवीनाम् ।
अश्वयेव हरिता याति धारया मन्द्रया याति धारया ॥८॥
अनूपे गोमान् गोभिरक्षाः सोमो दुग्धाभिरक्षाः ।
समुद्रं न संवरणान्यग्मन्मन्दी मदाय तोशते ॥९॥
आ सोम सुवानो अद्रिभिस्तिरो वाराण्यव्यया ।
जनो न पुरि चम्वोर्विशद्धरिः सदो वनेषु दधिषे ॥१०॥
स मामृजे तिरो अण्वानि मेष्यो मीह्ळे सप्तिर्न वाजयुः ।
अनुमाद्यः पवमानो मनीषिभिः सोमो विप्रेभिर्ऋक्वभिः ॥११॥

---

६ सोम, जागरणशील, प्रिय और शोधित तुम मेषलोममय पवित्रमें क्षरित होते हो। तुम मेधावी और पितरोंके नेता हो। हमारे यज्ञको तुम अपने मधुर रससे सींचो।

७ मार्गदर्शक, काम-सेचक, सबके प्रदर्शक, मेधावी और सूक्ष्म दर्शक सोम क्षरित होते हैं। तुम क्रान्तप्रज्ञ और अतीव देवकामी हो। द्युलोकमें सूर्यको प्रकट करते हो।

८ ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत होकर सोम उच्च और मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं। अपनी हरितवर्ण और मदकारिणी धारासे सोम द्रोण-कलसमें जाते हैं।

९ गोदुग्धके साथ सोम निम्नस्थ कलसमें क्षरित होते हैं। अपने भिक्षणके लिये सोम दुग्धादिके साथ प्रवाहित होते हैं। जैसे जल समुद्रमें जाता है, वैसे ही संभजनीय और रस-रूप अन्न द्रोण-कलसमें जाता है। मदकर सोम, मदके लिये, अभिषुत किये जाते हैं।

१० पत्थरोंसे अभिषुत होकर तुम मेषलोममय पवित्रका व्यवधान करके क्षरित होते हो। हरित-वर्ण सोम अभिषवण फलकोंके ऊपर स्थित कलसमें वैसे ही पैठते हैं, जैसे मनुष्य नगरमें पैठता है। काष्ठ-निर्मित पात्रोंमें तुम स्थान बनाते ।

११ अन्नाभिलाषी सोम सूक्ष्म मेषलोममय पवित्रका व्यवधान करके क्षरित होते हैं। अनु-मोदनके योग्य, पुरोहितोंके द्वारा शोधित, मेधावीके द्वारा अभिषुत और हरितवर्ण सोम वैसे ही शोधित किये जाते हैं, जैसे लोग जयाभिलाषी अश्वको युद्धमें विभूषित करते हैं।

प्र सोम देववीतये सिन्धुर्न पिप्ये अर्णसा ।
अंशोः पयसा मदिरो न जागृविरच्छा कोशं मधुश्चुतम् ॥१२॥
आ हर्यतो अर्जुने अत्के अव्यत प्रियः सूनुर्न मर्ज्यः ।
तमीं हिन्वन्त्यपसो यथा रथं नदीष्वा गभस्त्योः ॥१३॥
अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम् ।
समुद्रस्याधि विष्टपि मनीषिणो मत्सरासः स्वर्विदः ॥१४॥
तरत्समुद्रं पवमान ऊर्मिणा राजा देव ऋतं बृहत् ।
अर्षन्मित्रस्य वरुणस्य धर्मणा प्र हिन्वान ऋतं बृहत् ॥१५॥
नृभिर्येमानो हर्यतो विचक्षणो राजा देवः समुद्रियः ॥१६॥
इन्द्राय पवते मदः सोमो मरुत्वते सुतः ।
सहस्रधारो अत्यव्यमर्षति तमी मृजन्त्यायवः ॥१७॥

१२ सोम, देवोंके पानके लिये तुम वैसे हो जलसे पूरित कये जाते हो, जैसे जलसे समुद्र पूर्ण किया जाता है। मदकर और जागरणशील तुम लताके रससे रस चुलानेवाले द्रोणकलसमें जाते हो।

१३ स्पृहणीय, प्रसन्नता-कारक और पुत्रके समान शोधनीय सोम शुक्लवर्ण पवित्रको ढकते हैं। जैसे वेगशाली मनुष्य युद्धमें रथको प्रेरित करते हैं, वैसे ही जलमें दोनों हाथोंकी अँगुलियाँ सोमको प्रेरित करती हैं।

१४ गमनशील सोम अपना मदकर रस चारो ओर प्रवाहित करते हैं। अन्तरीक्षके अत्युच्च पवित्रमें विद्वान् मदकर और सबके प्रापक सोम रस प्रवाहित करते हैं।

१५ शोधित, दिव्य और अतीव सत्य-राजा सोम कलसमें, धारासे क्षरित होते हैं। प्रेरित और अत्यन्त सत्य सोम मित्र और वरुणके रक्षणके लिये जाते हैं।

१६ कर्मनिष्ठोंके द्वारा नियत, स्पृहणीय, सूक्ष्म दर्शक, दिव्य, अन्तरीक्षमें उत्पन और राजा सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं।

१७ मदकर और अभिषुत सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं। अनेक धाराओंवाले सोम मेषलोममय पवित्रको लाँघते हैं। पुरोहित लोग सोमका शोधन कर रहे हैं।

पुनानश्चमू जनयन्मतिं कविः सोमो देवेषु रण्यति ।
अपो वसानः परि गोभिरुत्तरः सीदन्वनेष्वव्यत ॥१८॥

तवाहं सोम रारण सख्य इन्दो दिवेदिवे ।
पुरूणि बभ्रो नि चरन्ति मामव परिधीँ रति इहि ॥१९॥

उताहं नक्तमुत सोम ते दिवा सख्याय बभ्र ऊधनि ।
घृणा तपन्तमति सूर्यं परः शकुनाइव पप्तिम ॥२०॥

मृज्यमानः सुहस्त्य समुद्रे वाचमिन्वसि ।
रयिं पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहं पवमानाभ्यर्षसि ॥२१

मृजानो वारे पवमानो अव्यये वृषाव चक्रदो वने ।
देवानां सोम पवमान निष्कृतं गोभिरञ्जानो अर्षसि ॥२२॥

पवस्व वाजसातयेऽभि विश्वानि काव्या ।
त्वं समुद्रं प्रथमो वि धारयो देवेभ्यः सोम मत्सरः ॥२३॥

---

१८ अभिषवण-फलकोंपर शोध्यमान, स्तुतिके उत्पादक और क्रान्तप्रज्ञ सोम इन्द्रादिके पास जाते हैं। जलमें मिलकर और काष्ठ-पात्रोंमें बैठकर उत्कृष्टतर सोम दुग्ध आदिमें मिलाये जाते हैं।

१९ सोम, तुम्हारी मैत्रीमें मैं अनुदिन रमण करता हूं। पिङ्गलवर्ण सोम, तुम्हारे मित्र मुझे अनेक राक्षस बाधा देते हैं। उन्हें मारो।

२० पिङ्गलवर्ण सोम, तुम्हारी मैत्रीके लिये मैं दिन-रात रमण करता हूं। प्रदीप्त हम उज्ज्वल और परम स्थानमें स्थित सूर्यरूप तुम्हें प्राप्त करनेकी चेष्टा करते हैं। जैसे चिड़ियाँ सूर्यका अतिक्रम करती हैं, वैसे ही हम तुम्हारे निकट जानेमें व्यस्त हैं।

२१ शोभन अङ्गुलिवाले सोम, शोध्यमान तुम अन्तरीक्षमें (कलसमें) शब्द भेजते हो। पवमान सोम, स्तोताओंको तुम पिङ्गलवर्ण और बहुतोंके द्वारा स्पृहणीय धन दो।

२२ सोम, वर्षक और जलमें विभूषित तथा मेषलोमके पवित्रमें शोधित सोम जलमें वा कलसमें शब्द करते हैं। सोम, दुग्धमें मिश्रित होकर तुम संस्कृत स्थानमें जाते हो।

२३ सोम, सारे स्तोत्रोंको लक्ष्य करके अन्नलाभके लिये क्षरित होओ। सोम, देवोंके मदकर और उनमें मुख्य तुम कलसको धारण करते हो।

स तू पवस्व परि पार्थिवं रजो दिव्या च सोम धर्मभिः ।
त्वां विप्रासो मतिभिर्विचक्षण शुभ्रं हिन्वन्ति धीतिभिः ॥२४॥
पवमाना असृक्षत पवित्रमति धारया ।
मरुत्वन्तो मत्सरा इन्द्रिया मेधाममि प्रयांसि च ॥२५॥
अपो वसानः परि कोशमर्षतीन्दुर्हियानः सोतृभिः ।
जनयञ्ज्योतिर्मन्दना अवीवशद्गाः कृण्वानो न निर्णिजम् ॥२६॥

## १०८ सूक्त

पवमान सोम देवता।। गौरवीति, शक्ति, उरु, ऋजिश्वा, ऊर्द्ध्वसद्मा, कृतयशा, ऋणञ्चय आदि ऋषि। ककुप्, अयुक् सतोबृहती, गायत्री आदि छन्द ।

पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः ।
महि द्युक्षतमो मदः ॥१॥
यस्य ते पीत्वा वृषभो वृषायतेऽस्य पीता स्वर्विदः ।
स सुप्रकेतो अभ्यक्रमीदिषोऽच्छा वाजं नैतशः ॥२॥

२४ सोम, तुम मर्त्यलोक और दिव्यलोकके प्रति धारक पदार्थोंके साथ क्षरित होओ। सूक्ष्मदर्शक सोम, मेधावी लोग स्तुतियों और अङ्गुलियोंके द्वारा श्वेतवर्ण तुम्हें प्रेरित करते हैं।

२५ शोधित, मरुतोंसे युक्त, गमनशील, मदकर और इन्द्रिय-सेवित सोम स्तुति और अन्नको लक्ष्य करके तथा अपनी धारासे पवित्रको लाँघकर बनाये जाते हैं।

२६ जलमें मिलकर और अभिषवकर्त्ताओंके द्वारा प्रेरित सोम कलसमें जाते हैं। दीप्तिका प्रकाश कर और क्षीर आदिको अपना रूप बनाकर सोम इस समय स्तुतिकी इच्छा करते हैं।

१ सोम, तुम अतीव मधुर और मदकर होकर इन्द्रके लिये क्षरित होओ। तुम अतीव पुत्रदाता, महान्, दीप्त और मदकारण हो।

२ काम-वर्षक इन्द्र तुम्हें पीकर वृषभके समान आचरण करते हैं। सबके दर्शक तुम्हारे पानसे सुन्दर ज्ञानी होकर इन्द्र शत्रुओंके अन्नका उसी भाँति अतिक्रमण करते हैं, जिस भाँति अश्व युद्धमें जाता है।

त्वं ह्यङ्ग दैव्या पवमान जनिमानि द्युमत्तमः ।
अमृतत्वाय घोषयः ॥३॥
येना नवग्वो दध्यङ्ङपोर्णुते येन विप्रास आपिरे ।
देवानां सुम्ने अमृतस्य चारुणो येन श्रवांस्यानशुः ॥४॥
एष स्य धारया सुतोऽव्यो वारेभिः पवते मदिन्तमः ।
क्रीळन्नूर्मिरपामिव ॥५॥
य उस्रिया अप्या अन्तरश्मनो निर्गा अकृन्तदोजसा ।
अभि व्रजं तत्निषे गव्यमश्व्यं वर्मीव धृष्णवा रुज ॥६॥
आ सोता परिषिञ्चताश्वं न स्तोममप्तुरं रजस्तुरम् ।
वनक्रक्षमुदप्रुतम् ॥७॥
सहस्रधारं वृषभं पयोवृधं प्रियं देवाय जन्मने ।
ऋतेन य ऋतजातो विवावृधे राजा देव ऋतं बृहत् ॥८॥

---

३ सोम, अतीव दीप्त देवोंको लक्ष्य करके उनके अमर होनेके लिये शीघ्र शब्द करते हो।

४ अभिनव मार्गसे यज्ञानुष्ठाता अङ्गिराने जिन सोमके द्वारा पणियोंके द्वारा अपहृत गौओंका द्वार खोला था, जिन सोमके द्वारा सारे मेधावियोंने अपहृत गायोंको प्राप्त किया था और जिन सोमके द्वारा इन्द्रादिके सुखमें यज्ञारम्भ होनेपर मङ्गलजनक अमृत-जलके अन्नोंको यजमानोंने प्राप्त किया था, वही सोम देवोंके अमर होनेके लिये शब्द करते हैं।

५ मादकतम जल-सङ्घातके समान क्रीड़ा करनेवाले और अभिषुत सोम मेषलोमके पवित्रसे कलशमें, अपनी धारासे, गिरते हैं।

६ जिन सोमने गमनशील अन्तरीक्षमें स्थित मेघके भीतरसे बलपूर्वक वृष्टि करायी थी, वहीं सोम गौओं और अश्वोंके समूहको व्याप्त करते हैं। शत्रु-धर्षक सोम, कवचधारी शूरके समान असुरोंको मारो।

७ अश्वके समान वेगशाली, स्तुत्य, अन्तरीक्षके जल प्रेरक, तेजके प्रेरक और जल-वर्षक सोमको ऋत्विको, अभिषुत करो और सींचो।

८ अनेक धाराओंवाले, काम-वर्षक, जलवर्द्धक और प्रिय सोमको, देवोंके लिये, अभिषुत करो। जलसे उत्पन्न, राजा, दिव्य, स्तुत्य और महान् सोम जलसे बढ़ते हैं।

अभि द्युम्नं बृहद्यश इषस्पते दिदीहि देव देवयुः ।
वि कोशं मध्यमं युव ॥९॥
आ वच्यस्व सुदक्ष चम्वोः सुतो विशां वह्निर्न विश्पतिः ।
वृष्टिं दिवः पवस्व रीतिमपां जिन्वा गविष्टये धियः ॥१०॥
एतमुत्यं मदच्युतं सहस्रधारं वृषभं दिवो दुहुः ।
विश्वा वसूनि बिभ्रतम् ॥११॥
वृषा वि जज्ञे जनयन्नमर्त्यः प्रतपञ्ज्योतिषा तमः ।
स सुष्टुतः कविभिर्निर्णिजं दधे त्रिधात्वस्य दंससा ॥१२॥
स सुन्वे यो वसूनां यो रायामानेता य इळानाम् ।
सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥१३॥
यस्य न इन्द्रः पिबाद्यस्य मरुतो यस्य वार्यमणा भगः ।
आ येन मित्रावरुणा करामह एन्द्रमवसे महे ॥१४॥

---

९ अन्नपति और स्तुत्य सोम, देवाभिलाषी होकर तुम दिव्य और प्रचुर अन्न हमें दो। अन्तरीक्षस्थ मेघको, वर्षाके लिये, फाड़ो ।

१० सुन्दर बलवाले सोम, अभिषवण-फलकोंपर अभिषुत होकर तुम राजाके समान सारी प्रजाके वाहक हो। पधारो। द्युलोकसे जलका गमन करो। गवाभिलाषी यजमानके कर्मोंको पूरण करो ।

११ मदकर, बहुधार, काम-वर्षक और सारे धनोंके धारक सोमको देवाभिलाषी ऋत्विक् लोग दूहते हैं ।

१२ शब्दको उत्पन्न करनेवाले, अपने तेजसे अन्धकारको दूर करनेवाले, काम-वर्षक और अमर सोमको जाना जाता है । मेधावियोंके द्वारा स्तुत सोम मिलाये जाते हैं । तीनों सवनोंमें याज्ञिक कर्म सोमके द्वारा ही धृत होते हैं ।

१३ धनों, गायों, अन्नों और सुमनुष्ययुक्त गृहोंके लानेवाले सोम ऋत्विकों द्वारा अभिषुत होते हैं ।

१४ उन्हीं सोमका अभिषव किया जाता है, जिन्हें इन्द्र, मरुत्, अर्यमा और भग पीते हैं तथा जिनके द्वारा हम मित्र, वरुण और इन्द्रको अभिमुखीन करते हैं ।

इन्द्राय सोम पातवे नृभिर्यतः स्वायुधो मदिन्तमः । पवस्व मधुमत्तमः ॥१५॥
इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमा विश समुद्रमिव सिन्धवः ।
जुष्टो मित्राय वरुणाय वायवे दिवो विष्टम्भ उत्तमः ॥१६॥

## ०६ सूक्त

पवमान सोम देवता। ईश्वर-पुत्र अग्नि ऋषि। द्विपदा विराट् छन्द।

परि प्र धन्वेन्द्राय सोम स्वादुर्मित्राय पूष्णे भगाय ॥१॥
इन्द्रस्ते सोम सुतस्य पेयाः क्रत्वे दक्षाय विश्वे च देवाः ॥२॥
एवामृताय महे क्षयाय स शुक्रो अर्ष दिव्यः पीयूषः ॥३॥
पवस्व सोम महान्त्समुद्रः पिता देवानां विश्वाभि धाम ॥४॥
शुक्रः पवस्व देवेभ्यः सोम दिवे पृथिव्यै शं च प्रजायै ॥५॥
दिवो धर्तासि शुक्रः पीयूषः सत्ये विधर्मन्वाजी पवस्व ॥६॥

१५ सोम, ऋत्विकोंके द्वारा संयत, सुन्दर आयुधसे युक्त, अतीव मधुर और मदकर होकर तुम इन्द्रके पानके लिये बहो।

१६ सोम, जैसे समुद्रमें नदियाँ पैठती हैं, वैसे ही मित्र, वरुण और वायुके लिये सेवित, द्युलोकके स्तम्भ, सर्वोत्तम और इन्द्रके हृदय-रूप तुम कलसमें पैठो।

१ सोम ७ तुम स्वादु हो। इन्द्र, मित्र, पूषा और भगके लिये क्षरित होओ।

२ प्रज्ञान और बलके लिये अभिषुत तुम्हारे भागका पान इन्द्र करें। सारे देव तुम्हारा पान करें।

३ सोम, तुम प्रदीप्त, दिव्य और देवोंके पानके योग्य हो। अमरण और महान् निवासके लिये क्षरित होओ।

४ सोम, तुम महान् रसोंके प्रवाहक और सबके पालक हो। देवोंके शरीरोंका लक्ष्य करके क्षरित होओ।

५ सोम, दीप्त होकर देवोंके लिये क्षरित होओ और द्यावापृथिवी तथा प्रजाको सुख दो।

६ सोम, तुम दीप्त, पीनेके योग्य ( पातव्य ) और द्युलोकके धारक हो। बली होकर सत्यभूत यज्ञमें क्षरित हो।

पवस्व सोम द्युम्नी सुधारो महावीनामनु पूर्व्यः ॥७॥
नृभिर्येमानो जज्ञानः पूतः क्षरद्विश्वानि मन्द्रः स्वर्वित् ॥८॥
इन्दुः पुनानः प्रजामुराणः करद्विश्वानि द्रविणानि नः ॥९॥
पवस्व सोम क्रत्वे दक्षायाश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥१०॥
तं ते सोतारो रसं मदाय पुनन्ति सोमं महे द्युम्नाय ॥११॥
शिशुं जज्ञानं हरिं मृजन्ति पवित्रे सोमं देवेभ्य इन्दुम् ॥१२॥
इन्दुः पविष्ट चारुर्मदायापामुपस्थे कविर्भगाय ॥१३॥
बिभर्ति चार्विन्द्रस्य नाम येन विश्वानि वृत्रा जघान ॥१४॥
पिबन्त्यस्य विश्वे देवासो गोभिः श्रीतस्य नृभिः सुतस्य ॥१५॥
प्र सुवानो अक्षाः सहस्रधारस्तिरः पवित्रं वि वारमव्यम् ॥१६॥

७ सोम, तुम यशस्वी, शोभन धारावाले और प्राचीन हो। मेषलोमोंसे होकर बहो।

८ कर्मनिष्ठोंके द्वारा नियत, जायमान, पूत पवित्रसे, शोधित प्रसन्न और सर्वज्ञ सोम हमें सारे धन दें।

९ देवोंके वृद्धि-कर्त्ता सोम हमें प्रजा और सारे धन दें।

१० सोम घोड़ोंके समान तुम्हारा मार्जन किया जाता है। वेगशाली तुम ज्ञान, बल और धनके लिये क्षरित होओ।

११ अभिषवकर्त्ता लोग, मदके लिये, तुम्हारे रसको शोधित करते हैं। वे महान् अन्नके लिये सोमका शोधन करते हैं।

१२ जलके पुत्र, जायमान, हरितवर्ण और दीप्त सोमको, देवोंके लिये, ऋत्विक् लोग शोधित करते हैं।

१३ कल्याणरूप और क्रान्तप्रज्ञ सोम जलके स्थान अन्तरीक्षमें, मद और भजनीय धनके लिये, क्षरित होते हैं।

१४ सोम इन्द्रके कल्याणकर शरीरका धारण करते हैं। उसी शरीरसे इन्द्रने सारे पापी राक्षसोंको मारा।

१५ गोदुग्धमें मिश्रित और पुरोहितोंके द्वारा अभिषुत सोमका पान सारे देवता करते हैं।

१६ अभिषुत और बहुधारासे युक्त सोम मेषलोमके लिये पवित्रका व्यवधान करके चारो ओर क्षरित होते हैं।

स वाज्यक्षाः सहस्ररेता अद्भिर्मृजानो गोभिः श्रीणानः ॥१७॥

प्र सोम याहीन्द्रस्य कुक्षा नृभिर्येमानो अद्रिभिः सुतः ॥१८॥

असर्जि वाजी तिरः पवित्रमिन्द्राय सोमः सहस्रधारः ॥१६॥

अञ्जन्त्येनं मध्वो रसेनेन्द्राय वृष्ण इन्दुं मदाय ॥२०॥

देवेभ्यस्त्वा वृथा पाजसेऽपो वसानं हरिं मृजन्ति ॥२१॥

इन्दुरिन्द्राय तोशते नि तोशते श्रीणन्नुग्रो रिणन्नपः ॥२२॥

## ११० सूक्त

पवमान सोम देवता। त्र्यरुण और त्रसदस्यु ऋषि। अनुष्टुप् बृहती और विराट् छन्द।

पर्यू षु प्र धन्व वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः।

द्विषस्तरध्या ऋणया न ईयसे ॥१॥

---

१७ अनेक तेजोंसे युक्त, बली, जलसे शोधित और गोदुग्धमें मिश्रित सोम चारो ओर क्षरित होते हैं।

१८ ऋत्विकोंके द्वारा नियत और पात्रोंके द्वारा अभिषुत सोम, तुम कलसमें जाओ।

१६ पवित्रका व्यवधान करके बली और अनेक धाराओंसे युक्त सोम इन्द्रके लिये बनाये जाते हैं।

२० कामवर्षक इन्द्रकी मत्तताके लिये ऋत्विक् लोग सोमको मधुर रस (गोरस) के साथ मिलाते हैं।

२१ सोम, जलमें मिले और हरितवर्ण तुम्हें, देवोंके पान और बलके लिये, ऋत्विक् लोग शोधित कर रहे हैं।

२२ इन्द्रके लिये यह प्रथम सोमरस प्रस्तुत (अभिषुत) किया जाता है। यह जलको हिलाते और उसके साथ मिलते हैं।

---

१ सोम, अन्न-लाभके लिये युद्धमें जाओ। तुम सहनशील हो। शत्रुओंके पास जाओ। तुम हमारे ऋणोंके परिशोधक हो। तुम शत्रुओंको मारनेके लिये जाते हो।

अनु हि त्वा सुतं सोम मदामसि महे समर्यराज्ये ।
वाजाँ अभि पवमान प्र गाहसे ॥२॥
अजीजनो हि पवमान सूर्यं विधारे शक्मना पयः ।
गोजीरया रंहमाणः पुरन्ध्या ॥३॥
अजीजनो अमृत मर्त्येष्वाँ ऋतस्य धर्मन्नमृतस्य चारुणः ।
सदासरो वाजमच्छा सनिष्यदत् ॥४॥
अभ्यभि हि श्रवसा ततर्दिथोत्सं न कञ्चिज्जनपानमक्षितम् ।
शर्याभिर्न भरमाणो गभस्त्योः ॥५॥
आदीं के चित् पश्यमानास आप्यं वसुरुचो दिव्या अभ्यनूषत ।
वारं न देवः सविता व्यूर्णुते ॥६॥
त्वे सोम प्रथमा वृक्तबर्हिषो महे वाजाय श्रवसे धियं दधुः ।
स त्वं नो वीर वीर्याय चोदय ॥७॥

---

२ सोम, तुम अभिषुत हो। सोम, महान् मनुष्य-समूहवाले राज्यमें हम क्रमशः तुम्हारा स्तोत्र करते हैं। अपने राज्यकी रक्षाके लिये तुम शत्रुओंको लक्ष्य करके जाते हो।

३ सोम, तुमने जल-धारक अन्तरीक्षमें, समर्थ बलसे, सूर्यको उत्पन्न किया है। तुम स्तोताओंको पशु देनेवाले हो। तुम्हारे पास अनेक प्रकारके ज्ञान हैं। तुम वेगशाली हो।

४ अमर सोम, तुमने सत्य और कल्याणभूत जलके धारक अन्तरीक्षमें सूर्यको, मनुष्योंके सामने करनेको, उत्पन्न किया है। भजनशील तुम संग्रामका लक्ष्य करके सदा जाया करते हो।

सोम, जैसे कोई लोगोंके जल पीनेके लिये अक्षय्य जलसे पूर्ण तड़ाग खोदता है अथवा कोई दोनों हाथोंकी अञ्जलि से जल भरता है, वैसे ही तुम अन्न देनेके लिये पवित्रको छेद कर जाते हो।

६ दिव्य और सबके प्रेरक सूर्यने अभी अन्धकार भी नहीं हटाया, तभी देखनेवाले और दिव्यलोकोत्पन्न "वसुरुच्" नामके व्यक्तियोंने अपने बन्धु सोमकी स्तुति करो।

७ सोम, मुख्य और कुश तोड़नेवाले यजमानोंने महान् बल और अन्नके लिये तुममें अपनी बुद्धिको रखा। समर्थ सोम, हमें भी, वीर्य-प्राप्तिके लिये, युद्धमें भेजो।

दिवः पीयूषं पूर्व्यं यदुक्थ्यं महो गाहाद्दिव आ निरधुक्षत ।
इन्द्रमभि जायमानं समस्वरन् ॥८॥

अध यदिमे पवमान रोदसी इमा च विश्वा भुवनाभि मज्मना ।
यूथे न निःष्ठा वृषभो वि तिष्ठसे ॥९॥

सोमः पुनानो अव्यये वारे शिशुर्न क्रीलन् पवमानो अक्षाः ।
सहस्रधारः शतवाज इन्दुः ॥१०॥

एष पुनानो मधुमाँ ऋतावेन्द्रायेन्दुः पवते स्वादुरूर्मिः ।
वाजसनिर्वरिवोविद्वयोधाः ॥११॥

स पवस्व सहमानः पृतन्यून्त्सेधन्रक्षांस्यप दुर्गहाणि ।
स्वायुधः सासह्वान्त्सोम शत्रून् ॥१२॥

---
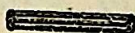
८ द्युलोकस्थित देवोंके पीने योग्य, प्राचीन, प्रशस्य और महान् द्युलोकसे सोमको अपने सम्मुख लोग दूहते हैं। इन्द्रको लक्ष्य करके उत्पन्न सोमकी, स्तोता लोग, स्तुति करते हैं।

९ सोम, जैसे वृषभ गोसमूहमें आधिपत्य करता है, वैसे ही तुम अपने बलसे द्युलोक, भूलोक और सारे प्राणियोंपर राज्य करते हो।

१० अनेक धाराओंवाले, असीम सामर्थ्यवाले, दीप्त और क्षरणशील सोम मेषलोममय पवित्रपर, शिशुके समान, क्रीड़ा करते-करते क्षरित होते हैं।

११ शोधित, मधुरता-युक्त, यज्ञवान्, क्षरणशील, स्वादुकर, रसधारा-सङ्घ, अन्नदाता, धन-प्रापक और आयुर्दाता सोम बहते हैं।

१२ सोम, युद्धकामी शत्रुओंको हराते हुए, दुर्गम राक्षसोंको मारते हुए और शोभन आयुधवाले होकर रिपुविनाश करते हुए बहो।

# १११ सूक्त

पवमान सोम देवता। परुच्छेप-पुत्र अनानत ऋषि। अत्यष्टि छन्द।

अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषांसि तरति
स्वयुग्वभिः सूरो न स्वयुग्वभिः।
धारा सुतस्य रोचते पुनानो अरुषो हरिः।
विश्वा यद्रूपा परियात्यृक्वभिः सप्तास्येभि ऋक्वभिः ॥१॥
त्वं त्यत् पणीनां विदो वसु सं मातृभिर्मर्जयसि
स्व आ दम ऋतस्य धीतिभिर्दमे।
परावतो न साम तद्यत्रा रणन्ति धीतयः।
त्रिधातुभिररुषीभिर्वयोदधे रोचमानो वयो दधे ॥२॥
पूर्वामनु प्रदिशं याति चेकितत् सं रश्मिभिर्यतते दर्शतो रथः।
अग्मन्नुक्थानि पौंस्येन्द्र जैत्राय हर्षयन्।
वज्रश्च यद्भवथो अनपच्युता समत्स्वनपच्युता ॥३॥

---

१ जैसे सूर्य अपनी किरणमालासे अन्धकारको नष्ट करते हैं, वैसे ही शोधित सोम हरितवर्ण और शोभन धारासे सारे राक्षसोंको नष्ट करते हैं। अभिषुत सोमकी धारा दीप्त होती है। शोधित और हरितवर्ण सोम रुचिकर होते हैं। सातो छन्दोंवाली तथा रस हरणशील स्तुतियों और तेजोंसे सोम सारे नक्षत्रोंको व्याप्त करते हैं।

२ सोम, तुमने पणियोंके द्वारा अपहृत गोधनको प्राप्त किया था। यज्ञके धारक जलसे यज्ञ-गृहमें भली भाँति शोधित होते हो। जैसे दूर देशसे साम-ध्वनि सुनायी देती है, वैसे ही तुम्हारा शब्द सुना जाता है। सोमके शब्दमें कर्मनिष्ठ यजमान रमण करते हैं। शोभन सोम तीनों लोकोंके धारक जल और रुचिकर दीप्तिके साथ स्तोताओंको अन्न प्रदान करते हैं।

३ ज्ञाता सोम पूर्व दिशाको जाते हैं। सोम, तुम्हारा सबके लिये दर्शनीय और दिव्य रथ सूर्य्य-किरणोंमें मिलता है। पुरुषोंके उच्चारित स्तोत्र इन्द्रके पास जाते हैं। वे स्तोत्र विजयके लिये इन्द्रको प्रसन्न करते हैं। वज्र भी इन्द्रके पास जाता है। जिस समय युद्ध-क्षेत्रमें सोम और इन्द्र शत्रुओंके द्वारा अजेय होते हैं, उस समय उनकी स्तुति की जाती है।

# ११२ सूक्त

पवमान सोम देवता। आङ्गिरस शिशु ऋषि। पङ्क्ति छन्द।

नानानं वा उ नो धियो वि व्रतानि जनानाम्।
तक्षा रिष्टं रुतं भिषग्ब्रह्मा सुन्वन्तमिच्छतीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१॥
जरतीभिरोषधीभिः पर्णेभिः शकुनानाम्।
कार्मारो अश्मभिर्द्युभिर्हिरण्यवन्तमिच्छतीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥२॥
कारुरहं ततो भिषगुपलप्रक्षिणी नना।
नानाधियो वसूयवोऽनु गाइव तस्थिमेन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३॥
अश्वो वोळ्हा सुखं रथं हसनामुपमन्त्रिणः।
शेपो रोमण्वन्तौ भेदौ वारिन्मण्डूक इच्छतीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥४॥

---

१ हमारे कर्म अनेक प्रकारके हैं। दूसरोंके कर्म भी अनेक प्रकारके हैं। शिल्पी काष्ठ-कार्य चाहता है, वैद्य रोगको चाहता है और ब्राह्मण सोमाभिषवकर्त्ता यजमानको चाहता है। मैं सोमका प्रवाह चाहता हूँ। सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

२ पुराने काठों, पक्षियोंके पक्ष और ( शान चढ़ानेके लिये ) उज्ज्वल शिलाओंसे वाण बनाये जाते हैं। शिल्पी, वाण वेचनेके लिये, स्वर्णवाले धनी पुरुषको खोजते हैं। मैं सोमका क्षरण खोजता हूं। फलतः, सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

२ मैं स्तोता हू, पुत्र भिषक् (वा ब्रह्मा ) है और कन्या यव-भर्जनकारिणी है। हम सब भिन्न-भिन्न कर्म करते हैं। जैसे गायं गोष्ठमें विचरण करती हैं, वैसे ही हम भी, धनकामी होकर, तुम्हारी ( सोमकी ) सेवा करते हैं। सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

४ सुन्दर वहन करनेवाले और कल्याणकर रथकी इच्छा घोड़ा करता है, मर्म-सचिव ( दरबारी ) हास-परिहासकी इच्छा करता है और पुरुषेन्द्रिय रोमोंवाला भेद ( द्विधाभित् ) की कामना करता है। मैं सोम-क्षरण चाहता हूँ। सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

## ११३ सूक्त

पवमान सोम देवता। मारीच कश्यप ऋषि। पङ्क्ति छन्द।

शर्यणावति सोममिन्द्रः पिबतु वृत्रहा।
बलं दधान आत्मनि करिष्यन्वीर्यं महदिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१
आ पवस्व दिशां पत आर्जीकात् सोम मीढ्वः।
ऋतवाकेन सत्येन श्रद्धया तपसा सुत इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥२॥
पर्जन्यवृद्धं महिषं तं सूर्यस्य दुहिताभरत्।
तं गन्धर्वाः प्रत्यगृभ्णन्तं सोमे रसमादधुरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३॥
ऋतं वदन्नृतद्युम्न सत्यं वदन्त्सत्यकर्मन्।
श्रद्धां वदन्त्सोम राजन्धात्रा सोम परिष्कृत इन्द्रायेन्दो परि स्रव ।४॥
सत्यमुग्रस्य बृहतः सं स्रवन्ति संस्रवाः।
सं यन्ति रसिनो रसाः पुनानो ब्रह्मणा हर इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥५॥
यत्र ब्रह्मा पवमान छन्दस्यांम्वाचं वदन्।
ग्राव्णा सोमे महीयते सोमेनानन्दं जनयन्निन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥६॥

---

१ कुरुक्षेत्रके पासवाले शर्यणावत् ताड़ागमें स्थित सोमको इन्द्र पियें, जिससे इन्द्र आत्म-बली और महान् वीर्यवान् हों। इन्द्रके लिये, सोम, क्षरित होओ।

२ काम-सेचक और दिशाओंके स्वामी सोम, आर्जीक देश (व्यास नदीके पासके प्रदेश)-से आकर क्षरित होओ। पवित्र और सत्य स्तुति-वाक्यों तथा श्रद्धा और पुण्य कर्मके साथ तुम्हें अभिषुत किया गया है। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

३ सूर्य-पुत्री (श्रद्धा) मेघके जलसे प्रवृद्ध और महान् सोमको स्वर्गसे ले आयी। गन्धर्वों (वसु आदि) ने सोमको ग्रहण किया और सोममें रस दिया। सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

४ सत्यकर्मा सोम, अभिषूयमाण राजन्, यज्ञस्वामी, इन्दु, यज्ञ, सत्य और श्रद्धाका उच्चारण करते हुए और कर्मधारक यजमानसे अलङ्कृत होकर तुम सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

५ यथार्थ बली और महान् सोमकी क्षरणशील धारा क्षरित हो रही है। रसवान् सोमका रस बह रहा है। हरितवर्ण सोम, ब्राह्मणके द्वारा शोधित होकर तुम इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

६ शोध्यमान सोम, तुम्हारे लिये सातो छन्दोंमें बनायी स्तुतिका उच्चारण करते हुए, पत्थरसे तुम्हारा अभिषव करते हुए और उस अभिषवसे देवोंका आनन्द उत्पन्न करते हुए ब्राह्मण जहाँ पूजित होता है, वहाँ क्षरित होओ।

यत्र ज्योतिरजस्रं यस्मिन्ल्लोके स्वर्हितम् ।
तस्मिन् मां धेहि पवमानामृते लोके अक्षित इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥७॥
यत्र राजा वैवस्वतो यत्रावरोधनं दिवः ।
यत्रामूर्यह्वतीरापस्तत्र मामभृतं कृध्यन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥८॥
यत्रानुकामं चरणं त्रिनाके त्रिदिवे दिवः ।
लोका यत्र ज्योतिष्मन्तस्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥९॥
यत्र कामा निकामाश्च यत्र ब्रध्नस्य विष्टपम् ।
स्वधा च यत्र तृप्तिश्च तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१०॥
यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते ।
कामस्य यत्राप्ताः कामास्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥११॥

---

७ सोम, जिस लोकमें अखण्ड तेज है और जहाँ स्वर्ग लोक है, उसी अमर और ह्रास-शून्य लोकमें मुझे ले चलो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

८ जिस लोकमें वैवस्वत राजा हैं, जहाँ स्वर्गका द्वार है और जहाँ मन्दाकिनी आदि नदियाँ बहती हैं, उस लोकमें मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

९ जिस उत्तम लोकमें (तीसरे लोकमें) सूर्यकी अभिलाषाके अनुरूप किरणें हैं और जहाँ ज्योतिवाले मनुष्य रहते हैं, उस लोकमें मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

१० जिस लोकमें काम्यमान देवता और अवश्य प्रार्थनीय इन्द्रादि रहते हैं, जहाँ सारे कर्मोंके मूल सूर्यका स्थान है और जहाँ "स्वधा" के साथ दिया गया अन्न तथा तृप्ति है, वहाँ मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

११ जिस लोकमें आनन्द, आमोद, आह्लाद आदि हैं और जहाँ सारी कामनाएँ पूर्ण होती हैं, वहाँ मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

# ११४ सूक्त

पवमान सोम देवता । मारीच कश्यप ऋषि । पङ्क्ति छन्द ।

य इन्दोः पवमानस्यानु धामान्यक्रमीत् ।
तमाहुः सुप्रजा इति यस्ते सोमाविधन्मन इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१॥
ऋषे मन्त्रकृतां स्तोमैः कश्यपोद्वर्धयन् गिरः ।
सोमं नमस्य राजानं यो जज्ञे वीरुधां पतिरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥२
सप्त दिशो नानासूर्याः सप्त होतार ऋत्विजः ।
देवा आदित्या ये सप्त तेभिः सोमाभि रक्ष न इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३।
यत्ते राजञ्छृतं हविस्तेन सोमाभि रक्ष नः ।
अरातीवा मा नस्तारीन्मो च नः किं चनाममदिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥४॥

---

१ जिन शोध्यमान सोमके तेजका जो ब्राह्मण अनुगमन करता है, उस अमर व्यक्तिको कल्याणकर पुत्र आदिसे युक्त कहा जाता है और जो सोमके मनके अनुकूल परिचर्या करता है, वह भी ऐसा ही सौभाग्यशाली कहा जाता है । इन्द्रके लिये क्षरित होओ ।

२ ऋषि (कश्यप), मन्त्र-रचयिताओंने जिन स्तुति-वचनोंकी रचना की है, उनका आश्रय करके अपने वाक्यकी वृद्धि करो और सोम राजाको प्रणाम करो। सोम वनस्पतियोंके पालक हैं। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

३ सूर्यके आश्रय-स्थल जो सात दिशाएँ हैं (सोमवाली दिशाको छोड़कर), जो होमकर्त्ता सात पुरोहित हैं और जो सात सूर्य हैं (मार्त्तण्डको छोड़कर), उनके साथ हमारी रक्षा करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

४ राजा सोम, तुम्हारे लिये जिस हवनीय द्रव्यका पाक किया हुआ है, उससे हमारी रक्षा करो। शत्रु हमें न मारे और हमारे वस्त्रका अपहरण न करे। इन्द्रके लिये क्षरित होओ ।

---

# नवम मण्डल समाप्त

# दशम मण्डल

## १ अनुवाक । १ सूक्त

अग्नि देवता । आप्त्य त्रित ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द । *

अग्रे बृहन्नुषसामूर्ध्वो अस्थान्निर्जगन्वान् तमसो ज्योतिषागात् ।
अग्निर्भानुना रुशता स्वङ्ग आ जातो विश्वा सद्मान्यप्राः ॥१॥

स जातो गर्भो असि रोदस्योरग्ने चारुर्विभृत ओषधीषु ।
चित्रः शिशुः परि तमांस्यक्तून् प्र मातृभ्यो अधि कनिक्रदद्गाः ॥२॥

विष्णुरित्था परममस्य विद्वाञ्जातो बृहन्नभि पाति तृतीयम् ।
आसा यदस्य पयो अक्रत स्वं सचेतसो अभ्यर्चन्त्यत्र ॥३॥

---

१ महान् अग्नि उषःकालमें प्रज्वलित होकर ज्वाला-रूपसे रहते हैं। अग्नि अन्धकारसे निकलकर अपने तेजसे आहवनीय रूपमें आते हैं। शोभन ज्वालावाले और कर्मके लिये उत्पन्न अग्नि अपने हिंसक तेजसे सारे यज्ञ-गृहोंको पूर्ण करते हैं।

२ अग्नि, प्रादुर्भूत, कल्याणरूप, अरणियोंसे भली भाँति मथित और ओषधियोंमें वर्त्तमान तुम द्यावापृथिवीके गर्भ हो। चित्रवर्ण और ओषधियोंके शिशु अग्नि, तुम अपने तेजसे काले शत्रुओंको पराजित करते हो। मातृ-रूप वनस्पतियोंके लिये शब्द करते हुए तुम उत्पन्न होते हो।

३ उत्कृष्ट, विद्वान्, प्रादुर्भूत, महान् और व्यापक अग्नि मुझ त्रित (ऋषि)का रक्षण करें। अग्निका जल मुखसे करके अर्थात् अग्निसे जलकी याचना करते-करते यज्ञकर्त्ता, समानमना होकर, अग्निपूजा करते हैं।

---

* जैसे ऋग्वेदके नवम मण्डलके साथ सामवेदका विशेष सम्पर्क है, वैसे ही दशम मण्डलके साथ अथर्ववेदका सम्पर्क है। इसके अनेक सूक्त अथर्वमें हैं। प्रथम मण्डलके समान ही इस मण्डलके कर्त्ता भी नाना ऋषियोंके विविध वंश हैं।

अत उ त्वा पितुभृतो जनित्रीरन्नावृधं प्रति चरन्त्यन्नैः ।
ता ईं प्रत्येषि पुनरन्यरूपा असि त्वं विक्षु मानुषीषु होता ॥४॥

होतारं चित्ररथमध्वरस्य यज्ञस्ययज्ञस्य केतुं रुशन्तम् ।
प्रत्यार्धिं देवस्यदेवस्य मह्ना श्रिया त्वग्निमतिथिं जनानाम् ॥५॥

स तु वस्त्राण्यध पेशनानि वसानो अग्निर्नाभा पृथिव्याः ।
अरुषो जातः पद इलायाः पुरोहितो राजन्यक्षीह देवान् ॥६॥

आ हि द्यावापृथिवी अग्न उभे सदा पुत्रो न मातरा ततन्थ
प्र याह्यच्छोशतो यविष्ठाथा वह सहस्येह देवान् ॥७॥

## २ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द आदि पूर्ववत् ।

पिप्रीहि देवाँ उशतो यविष्ठ विद्वाँ ऋतूँ ऋतुपते यजेह ।
ये दैव्या ऋत्विजस्तेभिरग्ने त्वं होतॄणामस्यायजिष्ठः ॥१॥

४ अग्नि, सारे संसारके धारक और उत्पादक वनस्पति अन्न-वर्धक तुम्हें, अन्नके लिये, सेवित करते हैं। तुम ओषधियों ( वनस्पतियों )के प्रति—शुष्क वनस्पतियोंके प्रति, दाव-रूप होकर जाते हो। तुम मनुष्यों और प्रजाओंमें होम-निष्पादक हो।

५ देवोंके आह्वाता, विविध रथवाले, सारे यज्ञोंकी पताका, श्वेत-वर्ण सारे देवोंके अधिपति, इन्द्रके पास जानेवाले और यजमानोंके पूज्य अग्निका, सम्पत्ति-प्राप्तिके लिये, तुरत हम स्तोत्र करते हैं।

६ दीप्यमान अग्नि, हिरण्यसदृश तेजों और उनके शुक्ल आदि रूपोंको धारण करके, पृथिवीकी नाभि ( उत्तर वेदी ) पर उत्पन्न होकर शोभा धारण करके और आहवनीय स्थान (पूर्व दिशा ) में स्थापित होकर इस यज्ञमें इन्द्रादिकी पूजा करो।

७ अग्नि, तुम सदा वैसे ही द्यावापृथिवीका विस्तार करते हो, जैसे पुत्र माता-पिताका विस्तार करता है। तरुणतम अग्नि, तुम अभिलाषी व्यक्तियोंको लक्ष्य करके जाओ। बल-पुत्र अग्नि, हमारे यज्ञमें इन्द्रादिको ले आओ।

१ युवतम अग्नि, स्तोत्राभिलाषी देवोंको प्रसन्न करो। देव-यज्ञ-कालोंके स्वामी अग्नि, यज्ञ-समयोंको जान करके तुम इस यज्ञमें उनकी पूजा करो। अग्नि, देवोंके पुरोहितोंके साथ पूजन करो। तुम होताओंमें श्रेष्ठ हो।

वेष्यहोत्रमुत पोत्रं जनानां मन्धातासि द्रविणोदा ऋतावा ।
स्वाहा वयं कृणवामा हवींषि देवो देवान्यजत्वग्निरर्हन् ॥२॥
आ देवानामपि पन्थामगन्म यच्छक्नवाम तदनु प्रवोळ्हुम् ।
अग्निर्विद्वान्त्स यजात् सेदु होता सो अध्वरान्त्स ऋतून् कल्पयाति ॥३॥
यद्वो वयं प्रमिनाम व्रतानि विदुषां देवा अविदुष्टरासः ।
अग्निष्टद्विश्वमा पृणाति विद्वान्येभिर्देवाँ ऋतुभिः कल्पयाति ॥४॥
यत् पाकत्रा मनसा दीनदक्षा न यज्ञस्य मन्वते मर्त्यासः ।
अग्निष्टद्धोता क्रतुविद्विजानन्यजिष्ठो देवाँ ऋतुशो यजाति ॥५॥
विश्वेषां ह्यध्वराणामनीकं चित्रं केतुं जनिता त्वा जजान ।
स आ यजस्व नृवतीरनु क्षाः स्पार्हा इषः क्षुमतीर्विश्वजन्याः ॥६॥
यं त्वा द्यावापृथिवी यं त्वापस्त्वष्टा यं त्वा सुजनिमा जजान ।
पन्थामनु प्रविद्वान् पितृयाणं द्युमदग्ने समिधानो वि भाहि ॥७॥

—:०:—

२ अग्नि, तुम होता, पोता, मेधावी, सत्यनिष्ठ और धनद हो । हम देवोंको हवि दो । दीप्यमान और प्रशस्य अग्नि देव-पूजन करें ।

३ हम देवोंके वैदिक मार्गपर जायँ । हम जो कर्म कर सकें, उसकी भली भाँति समाप्ति कर सकें । ज्ञानी अग्नि देव-पूजा करें । मनुष्योंके होम-सम्पादक अग्नि यज्ञों और उनके कालोंको करें ।

४ देवो, हम अज्ञानी हैं । ज्ञानवान् आपके कर्मोंको जानते हुए भी हमने विलुप्त कर दिया । यह सब जाननेवाले अग्नि सारे कर्मोंको पूर्ण करें । यागयोग्य कालोंसे अग्नि देवोंको कल्पित करते हैं ।

५ मनुष्य दुर्बल हैं—उनका मन विशिष्ट ज्ञानसे शून्य है । वे जिस यज्ञ-कर्मको नहीं जानते, उसको जाननेवाले, होम-निष्पादक और अतिशय याज्ञिक अग्नि उस कर्मसे यज्ञकालोंमें देव-यजन करें ।

६ अग्नि सारे यज्ञोंके प्रधान चित्र और पताका-स्वरूप तुम्हें ब्रह्माने उत्पन्न किया । तुम दासादिसे युक्त भूमि दो । स्पृहणीय, स्तुति मन्त्रादिसे युक्त और सर्वहितैषी अन्न देवोंको दो ।

७ अग्नि द्यावापृथिवी, अन्तरीक्ष—इन तीन लोकोंने तुम्हें पैदा किया—शोभनजन्मा प्रजापतिने तुम्हें पैदा किया । अग्नि, तुम पितृमार्गके जानकार और समिध्यमान हो । दीप्तियुक्त होकर विराजते हो ।

## ३ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द पूर्ववत् ।

इनो राजन्नरतिः समिद्धो रौद्रो दक्षाय सुषुमाँ अदर्शि ।
चिकिद्विभाति भासा बृहतासिक्नीमेति रुशतीमपाजन् ॥१॥
कृष्णां यदेनीमभि वर्पसा भूज्जनयन्योषां बृहतः पितुर्जाम् ।
ऊर्ध्वं भानुं सूर्यस्य स्तभायन्दिवो वसुभिररतिर्विभाति ॥२॥
भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात् ।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन्रुशद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात् ॥३॥
अस्य यामासो बृहतो न वग्नूनिन्धाना अग्नेः सख्युः शिवस्य ।
ईड्यस्य वृष्णो बृहतः स्वासो भामासो यामन्नक्तवश्चिकित्रे ॥४॥
स्वना न यस्य भामासः पवन्ते रोचमानस्य बृहतः सुदिवः ।
ज्येष्ठेभिर्यस्तेजिष्ठैः क्रीलुमद्भिर्वर्षिष्ठेभिर्भानुभिर्नक्षति द्याम् ॥५॥

---

१ दीप्त अग्नि, तुम सबके स्वामी हो । हवि लेकर देवोंके पास जानेवाले, संदीप्त, शत्रुओंके लिये भयंकर, वनस्पतियोंमें स्थित और शोभन प्रसववाले अग्नि, यजमानोंकी धन-वृद्धिके लिये सबके द्वारा देखे जाते हैं । सर्वज्ञ अग्नि विभासित होते हैं । महान् तेजके द्वारा सायंकाल, श्वेतवर्ण दीप्तिसे अन्धकार दूर करके, जाते हैं ।

२ पितृरूप आदित्यसे उत्पन्न उषाको प्रकट करते हुए अग्नि कृष्णवर्ण रात्रिको अपने तेजसे अभिभूत करते हैं । गमनशील अग्नि द्युलोकके निवासदाता अपने तेजसे सूर्यकी दीप्तिको ऊपर रोककर शोभा पाते हैं ।

३ कल्याणरूप और भजनीय उषाके द्वारा सेव्यमान अग्नि आये । शत्रुओंके घातक अग्नि अपनी भगिनी उषाके पास जाते हैं । सुन्दर ज्ञान और दीप्त तेजके साथ वर्त्तमान अग्नि श्वेतवर्णके अपने निवारक तेजके द्वारा कृष्णवर्ण अन्धकारको दूर कर रहते हैं ।

४ महान् अग्निकी दीप्त किरणें जा रही हैं । ये किरणें स्तोताओंको नहीं बाधा देतीं । मित्र, कल्याणरूप, भक्तोंके सुखकर, स्तुत्य, काम-वर्षक, महान् और शोभनमुख अग्निकी किरणें अन्धकारको नष्ट करके और तीक्ष्ण होकर, तर्पणके लिये देवोंके पास जाती और प्रसिद्ध होती हैं ।

५ दीप्यमान, महान् और शोभन-दीप्ति अग्निकी किरणें, शब्द करते हुए जाती हैं । अग्नि अतीव प्रशस्त, तेजस्वितम, क्रीड़ाकारी और वृद्धतम अपने तेजसे द्युलोकको व्याप्त करते हैं ।

अस्य शुष्मासो ददृशानपवेर्जेहमानस्य स्वनयन्नियुद्भिः ।
प्रत्नेभिर्यो रुशद्भिर्देवतमो वि रेभद्भिररतिर्भाति विभ्वा ॥६॥
स आ वक्षि महि न आ च सत्सि दिवस्पृथिव्योररतिर्युवत्योः ।
अग्निः सुतुकः सुतुकेभिरश्वै रभस्वद्भी रभस्वाँ एह गम्याः ॥७॥

## ४ सूक्त

देवता, ऋषि, छन्द आदि पूर्ववत् ।

प्र ते यक्षि प्र त इयर्मि मन्म भुवो यथा वन्द्यो नो हवेषु ।
धन्वन्निव प्रपा असि त्वमग्न इयक्षवे पूरवे प्रत्न राजन् ॥१॥
यं त्वा जनासो अभि संचरन्ति गाव उष्णमिव व्रजं यविष्ठ ।
दूतो देवानामसि मर्त्यानामन्तर्महाँश्चरसि रोचनेन ॥२॥

---

६ दृश्यमान आयुधवाले और देवोंके प्रति गमन करनेवाले अग्निकी शोषक और वायु-युक्त किरणें शब्द कर रही हैं । देवोंमें मुख्य, गन्ता, व्यापक और महान् अग्नि प्राचीन, श्वेत-वर्ण और शब्दायमान तेजके द्वारा प्रदीप्त होते हैं ।

७ अग्नि, हमारे यज्ञमें महान् देवोंको ले आओ । परस्परमिलित द्यावापृथिवीके बीचमें सूर्य-रूपसे आनेवाले अग्नि, हमारे यज्ञमें बैठो । स्तोताओंके द्वारा सरलतासे पाने योग्य और वेगवान् अग्नि, शब्दायमान और वेगवान् घोड़ोंके साथ हमारे यज्ञमें पधारो ।

---

१ अग्नि, तुम्हारे लिये मैं हवि देता हूं । तुम्हारे लिये मननीय स्तुति उच्चारित करता हूँ । तुम सबके वन्दनीय हो । हमारे देवाह्वानमें तुम आते हो; इसलिये तुम्हें मैं हवि देता हूँ और स्तुति करता हूँ । प्राचीन राजा अग्नि, सारे संसारके स्वामी अग्नि, तुम यज्ञाभिलाषी मनुष्यके लिये वैसे ही धनदान करके सुखदाता हो, जैसे मरुस्थलमें जलदाता तलैया सुखद है ।

२ तरुणतम अग्नि, जैसे शीतसे आर्त्त गायें उष्ण गोष्ठको जाती हैं, वैसे ही फलप्राप्तिके लिये यजमान तुम्हारी सेवा करते हैं । तुम देवों और मानवोंके दूत हो । महान् तुम द्यावापृथिवीके बीचमें हवि लेकर अन्तरीक्षलोकमें संचरण करते हो ।

शिशुं न त्वा जेन्यं वर्धयन्ती माता बिभर्ति सचनस्यमाना ।
धनोरधि प्रवता यासि हर्यञ्जिगीषसे पशुरिवावसृष्टः ॥३॥
मूरा अमूर न वयं चिकित्वो महित्वमग्ने त्वमङ्ग वित्से ।
शये वव्रिश्चरति जिह्वयादन् रेरिह्यते युवतिं विश्पतिः सन् ॥४॥
कूचिज्जायते सनयासु नव्यो वने तस्थौ पलितो धूमकेतुः ।
अस्नातापो वृषभो न प्र वेति सचेतसो यं प्रणयन्त मर्ताः ॥५॥
तनूत्यजेव तस्करा वनर्गू रशनाभिर्दशभिरभ्यधीताम् ।
इयं ते अग्ने नव्यसी मनीषा युक्ष्वा रथं न शुचयद्भिरङ्गैः ॥६॥
ब्रह्म च ते जातवेदो नमश्चेयं च गीः सदमिद्वर्धनी भूत् ।
रक्षा णो अग्ने तनयानि तोका रक्षोत नस्तन्वो अप्रयुच्छन् ॥७॥

---

३ अग्नि, पुत्रके समान जयशील तुम्हें माता पृथिवी, पोषण करके और सम्पर्ककी इच्छा करके, धारण करती है। अभिलाषी तुम अन्तरीक्षके प्रशस्त मार्गसे यज्ञमें जाते हो। याज्ञिकोंसे हवि लेकर तुम देवोंके पास जानेकी इच्छा वैसे ही करते हो, जैसे विमुक्त पशु गोष्ठमें जानेकी इच्छा करता है।

४ मूढ़ताशून्य और चेतनावान् अग्नि, हम मूर्ख हैं; इसलिये तुम्हारी महिमाको नहीं जानते। अग्नि, अपनी महिमा तुम्हीं जानते हो। अग्नि वनस्पतिके साथ रहते हैं। अपनी जिह्वाके द्वारा हविर्भक्षण करते हुए अग्नि चरते हैं। अग्नि प्रजावर्णके अधिपति होकर आहुतिका आस्वादन करते हैं।

५ नवीन अग्नि कहीं उत्पन्न होते हैं—वह पुराने वनस्पतियोंके ऊपर रहते हैं। पालक; धूमकेतु और श्वेतवर्ण अग्नि विपिनमें निवास करते हैं। स्नानके विना शुद्ध अग्नि, प्यासे वृषभके समान, अरण्यके जलके पास जाते हैं। मनुष्य लोग, समान-मना होकर, अग्निको प्रसन्न करते हैं।

६ अग्नि, जैसे वनगामी और धृष्ट दो चोर वनमें पथिकको रज्जुसे बाँधकर खींचते हैं, वैसे ही, हमारे दोनों हाथ, दसो अँगुलियोंसे, यज्ञ-काष्ठसे अग्निको मथते हैं। तुम्हारे लिये मैं यह नयी स्तुति करता हू। इसे जानकर सबका प्रकाश करनेवाले अपने तेजसे अपनेको यज्ञमें वैसे ही योजित करो, जैसे अश्वोंसे रथको योजित किया जाता है।

७ ज्ञानी अग्नि, तुम्हारे लिये हमने यह यज्ञीय द्रव्य दिया और नमस्कार भी किया। यह स्तुति सदा वर्द्धमाना हो। अग्नि, हमारे पुत्र-पौत्रोंकी रक्षा करो। सावधान होकर हमारे अङ्गोंकी रक्षा करो।

# ५ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द पूर्ववत्।

एकः समुद्रो धरुणो रयीणामस्मद्धृदो भूरिजन्मा विचष्टे ।
सिषक्त्यूधर्निण्योरुपस्थ उत्सस्य मध्ये निहितं पदं वेः ॥१॥
समानं नीलं वृषणो वसानाः सञ्जग्मिरे महिषा अर्वतीभिः ।
ऋतस्य पदं कवयो निपान्ति गुहा नामानि दधिरे पराणि ॥२॥
ऋतायिनी मायिनी सन्दधाते मित्वा शिशुं जज्ञतुर्वर्धयन्ती ।
विश्वस्य नाभिं चरतो ध्रुवस्य कवेश्चित्तन्तु मनसा वियन्तः ॥३॥
ऋतस्य हि वर्तनयः सुजातमिषो वाजाय प्रदिवः सचन्ते ।
अधीवासं रोदसी वावसाने घृतैरन्नैर्वावृधाते मधूनाम् ॥४॥
सप्त स्वसॄररुषीर्वावशानो विद्वान्मध्व उज्जभारा दृशे कम् ।
अन्तर्येमे अन्तरिक्षे पुराजा इच्छन्वव्रिमविदत् पूषणस्य ॥५॥

---

१ अद्वितीय, समुद्रवत् आधार-स्वरूप, धनोंके धारक और अनेक प्रकारके जन्मवाले अग्नि हमारे अभिलषित हृदयोंको जानते हैं। अग्नि अन्तरीक्षके पास वर्त्तमान होकर मेघका सेवन करते हैं। अग्नि, मेघमें वर्त्तमान विद्युत्के पास जाओ।

२ आहुतियोंके सेचक यजमान समान रूपसे नील अग्निको मन्त्रसे आच्छादित करते हुए बड़-वाओं (घोड़ियों) वाले हुए। मेधावी लोग जलके वासस्थान अग्निकी रक्षा करते हैं—स्तुतियोंसे आराधना करते हैं। वे गूढ़ हृदयमें अग्निके प्रधान नामोंकी स्तुति करते हैं।

३ सत्य और कर्मसे युक्त द्यावापृथिवी अग्निको धारण करते हैं। द्यावापृथिवी काल-परिमाण करके प्रशस्य अग्निको वैसे ही उत्पन्न करते हैं, जैसे माता-पिता पुत्रको उत्पन्न करते हैं। सारे स्थावर जङ्गमके नाभिरूप, प्रधान और मेधावी अग्निके विस्तारक वैश्वानर नामक अग्निको मनसे प्राप्त करते हुए हम यजन करते हैं।

४ यज्ञके प्रवर्त्तक, कामनाभिलाषी और प्राचीन यजमान भली भाँति उत्पन्न अग्निकी, बलके लिये, सेवा करते हैं। सारे संसारके आच्छादक द्यावापृथिवीने तीनों लोकोंमें, अग्नि, विद्युत् और सूर्यके रूपसे स्थित अग्निको, मधु, घी, पुरोडाश आदिसे, वर्द्धित किया।

५ स्तोताओंके द्वारा स्तुति किये जाते हुए और सबके जानकार अग्निने शोभन सात भगिनीरूप शिखाओंको, मदकर यज्ञसे सरलतापूर्वक सारे पदार्थोंको देखनेके लिये, ऊपर उठाया। प्राचीन समयमें उत्पन्न अग्निने द्यावापृथिवीके बीचमें उन शिखाओंको नियमित किया। यजमानोंकी इच्छा करनेवाले अग्निने पृथिवीको वृष्टि-स्वरूप रूप प्रदान किया।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरो गात् ।
आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीळे पथां विसर्गे धरुणेषु तस्थौ ॥६॥
असच्च सच्च परमे व्योमन्दक्षस्य जन्मन्नदितेरुपस्थे ।
अग्निर्ह नः प्रथमजा ऋतस्य पूर्व आयुनि वृषभश्च धेनुः ॥७॥

---

६ मेधावी लोगोंने सात मर्यादाओं (ब्रह्महत्या, सुरापन, चौर्य, गुरुपत्नीगमन, पुनः पुनः पापाचरण, पाप करके न कहना आदि ) को छोड़ दिया है। इनमेंसे एकका करनेवाला भी पापी है। पापसे मनुष्यको रोकनेवाले अग्नि हैं। अग्नि समीपवर्ती मनुष्यके स्थानमें आदित्य-किरणोंके विचरण मार्गमें और जलके बीचमें रहते हैं।

७ अग्नि सृष्टिके पहले असत् ( अव्यक्त ) और सृष्टि होनेपर सत् हैं, वह परम धाम( कारणात्मा) में हैं। वह आकाशपर सूर्यरूपसे जनमे हैं। अग्नि हमसे पहले उत्पन्न हुए हैं। वह यज्ञके पहले अवस्थित थे। वह वृषभ भी हैं और गाय भी—स्त्री-पुरुष—दोनों हैं।

# पञ्चम अध्याय समाप्त

# षष्ठ अध्याय

## ६ सूक्त

अग्नि देवता। आप्त्य त्रित ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अयं स यस्य शर्मन्नवोभिरग्नेरेधते जरिताभिष्टौ।
ज्येष्ठेभिर्यो भानुभिर्ऋषूणां पर्येति परिवीतो विभावा ॥१॥
यो भानुभिर्विभावा विभात्यग्निर्देवेभिर्ऋतावाजस्रः।
आ यो विवाय सख्या सखिभ्योऽपरिहृतो अत्यो न सप्तिः ॥२॥
ईशे यो विश्वस्या देववीतेरीशे विश्वायुरुषसो व्युष्टौ।
आ यस्मिन्मना हवींष्यग्नावरिष्टरथः स्कभ्नाति शूषैः ॥३॥
शूषेभिर्वृधो जुषाणो अर्कैर्देवाँ अच्छा रघुपत्वा जिगाति।
मन्द्रो होता जुह्वा यजिष्ठः संमिश्लो अग्निरा जिघर्ति देवान् ॥४॥

---

१ यह वही अग्नि हैं, यज्ञके समय जिनके रक्षणोंसे स्तोता अपने गृहमें बढ़ता है। दीप्तिमान् अग्नि सूर्य-किरणोंसे प्रशस्त तेजसे युक्त होकर सर्वत्र जाते हैं।

२ जो दीप्त अग्नि देवोंके तेजसे दीप्त होते हैं, वह सत्यवान् और अहिंसित हैं। अग्नि मित्र यजमानके लिये मित्रजनोचित कार्य करनेके लिये गमनशील घोड़ेके समान अथक होकर यजमानके पास जाते हैं।

३ अग्नि सारे यज्ञके प्रभु हैं। वह सर्वत्र जानेवाले हैं। उषाके उदय-कालसे ही हवनके लिये यजमानोंके प्रभु हैं। यजमान अग्निमें मनके अनुकूल हवि फकते हैं; इसलिये उनका रथ शत्रु-बलसे अवध्य होता है।

४ अग्नि बलसे वर्द्धित और स्तुतिसे सेवित होकर शीघ्रताके साथ देवोंके पास जाते हैं। अग्नि स्तुत्य, देवोंको बुलानेवाले, प्रधान यज्ञकर्त्ता और देवोंके द्वारा नियुक्त हैं। वह देवोंको हवि देते हैं।

तमुस्रामिन्द्रं न रेजमानमग्निं गीर्भिर्नमोभिरा कृणुध्वम् ।
आ यं विप्रासो मतिभिर्गृणन्ति जातवेदसं जुह्वं सहानाम् ॥५॥
सं यस्मिन्विश्वा वसूनि जग्मुर्वाजे नाश्वाः सप्तीवन्त एवैः ।
अस्मे ऊतीरिन्द्रवाततमा अर्वाचीना अग्न आकृणुष्व ॥६॥
अधा ह्यग्ने मह्ना निषद्या सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूथ ।
तं ते देवासो अनु केतमायन्नधा वर्धन्त प्रथमास ऊमाः ॥७॥

## ७ सूक्त

अग्नि देवता । आप्त्य त्रित ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

स्वस्ति नो दिवो अग्ने पृथिव्या विश्वायुर्धेहि यजथाय देव ।
सचेमहि तव दस्म प्रकेतैरुरुष्या ण उरुभिर्देव शंसैः ॥१॥
इमा अग्ने मतयस्तुभ्यं जाता गोभिरश्वैरभिगृणन्ति राधः ।
यदा ते मर्तो अनु भोगमानड्वसो दधानो मतिभिः सुजात ॥२॥

५ ऋत्विको, तुम भोगोंके दाता और कम्पनशील उन अग्निको, इन्द्रके समान, स्तुतियों और हवियोंसे, हमारे सम्मुख करो, जो देवोंके बुलानेवाले और ज्ञानी हैं और जिनका स्तोत्र मेधावी स्तोता लोग आदरके साथ करते हैं ।

६ अग्नि, जैसे युद्धमें शीघ्र गमनकारी अश्व जाते हैं, वैसे ही तुममें संसारके सारे धन मिलते हैं । अग्नि, इन्द्रकी रक्षा हमारे अभिमुख करो ।

७ अग्नि, तुमने जन्मके साथ ही महत्त्व लाभ किया और स्थान ग्रहण करनेके साथ ही आहुतिके योग्य हो गये । इसलिये तुम्हें देखनेके साथ देवता लोग तुम्हारे पास गये वा तुम्हारे प्रदीप्त होनेके साथ यजमान तुममें हवन करने लगे । उत्तम ऋत्विक् लोग तुमसे रक्षित होकर बढ़ने लगे ।

१ दिव्य अग्नि, तुम द्यावापृथिवीसे हमारे लिये सब तरहका अन्न और कल्याण दो । दर्शनीय अग्नि, हम याज्ञिक हों । अपने अनेक प्रशंसनीय रक्षणोंसे हमारी रक्षा करो ।

२ अग्नि, तुम्हारे लिये ये स्तुतियाँ हमारे द्वारा कही गयी हैं । गौओं और अश्वोंके साथ तुमने हमारे लिये धन दिया है; इसलिये तुम्हारी प्रशंसा की जाती है । जब मनुष्य तुम्हारा दिया भोग्य धन प्राप्त करता है, तब अपने तेजके द्वारा सबका आच्छादन करनेवाले, शोभन कर्मोंके लिये उत्पन्न होनेवाले और हमें धन देनेवाले अग्नि, तुम्हारी स्तुति की जाती है ।

अग्निं मन्ये पितरमग्निमापिमग्निं भ्रातरं सदमित् सखायम् ।
अग्नेरनीकं बृहतः सपर्यन्दिवि शुक्रं यजतं सूर्यस्य ॥३॥
सिध्रा अग्ने धियो अस्मे सनुत्रीर्यन्त्रायसे दम आ नित्यहोता ।
ऋतावा स रोहिदश्वः पुरुक्षुर्द्युभिरस्मा अहभिर्वाममस्तु ॥४॥
द्युभिर्हितं मित्रमिव प्रयोगं प्रत्नमृत्विजमध्वरस्य जारम् ।
बाहुभ्यामग्निमायवोऽजनन्त विक्षु होतारं न्यसादयन्त ॥५॥
स्वयं यजस्व दिवि देव देवान् किन्ते पाकः कृणवदप्रचेताः ।
यथा यज ऋतुभिर्देव देवानेवा यजस्व तन्वं सुजात ॥६॥
भवा नो अग्नेऽवितोत गोपा भवा वयस्कृदुत नो वयोधाः ।
रास्वा च नः सुमहो हव्यदातिं त्रास्वोत नस्तन्वो अप्रयुच्छन् ॥७॥

---

३ मैं अग्निको ही पिता, बन्धु, भ्राता और चिर मित्र मानता हूँ । मैं महान् अग्निके मुखका सेवन वैसे ही करता हूँ, जैसे द्युलोक-स्थित पूजनीय और प्रदीप्त सूर्यमण्डलका कोई सेवन करता है।

४ अग्नि, हमारी की हुई ये स्तुतियाँ निष्पन्न हुई हैं । नित्य होता, देवोंके आह्वाता और हमारे यज्ञगृहमें अवस्थित होकर तुम जिसकी ( मेरी ) रक्षा करते हो, वह ( मैं ) तुम्हारा सानिध्य प्राप्त करके यांज्ञिक बने । मैं लोहितवर्ण अश्व और बहुत अन्न प्राप्त करूँ, ताकि प्रदीप्त दिनोंमें तुम्हें होमीय द्रव्य ( हवि ) प्राप्त हो सके ।

५ दीप्ति-युक्त मित्रके समान योजनीय; प्राचीन ऋत्विक् और यज्ञ-समापक अग्निको यजमानोंने बाहुओंसे उत्पन्न किया है । मनुष्योंने देवोंके आह्वान और यज्ञके लिये अग्निको ही निरूपित किया है ।

६ दिव्य अग्नि, द्युलोकमें स्थित देवोंका स्वयं यज्ञ करो । अपक्व और निर्बोध मनुष्य तुम्हारे विना क्या करेगे ? सुजन्मा देव, जैसे तुमने समय-समयपर देवोंका यजन किया है, वैसे ही अपना भी करो ।

७ अग्नि, तुम हमें दृष्ट और अदृष्ट भयोंसे बचाओ । अन्नके कर्त्ता और दाता भी बनो । सुन्दर पूजनीय अग्नि, हवन करनेकी सामग्री हमें दो । हमारे शरीरकी रक्षा करो ।

# ८ सूक्त

अग्नि और इन्द्र देवता । त्वष्टृ-पुत्र त्रिशिरा ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र केतुना बृहता यात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति ।
दिवश्चिदन्ताँ उपमाँ उदानळपामुपस्थे महिषो ववर्ध ॥१॥
मुमोद गर्भो वृषभः ककुद्मानस्रेमा वत्सः शिमीवाँ अरावीत् ।
स देवतात्युद्यतानि कृण्वन्त्स्वेषु क्षयेषु प्रथमो जिगाति ॥२॥
आ यो मूर्धानं पित्रोररब्ध न्यध्वरे दधिरे सूरो अर्णः ।
अस्य पत्मन्नरुषीरश्वबुध्ना ऋतस्य योनौ तन्वो जुषन्त ॥३॥
उषउषो हि वसो अग्रमेषि त्वं यमयोरभवो विभावा ।
ऋताय सप्त दधिषे पदानि जनयन्मित्रं तन्वे स्वायै ॥४॥
भुवश्चक्षुर्मह ऋतस्य गोपा भुवो वरुणो यदृताय वेषि ।
भुवो अपां नपाज्जातवेदो भुवो दूतो यस्य हव्यं जुजोषः ॥५॥

---

१ इस समय अग्नि बड़ी पताका लेकर द्यावापृथिवीमें जाते हैं । देवोंके बुलानेके समय अग्नि वृषभके समान शब्द करते हैं । द्युलोकके अन्त वा समीपके प्रदेशमें रहकर अग्नि व्याप्त करते हैं । जल भण्डार अन्तरीक्षमें महान् विद्युत् होकर अग्नि बढ़ते हैं ।

२ द्यावापृथिवीके बीच कामोंके वर्षक और उन्नत तेजवाले अग्नि प्रसन्न होते हैं । रात्रि और उषः—कालके वत्स और याज्ञिक कर्मवाले अग्नि शब्द करते हैं । अग्नि यज्ञमें उत्साह-कर्म करते हुए आहवनीय आदि स्थानोंमें रहकर तथा देवोंमें मुख्य होकर जाते हैं ।

३ अग्नि मातृ-पितृ-रूप द्यावापृथिवीके मस्तकपर अपना तेज विस्तृत करते हैं । सुवीर्यवाले अग्निके गतिपरायण तेजको याज्ञिक लोग यज्ञमें धारण करते हैं । अग्निके पतनपर शोभायमान, यज्ञके स्थानमें व्याप्त और हवि आदिसे युक्त तुम्हारे शरीरकी सेवा कवि लोग करते हैं ।

४ प्रशंसनीय अग्नि, तुम उषःकालके पहले ही आ जाते हो । परस्पर मिले दिन और रात्रिके दीप्तिकर्त्ता हो । अपने शरीरसे आदित्यको उत्पन्न करते हुए, यज्ञके लिये, सात स्थानोंमें बैठते हो ।

५ अग्नि दक्षक तुम, चक्षुके समान, प्रकाशक हो । तुम यज्ञके रक्षक हो । जिस समय तुम यज्ञके लिये वरुण वा आदित्य होकर जाते हो, उस समय तुम्हीं रक्षक होते हो । ज्ञानी अग्नि, तुम जलके पौत्र हो । (जलसे मेघ और मेघसे विद्युत् वा अग्नि उत्पन्न होते हैं ) तुम जिस यजमान की हवि ग्रहण करते हो, उसके दूत होते हो ।

भुव यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुद्भिः सचसे शिवाभिः ।
दिवि मूर्धानं दधिषे स्वर्षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम् ॥६॥
अस्य त्रितः क्रतुना वव्रे अन्तरिच्छन् धीतिं पितुरेवैः परस्य ।
सचस्यमानः पित्रोरुपस्थे जामि ब्रुवाण आयुधानि वेति ॥७॥
स पित्र्याण्यायुधानि विद्वानिन्द्रेषित आप्त्यो अभ्ययुध्यत् ।
त्रिशीर्षाणं सप्तरश्मिं जघन्वान्त्वाष्ट्रस्य चिन्निः ससृजे त्रितो गाः ॥८॥
भूरीदिन्द्र उदिनक्षन्तमोजोऽवाभिनत् सत्पतिर्मन्यमानम् ।
त्वाष्ट्रस्य चिद्विश्वरूपस्य गोनामाचक्राणस्त्रीणि शीर्षा परावर्क् ॥९॥

## ९ सूक्त

जल देवता। अम्बरीषके पुत्र सिन्धुद्वीप वा त्वष्टाके पुत्र त्रिशिरा ऋषि। अनुष्टुप् और गायत्री छन्द।

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे ॥१॥

---

६ अग्नि, तुम जिस अन्तरीक्षमें कल्याणकर अश्वोंवाले वायुके साथ मिलते हो, उसमें तुम यज्ञ और जलके नेता होते हो। तुम द्युलोकमें प्रधान और सबके भक्ता सूर्यको धारण करते हो। अग्नि, तुम अपनी जिह्वाको हव्यवाहिका बनाते हो।

७ यज्ञ करके त्रित ऋषिने प्रार्थना की कि, मेरी इच्छा है कि, यज्ञमें पिताका ध्यान करके नाना विपत्तियोंसे रक्षा पाऊँ। प्रार्थनाके कारण पिता-माताके पास सुन्दर वाक्य बोलकर त्रित युद्धका अस्त्र ले गये।

८ आप्त्यके पुत्र त्रितने इन्द्रके द्वारा प्रेरित होकर और अपने पिताके युद्धास्त्रोंको लेकर युद्ध किया। सात रश्मियोंवाले "त्रिशिरा"का उन्होंने बध किया और त्वष्टाके पुत्र (विश्वरूप) की गायोंका भी हरण कर लिया।

९ साधुओंके स्वामी इन्द्रने अभिमानी और व्यापक तेजवाले त्वष्टाके पुत्रको विदीर्ण किया। उन्होंने गायोंको बुलाते हुए त्वष्टाके पुत्र विश्वरूपके तीन सिरोंको काट डाला।

---

१ जल, तुम सुखके आधार हो। अन्न-संचयकर दो। हमें भली भाँति ज्ञान दो।

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः । उशतीरिव मातरः ॥२॥

तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । अपो जनयथा च नः ॥३॥

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शं योरभि स्रवन्तु नः ॥४॥

ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम् । अपो याचामि भेषजम् ॥५॥

अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा । अग्निं च विश्वशम्भुवम् ॥६॥

आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे मम । ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥७॥

इदमापः प्र वहत यत् किञ्च दुरितं मयि ।
यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम् ॥८॥

आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि ।
पयस्वानग्न आ गहि तं मा संसृज वर्चसा ॥९॥

---

२ जल, जैसे माताएँ बच्चोंको दूध देती हैं, वैसे ही तुम अपना सुखकर रस हमें दो।

३ जल, तुम जिस पापके विनाशके लिये हमें प्रसन्न करते हो, उसके विनाशकी इच्छासे हम तुम्हें मस्तकपर चढ़ाते हैं। जल, हमारी वंश-वृद्धि करो।

४ दिव्य जल हमारे यज्ञके लिये सुख-विधान करें। वह पानोपयोगी हुए। वह उत्पन्न रोगोंकी शान्ति और अनुत्पन्न रोगोंको अलग करें। हमारे मस्तकके ऊपर क्षरित हों।

५ अभिलषित वस्तुओंके ईश्वर जल हैं। वही मनुष्योंको निवास देते हैं। हम जलसे, भेषजके लिये, प्रार्थना करते हैं।

६ सोम बोले हैं कि, जलमें औषध और संसार-सुखकर अग्नि भी हैं।

७ जल, हमारी देहकी रक्षा करनेवाले औषधको पुष्ट करो, ताकि हम बहुत दिनोंतक सूर्यको देख सकें।

८ जल, मेरा जो कुछ दुष्कृत्य है अथवा जो कुछ मैंने हिंसाका कार्य किया है वा अभिसंपात किया है वा झूठ बोला हूं, वह सब, दूर करो।

९ मैं आज जलमें पैठा हूं—इसके रसका पान किया है; अग्नि, तुम जल-युक्त होकर आओ। मुझे तेजस्वी बनाओ।

## १० सूक्त

यम और यमी देवता और ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द

ओचित् सखायं सख्या ववृत्यां तिरः पुरू चिदर्णवं जगन्वान् ।
पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधिक्षमि प्रतरं दीध्यानः ॥१॥
न ते सखा सख्यं वष्ट्येतत् सलक्ष्मा यद्विषुरूपा भवाति ।
महस्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तार उर्विया परि ख्यन् ॥२॥
उशन्ति घा ते अमृतास एतदेकस्य चित्त्यजसं मर्त्यस्य ।
नि ते मनो मनसि धाय्यस्मे जन्युः पतिस्तन्वमा विविश्याः ॥३॥
न यत् पुरा चकृमा कद्ध नूनमृता वदन्तो अनृतं रपेम ।
गन्धर्वो अप्स्वप्या च योषा सा नो नाभिः परमं जामि तन्नौ ॥४॥

---

१ ( यम और यमी वा दिन वा रात्रि सहोदर हैं । यमी यमसे कहती है— ) विस्तृत समुद्रके मध्यद्वीपमें आकर, इस निर्जन प्रदेशमें, मैं तुम्हरा सहवास वा मिलन चाहती हूं; क्योंकि ( माताकी ) गर्भावस्थासे ही तुम मेरे साथी हो । विधाताने मन-ही-मन समझा है कि, तुम्हारे द्वारा मेरे गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होगा, वह हमारे पिताका एक श्रेष्ठ नाती होगा ।

२ ( यमका उत्तर—) यमी, तुम्हारा साथी यम तुम्हारे साथ ऐसा सम्पर्क नहीं चाहता; क्योंकि तुम सहोदरा भगिनी हो, अगन्तव्या हो । यह निर्जन प्रदेश नहीं है; क्योंकि महान् बली प्रजापतिके द्युलोकका धारण करनेवाले वीर पुत्र ( देवोंके चर ) सब देखते हैं ।

३ ( यमीका वचन— ) यद्यपि मनुष्यके लिये ऐसा संसर्ग निषिद्ध है; तो भी देवता लोग इच्छा-पूर्वक ऐसा संसर्ग करते हैं । इसलिये मेरी जैसी इच्छा होती है, वैसी ही तुम भी करो । पुत्रजन्मदाता पतिके समान मेरे शरीरमें पैठो—मेरा संभोग करो ।

४ ( यमका उत्तर— हमने ऐसा कर्म कभी नहीं किया । हम सत्यवक्ता हैं । कभी मिथ्या कथन नहीं किया है । अन्तरीक्षमें स्थित गन्धर्व वा जलके धारक आदित्य और अन्तरीक्षमें हो रहनेवाली योषा ( सूर्यकी स्त्री सरण्यू) हमारे माता-पिता हैं । इसलिये हम सहोदर बन्धु हैं । ऐसा सम्बन्ध उचित नहीं ।

गर्भे नु नौ जनिता दम्पती कर्देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः ।
नकिरस्य प्र मिनन्ति व्रतानि वेद नावस्य पृथिवी उत द्यौः ॥५॥
को अस्य वेद प्रथमस्याह्नः क ईं ददर्श क इह प्रवोचत् ।
बृहन्मित्रस्य वरुणस्य धाम कदु ब्रव आहनो विच्या नॄन् ॥६॥
यमस्य मा यम्यं काम आगन्त्समाने योनौ सहशेय्याय ।
जायेव पत्ये तन्वं रिरिच्यां वि चिद्वृहेव रथ्येव चक्रा ॥७॥
न तिष्ठन्ति न निमिषन्त्येते देवानां स्पश इह ये चरन्ति ।
अन्येन मदाहनो याहि तूयं तेन वि वृह रथ्येव चक्रा ॥८॥
रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत् सूर्यस्य चक्षुर्मुहुरुन्मिमीयात् ।
दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्य बिभृयादजामि ॥९॥

---

५ ( यमीकी उक्ति— ) रूपकर्त्ता, शुभाशुभ-प्रेरक, सर्वात्मक, दिव्य और जनक प्रजापतिने तो हमें गर्भावस्थामें ही दम्पती बना दिया है। प्रजापतिका कर्म कोई लुप्त नहीं कर सकता। हमारे इस सम्बन्धको द्यावापृथिवी भी जानते हैं।

६ ( यमीकी उक्ति— ) प्रथम दिनकी ( संगमनकी ) बात कौन जानता है ? किसने उसे देखा है ? किसने उसका प्रकाश किया है ? मित्र और वरुणका यह जो महान् धाम ( अहोरात्र ) है; उसके बारेमें, हे मोक्षबन्धन-कर्त्ता यम, तुम क्या कहते हो ?

७ जैसे एक शय्यापर पत्नी पतिके पास अपनी देहका उद्घाटन करती है, वैसे ही तुम्हारे पास, यम, मैं अपने शरीरको प्रकाशित कर देती हूँ। तुम मेरी अभिलाषा करो। आओ, एक स्थानपर दोनों शयन करें। रथके दोनों चक्रोंके समान हम एक कार्यमें प्रवृत्त हों।

८ ( यमकी उक्ति— ) देवोंके जो गुप्तचर हैं, वे दिनरात विचरण करते हैं—उनकी आखें कभी बन्द नहीं होतीं। दुःखदायिनी यमी, शीघ्र दूसरेके पास जाओ और रथके चक्रोंके समान उसके साथ एक कार्य करो।

९ दिन-रातमें यमके लिये जो कल्पित भाग है, उसे यजमान दें, सूर्यका तेज यमके लिये उदित हो। परस्पर संबद्ध दिन द्युलोक और भूलोक यमके बन्धु हैं। यमी यम, भ्राताके अतिरिक्त, अन्य पुरुषको धारण करे।

आ घा ता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृणवन्नजामि ।
उप बर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत् ॥१०॥
किं भ्रातासद्यदनाथं भवाति किमु स्वसा यन्निरृतिर्निगच्छात् ।
कामभूता बह्वेऽतद्रपामि तन्वा मे तन्वं सं पिपृग्धि ॥११॥
न वा उ ते तन्वा तन्वं संपपृच्यां पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात् ।
अन्येन मत् प्रमुदः कल्पयस्व न ते भ्राता सुभगे वष्ट्येतत् ॥१२
बतो बतासि यम नैव ते मनो हृदयं चाविदाम ।
अन्या किल त्वां कक्ष्येव युक्तं परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम् ॥१३॥
अन्यमू षु त्वं यम्यन्य उ त्वां परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम् ।
तस्य वा त्वं मन इच्छा स वा तवाधा कृणुष्व संविदं सुभद्राम् ॥१४॥

---

१० भविष्यमें ऐसा युग आयगा, जिसमें भगिनियाँ अपने बन्धुत्व-विहीन भ्राताको पति बनावेंगी। सुन्दरी, मुझे छोड़कर दूसरेको पति बनाओ । वह जिस समय वीर्य-सिञ्चन करेगा, उस समय उसे बाहुओंमें अलिङ्गित करना।

११ (यमीकी उक्ति—) वह कैसा भ्राता है, जिसके रहते भगिनी अनाथा हो जाय और वह भगिनी ही क्या है, जिसके रहते भ्राताका दुःख दूर न हो ? मैं काम-मूर्च्छिता होकर नाना प्रकारसे बोल रही हूं, यह विचार करके मुझे भली भाँति भोगो।

१२ (यमकी उक्ति-) यमी, मैं तुम्हारे शरीरसे अपने शरीरको मिलाना नहीं चाहता जो भ्राता भगिनीका संभोग करता है, उसे लोग पापी कहते हैं। सुन्दरि, मुझे छोड़कर अन्य पुरुषके साथ आमोद-आह्लाद करो। तुम्हारा भ्राता तुम्हारे साथ मैथुन करना नहीं चाहता।

१३ (यमीका कथन—) हाय यम, तुम दुर्बल हो। तुम्हारे मन और हृदयको मैं कुछ नहीं समझ सकती। जैसे रस्सी घोड़ेको बाँधती है और जैसे लता वृक्षका आलिङ्गन करती है, वैसे ही अन्य स्त्री तुम्हें अनायास आलिङ्गित करती है; परन्तु मुझे तुम नहीं चाहते हो।

१४ (यमका वचन-) यमी, तुम भी अन्य पुरुषका ही भली भाँति आलिङ्गन करो। जैसे लता वृक्षको वेष्टन करती है, वैसे ही अन्य पुरुष तुम्हें आलिङ्गित करें। उसीका मन तुम हरण करो; वह भी तुम्हारे मनका हरण करे। अपने सहवासका प्रबन्ध उसीके साथ करो—इसीमें मङ्गल होगा।

## ११ सूक्त

अग्नि देवता। अङ्गि-पुत्र हविर्द्धान ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द।

वृषा वृष्णे दुदुहे दोहसा दिवः पयांसि यह्वो अदितेरदाभ्यः।
विश्वं स वेद वरुणो यथा धिया स यज्ञियो यजतु यज्ञियाँ ऋतून् ॥१॥

रपद्गन्धर्वीरप्या च योषणा नदस्य नादे परि पातु मे मनः।
इष्टस्य मध्ये अदितिर्नि धातु नो भ्राता नो ज्येष्ठः प्रथमो वि वोचति ॥२॥

सो चिन्नु भद्रा क्षुमती यशस्वत्युषा उवास मनवे स्वर्वती
यदीमुशन्तमुशतामनु क्रतुमग्निं होतारं विदथाय जीजनन् ॥३॥

अध त्यं द्रप्सं विभ्वं विचक्षणं विराभरदिषितः श्येनो अध्वरे।
यदी विशो वृणते दस्ममार्या अग्निं होतारमध धीरजायत ॥४॥

सदासि रण्वो यवसेव पुष्यते होत्राभिरग्ने मनुषः स्वध्वरः।
विप्रस्य वा यच्छशमान उक्थ्यं वाजं ससवाँ उपयासि भूरिभिः ॥५॥

---

१ वर्षक, महान् और अहिंसनीय अग्निने वर्षक यजमानके लिये महान् दोहनके द्वारा आकाशसे जलको दूहा। आदित्य अपनी बुद्धिसे सारे संसारको जानते हैं। यज्ञीय अग्नि यज्ञ-योग्य ऋतुओं (कालों) का पूजन करें।

२ अग्निके गुणोंको कहनेवाली गन्धर्वकी स्त्री और जलसे संस्कृत आहुतिरूपिणी स्त्रीने अग्निको तृप्त किया। मैं ध्यानावस्थित होकर भली भाँति स्तुति करता हूं। अखण्डनीय अग्नि हमें यज्ञके बीच बैठावे। सारे यजमानोंमें मुख्य हमारे ज्येष्ठ भ्राता स्तुति करते हैं।

३ भजनीय, शब्दवाली और कीर्त्तिवाली उषा यजमानके लिये, आदित्यवाली होकर, तुरत निकलीं। उसी समय, यज्ञके लिये, अग्निको उत्पन्न किया गया। जो यज्ञाभिलाषी हैं, उन्हींके प्रति अग्नि प्रसन्न होते हैं। अग्नि देवोंको बुलाते है।

४ श्येनपक्षी अग्नि-प्रेरित होकर महान्, सूक्ष्मदर्शक, न अधिक कम, न अधिक अधिक सोमको ले आया। जिस समय आर्यलोग सामने जानेयोग्य, दर्शनीय और देवाह्वान-कर्त्ता अग्निकी प्रार्थना करते हैं, उस समय यज्ञ-क्रिया उत्पन्न होती है।

५ पशुओंके लिये जैसे घास रुचिकर होती है, वैसे ही तुम सदा रमणीय हो। अग्नि, मनुष्योंके हवनसे तुम भली भाँति यज्ञ सम्पन्न करो। स्तोताका स्तोत्र सुनकर और हवीरूप अन्नको प्राप्त करके तुम अनेक देवोंके साथ आते हो।

उदीरय पितरा जार आ भगमियक्षति हर्यतो हृत्त इष्यति ।
विवक्ति वह्निः स्वपस्यते मखस्तविष्यते असुरो वेपते मती ॥६॥
यस्ते अग्ने सुमतिं मर्तो अक्षत् सहसः सूनो अति स प्र शृण्वे ।
इषं दधानो वहमानो अश्वैरा स द्युमाँ अमवान् भूषति द्यून् ॥७॥
यदग्न एषा समितिर्भवाति देवी देवेषु यजता यजत्र ।
रत्ना च यद्विभजासि स्वधावो भागं नो अत्र वसुमन्तं वीतात् ॥८॥
श्रुधी नो अग्ने सदने सधस्थे युक्ष्वा रथममृतस्य द्रवित्नुम् ।
आ नो वह रोदसी देवपुत्रे माकिर्देवानामप भूरिह स्याः ॥९॥

६ अग्नि, अपनी ज्वालाको मातृ-पितृ-रूप द्यावापृथिवीकी ओर वैसे ही प्रेरित करो, जैसे नक्षत्र आदिको जीर्ण करनेवाले आदित्य अपना तेज द्युलोक और भूलोककी ओर प्रेरित करते हैं । यज्ञाभिलाषी देवोंके लिये यज्ञकर्त्ता यजमान यज्ञ करनेको तैयार है। वह हृदयसे व्यग्र है। अग्नि स्तुतिको वर्द्धित करनेकी इच्छा करते हैं। प्रधान पुरोहित ( ब्रह्मा ) भली भाँति कर्म सम्पन्न करनेके लिये उत्सुक हैं। वह स्तोत्रको बढ़ाते हैं। ब्रह्मा नामक प्रधान पुरोहित मन ही मन आशङ्का करते हैं कि, कदाचित कोई दोष घट जाय ।

७ बलके पुत्र अग्नि, अनुग्रहशील तुम्हें यजमान स्तोत्रों और हवियोंसे सेवित करता है। वह यजमान प्रसिद्ध होता है। वह अन्न देता है, घोड़े उसका वहन करते हैं। वह दीप्तिशाली और बली है। वह अनुदिन सुखी होता है।

८ यजनीय अग्नि, जिस समय हम ढेरकी ढेर स्तुतियाँ यजनीय देवोंके लिये करते हैं, उस समय रमणीय वस्तुएँ हमें दो । यज्ञीय द्रव्यको ग्रहण करनेवाले अग्नि, हम इससे धनका भाग प्राप्त करें ।

९ अग्नि, सारे देवोंके यज्ञगृहमें रह कर तुम हमारे वचनको सुनो । अमर बरसानेवाले रथको योजित करो । देवोंके माता-पिता द्यावापृथिविको हमारे पास ले आओ । तुम यहीं रहो । देवोंके पाससे नहीं जाना ।

## १२ सूक्त

अग्नि देवता। हविर्द्धान ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

द्यावा ह क्षामा प्रथमे ऋतेनाभिश्रावे भवतः सत्यवाचा।
देवो यन्मर्तान् यजथाय कृण्वन्त्सीदद्धोता प्रत्यङ् स्वमसुं यन् ॥१॥
देवो देवान् परिभूर्ऋतेन वहा नो हव्यं प्रथमश्चिकित्वान्।
धूमकेतुः समिधा भाऋजीको मन्द्रो होता नित्यो वाचा यजीयान् ॥२॥
स्वावृग्देवस्यामृतं यदी गोरतो जातासो धारयन्त उर्वी।
विश्वे देवा अनु तत्ते यजुर्गुर्दुहे यदेनी दिव्यं घृतं वाः ॥३॥
अर्चामि वां वर्धायापो घृतस्नु द्यावाभूमी शृणुतं रोदसी मे।
अहा यद्द्यावोऽसुनीतिमयन्मध्वा नो अत्र पितरा शिशीताम् ॥४॥
किं स्विन्नो राजा जगृहे कदस्याति व्रतं चकृमा को विवेद।
मित्रश्चिद्धि ष्मा जुहुराणो देवाञ्छ्लोको न यातामपि वाजो अस्ति ॥५॥

१ प्रधान भूत द्यावापृथिवी, यज्ञके समय, सबके पहले, अग्निका आह्वान करें। अग्नि, यज्ञके लिये, मनुष्योंको प्रेरित करके और अपनी ज्वालाको धारण करके, देवोंके बु[illegible] लिये बैठें।

२ अग्नि दिव्य हैं। वह इन्द्रादि देवोंके पास जाते हुए यज्ञके सा[illegible] ले आवें। अग्नि, देवोंमें मुख्य, सर्वज्ञ, धूमध्वज, समिधाके द्वारा ऊर्द्ध्वज्वलन, स्तुत्य, आह्वाता, नित्य और यजमानोंके यज्ञ-कर्त्ता हैं।

३ अग्निदेव स्वयं जो जल उत्पन्न करते हैं, उससे उद्भिज्ज उत्पन्न होकर पृथिवीका रक्षण करते हैं। सारे देवता तुम्हारे जल-दानकी प्रशंसा करते हैं। तुम्हारी श्वेत ज्वाला स्वर्गके घृतरूप वृष्टि-वारिका दोहन करते हैं।

४ अग्नि, हमारे यज्ञ रूप कर्मको बढ़ाओ। वृष्टिजलका वर्षण करनेवाले द्यावापृथिवी, मैं तुम्हारी पूजा और स्तुति करता हूँ। द्यावापृथिवी, मेरा स्तोत्र सुनो। जिस समय स्तोता लोग, यज्ञके समय, स्तुति करते हैं, उस समय वृष्टि-जलका वर्षण करके हमारी मलिनताको दूर करो।

५ प्रदीप्त अग्निने क्या हमारी स्तुति और हविको ग्रहण किया है? क्या हमने उपयुक्त पूजन किया है? कौन जानता है? जैसे मित्रको बुलानेपर वह आता है, वैसे ही अग्नि भी आ सकते हैं। हमारी यह स्तुति देवोंके पास जाय। जो कुछ खाद्य है, वह भी देवताके पास जाय।

दुर्मन्त्वत्रामृतस्य नाम सलक्ष्मा यद्विषुरूपा भवाति ।
यमस्य यो समनवते सुमन्त्वग्ने तमृष्व पाह्यप्रयुच्छन् ॥६॥
यस्मिन्देवा विदथे मादयन्ते विवस्वतः सदने धारयन्ते ।
सूर्ये ज्योतिरदधुर्मास्यक्तून् परि द्योतनिं चरतो अजस्रा ॥७॥
यस्मिन्देवा मन्मनि सञ्चरन्त्यपीच्ये न वयमस्य विद्म ।
मित्रो नो अत्रादितिरनागान्त्सविता देवो वरुणाय वोचत् ॥८॥
श्रुधी नो अग्ने सदने सधस्थे युक्ष्वा रथममृतस्य द्रवित्नुम् ।
आ नो वह रोदसी देवपुत्रे माकिर्देवानामप भूरिह स्याः ॥९॥

## १३ सूक्त

हविर्द्धान नामक शकटद्वय देवता। विवस्वान् ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

युजे वां ब्रम्ह पूर्व्यं नमोभिर्वि श्लोक एतु पथ्येव सूरेः ।
शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा आ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः ॥१॥

---

६ अमर सूर्यका अपराधशून्य और मधुर रसवाला जल पृथिवीपर नाना रूपका होता है। सूर्य यमके अपराधको क्षमा करते हैं । महान् अग्नि, क्षमाशील सूर्यकी रक्षा करो ।

७ अग्निके उपस्थित रहनेपर यज्ञमें देवता लोग प्रसन्न होते और यजमानके वेदीरूप स्थानमें अपनेको स्थापित करते हैं। देवोंने सूर्यमें तेज ( दिनोंको ) स्थापित किया और चन्द्रमामें रातोंको स्थापित किया। वर्द्धमान सूर्य और चन्द्र दीप्ति प्राप्त करते हैं।

८ जिन ज्ञानरूप अग्निके उपस्थित रहनेपर देवता लोग अपना कार्य सम्पादित करते हैं, उनका स्वरूप हम नहीं समझते । इस यज्ञमें मित्र, अदिति और सूर्य पाप-नाशक अग्निके पास हमें पाप-शून्य कहें ।

९ अग्नि, सारे देवोंके यज्ञ-गृहमें रहकर तुम हमारे वचनको सुनो । अमृत बरसानेवाले रथको योजित करो। देवोंके माता-पिता द्यावापृथिवीको हमारे पास ले आओ। तुम यहीं रहो। देवोंके पाससे नहीं जाना ।

—:o:—

१ शकटद्वय, प्राचीन समयमें उत्पन्न मन्त्रका उच्चारण करके और सोमादिको लाद कर पत्नीशालाके अन्तमें तुम दोनोंको ले जाता हूँ । स्तोताकी आहुतिके समान मेरा स्तोत्र-वाक्य देवोंके पास जाय। जो देवता वा अमर पुत्र दिव्य धाममें रहते हैं, वे सब सुन।

यमेइव यतमाने यदैतं प्र वां भरन्मानुषा देवयन्तः ।
आ सीदतं स्वमु लोकं विदाने स्वासस्थे भवतमिन्दवे नः ॥२॥
पञ्च पदानि रूपो अन्वरोहञ्चतुष्पदीमन्वेमि व्रतेन ।
अक्षरेण प्रति मिम एतामृतस्य नाभावधि सं पुनामि ॥३॥
देवेभ्यः कमवृणीत मृत्युं प्रजायै कममृतं नावृणीत ।
बृहस्पतिं यज्ञमकृण्वत ऋषिं प्रियां यमस्तन्वं प्रारिरेचीत् ॥४॥
सप्त क्षरन्ति शिशवे मरुत्वते पित्रे पुत्रासो अप्यवीवतन्नृतम् ।
उभे इदस्योभयस्य राजत उभे यतेते उभयस्य पुष्यतः ॥५॥

## १४ सूक्त

पितृलोक, यम आदि देवता। वैवस्वत यम ऋषि। अनुष्टुप्, बृहती और त्रिष्टुप् छन्द।

परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनु पस्पशानम् ।
वैवस्वतं सङ्गमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य ॥१॥

२ जब तुम जुड़वेंके समान जाते हो, तब देव-पूजक मनुष्य तुम्हारे ऊपर भरपूर होम-द्रव्य लादते हैं। तुम लोग अपने स्थानपर जाकर रहो। हमारे सोमके लिये शोभन स्थान ग्रहण करो।

३ यज्ञके जो पाँच (धाना, सोम, पशु, पुरोडाश और घृत) उपकरण हैं, यथायोग्य उनको मैं रखता हूँ। यथानियम चार त्रिष्टुबादि छन्दोंका प्रयोग करता हूँ। ओङ्कारका उच्चारण करके वर्त्तमान कार्यको सम्पन्न करता हूँ। यज्ञकी नाभि-स्वरूप वेदीपर मैं सोमका संशोधन करता हूँ।

४ देवोंमेंसे किसे मृत्यु-भवनमें भेजा जाय? प्रजामेंसे किसे अमर किया जाय? यज्ञकर्त्ता लोग मन्त्र-पूत यज्ञका अनुष्ठान करते हैं, जिससे यम हमारे (यजमानोंके) शरीरको मृत्यु-मुखमें नहीं भेजते।

५ स्तोता लोग पितृ-स्वरूप और प्रशंसनीय सोमके लिये सातो छन्दोंका उच्चारण करते हैं। पुत्र-स्वरूप पुरोहित लोग स्तुति करते हैं। दोनों शकट, देव और मनुष्य, दोनोंके लिये दीप्ति पाते हैं, कार्य करते हैं और देवों तथा मनुष्योंका पोषण करते हैं।

१ अन्तःकरण वा यजमान, तुम पितरोंके स्वामी यमकी, पुरोडाश आदिके द्वारा, परिचर्या करो। यम सत्कर्मानुष्ठाताओंको सुखके देशमें ले जाते हैं, वह अनेकोंका मार्ग परिष्कृत करते हैं और उनके पास ही सारा मानव-समुदाय जाता है।

यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ ।
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्या अनु स्वाः ॥२॥
मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्वभिर्वावृधानः ।
याँश्च देवा वावृधुर्ये च देवान्त्स्वाहान्ये स्वधयान्ये मदन्ति ॥३॥
इमं यम प्रस्तरमा हि सीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः ।
आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन् हविषा मादयस्व ॥४॥
अङ्गिरोभिरागहि यज्ञियेभिर्यम वैरूपैरिह मादयस्व ।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्य ॥५॥
अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः ।
तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम ॥६॥

---

२ सबमें मुख्य यम हमारे शुभाशुभको जानते हैं। यमके मार्गका कोई विनाश नहीं कर सकता। जिस पथसे हमारे पूर्वज गये हैं, उसी मार्गसे अपने-अपने कर्मानुसार सारे जीव जायंगे।

३ अपने सारथि (मातली) के प्रभु इन्द्र कव्यवाले पितरोंकी सहायतासे बढ़ते हैं। यम अङ्गिरा नामक पितरोंकी सहायतासे बढ़ते हैं और बृहस्पति ऋक नामक पितरोंकी सहायतासे बढ़ते हैं। जो देवोंकी संवर्द्धना करते हैं और जिनकी संवर्द्धना देवता करते हैं, सो सब बढ़ते हैं। कोई स्वाहाके द्वारा और कोई स्वधाके द्वारा प्रसन्न होते हैं।

४ यम, अङ्गिरा नामक पितरोंके साथ इस विस्तृत यज्ञविशेषमें आकर बैठो। ऋत्विकोंके मन्त्र तुम्हें बुलावे। राजन्, इस हविसे संतुष्ट होकर यजमानको प्रसन्न करो।

५ यम, नाना रूपोंवाले याज्ञिक अङ्गिरा लोगोंके साथ पधारो और इस यज्ञमें यजमानको प्रसन्न करो। तुम्हारे विवस्वान् नामक पिताको मैं इस यज्ञमें बुलाता हूँ। वह कुशोंपर बैठकर यजमानको प्रसन्न करें।

६ अङ्गिरा, अथर्वा और भृगु नामक पितृगण अभी-अभी पधारे हैं। वे सोमके अधिकारी हैं। यज्ञ-योग्य उन पितरोंकी अनुग्रह-बुद्धिमें हम रहें। हम उनकी प्रसन्नता प्राप्त कर कल्याण-मार्गी बनें।

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिर्यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः ।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवम् ॥७॥
संगच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन् ।
हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि संगच्छस्व तन्वा सुवर्चाः ॥८॥
अपेत वीत वि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन् ।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै ॥९॥
अति द्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा ।
अथा पितॄन्त्सुविदत्राँ उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति ॥१०॥
यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ ।
ताभ्यामेनं परि देहि राजन्त्स्वस्ति चास्मा अनमीवं च धेहि ॥११॥

---

७ जहां हमारे प्राचीन पितामह आदि गये हैं, उसी प्राचीन मार्गसे, हे ( मृत ) पितः, जाओ। स्वधा ( अमृतान्न ) से प्रहृष्ट-मना राजा यम तथा वरुणदेवको देखो ।

८ पितः, उत्कृष्ट स्वर्गमें अपने पितरोंके साथ मिलो। साथ ही अपने धर्मानुष्ठानके फलसे भी मिलो। पापको छोड़कर अस्त ( ध्रियमान ) नामक ग्रहमें पैठो और उज्ज्वल शरीरसे मिलो।

९ श्मशानघाटपर स्थित पिशाचादिको, इस स्थानसे चले जाओ, हट जाओ, दूर होओ। पितरोंने इस मृत यजमानके लिये इस स्थानको बनाया है। यह स्थान दिवसों, जल द्वारा और रात्रिके द्वारा शोभित है। यमने इस स्थानको मृत व्यक्तिको दिया है।

१० मृत पितः, चार आखों और विचित्र वर्णवाले ये जो दो कुकुर हैं, इनके पाससे शीघ्र चले जाओ। जो सुविज्ञ पितर यमके साथ सदा आमोदके साथ रहते हैं, उत्तम मार्गसे उन्हींके पास जाओ।

११ यम, तुम्हारे गृहके रक्षक, चार आँखोंवाले, मार्गके रक्षक और मनुष्योंके द्वारा प्रशंसनीय जो दो कुकुर हैं, उनसे इस मृत व्यक्तिकी रक्षा करो। राजन्, इसे कल्याणभागी और नीरोगी करो।

उरुणसावसुतृपा उदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनाँ अनु ।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम् ॥१२॥
यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः ।
यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरङ्कृतः ॥१३॥
यमाय घृतवद्धविर्जुहोत प्र च तिष्ठत ।
स नो देवेष्वा यमद्दीर्घमायुः प्र जीवसे ॥१४॥
यमाय मधुमत्तमं राज्ञे हव्यं जुहोतन ।
इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः ॥१५॥
त्रिकद्रुकेभिः पतति षलुर्वीरेकमिद्बृहत् ।
त्रिष्टुब्गायत्री छन्दांसि सर्वा ता यम आहिता ॥१६॥

---

१२ लम्बी नाकोंवाले, दूसरोंका प्राण-भक्षण करके तृप्त होनेवाले मनुष्योंको लक्ष्य करके विचरण करनेवाले और विस्तृत बलवाले जो दो यम-दूत (कुक्कुर) हैं, वे आज यहाँ हमें, सूर्यके दर्शनके लिये, समीचीन प्राण दें।

१३ ऋत्विको, यमके लिये सोम प्रस्तुत करो। यमके लिये हविका हवन करो। जिस यज्ञके दूत अग्नि हैं और जिसे नाना द्रव्योंसे समन्वित किया गया है, वह यज्ञ यमकी ओर जाता है।

१४ ऋत्विको, तुम यमके लिये घृतसे युक्त हविका हवन करो और यमकी सेवा करो। देवोंके बीच यम, हमारे दीर्घ जीवनके लिये, लम्बी आयु दें।

१५ ऋत्विको, राजा यमके लिये अत्यन्त मिष्ट हविका हवन करो। हमसे पहले शोभन मार्ग बनानेवाले ऋत्विकोंके लिये यह नमस्कार है।

१६ यमराज त्रिकद्रुक (ज्योति, गौ और आयु) नामक यज्ञके अधिकारी हैं। यम छ स्थानों (द्युलोक, भूलोक, जल, उद्भिज्ज, उर्क और सूनृत) में रहते हैं। वह विराट् संसारमें विचरण करते हैं। त्रिष्टुप्, गायत्री आदि छन्दोंमें यमकी स्तुति की जाती है।

## १५ सूक्त

पितृलोक देवता । यमपुत्र शङ्ख ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः ।
असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥१॥
इदं पितृभ्यो नमो अस्त्वद्य ये पूर्वासो य उपरास ईयुः ।
ये पार्थिवे रजस्या निषत्ता ये वा नूनं सुवृजनासु विक्षु ॥२॥
आहं पितॄन्त्सुविदत्राँ अविित्सि नपातं च विक्रमणं च विष्णोः ।
बर्हिषदो ये स्वधया सुतस्य भजन्त पित्वस्त इहागमिष्ठाः ॥३॥
बर्हिषदः पितर उत्यर्वागिमा वो हव्या चकृमा जुषध्वम् ।
त आ गतावसा शन्तमेनाथा नः शं योररपो दधात ॥४॥
उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु ।
त आगमन्तु त इह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५॥

---

१ उत्तम, मध्यम और अधम आदि तीन श्रेणियोंके पितर लोग हमारे प्रति अनुग्रह-युक्त होकर होमीय द्रव्यका ग्रहण करें। जो पितर अहिंसक होकर और हमारे धर्मानुष्ठानके प्रति दृष्टि रखकर हमारी प्राण रक्षा करनेके लिये आये हैं, वे, यज्ञ-कालमें, हमारी रक्षा करें।

२ जो पितर (पितामहादि) आगे और जो (कनिष्ठ भ्राता आदि) पीछे मरे हैं, जो पृथिवीपर आये हैं अथवा जो भाग्यशाली लोगोंके बीच हैं, उन सबको आज यह नमस्कार है।

३ पितर लोग भली भाँति परिचित हैं, मैंने उनको पाया है, इस यज्ञके सम्पादनका उपाय भी मैंने पाया है। जो पितर कुशोंपर बैठ कर हव्यके साथ सोम रसका ग्रहण करते हैं, वे सब पधारे हैं।

४ कुशोंपर बैठनेवाले पितरो, इस समय हमें आश्रय दो। तुम लोगोंके लिये ये सारे द्रव्य प्रस्तुत हैं, इनका भोग करो। इस समय आओ। हमारी रक्षा करो और हमारा उत्तम मङ्गल करो। हमें कल्याणभागी करो। हमें अकल्याण और पापसे दूर करो।

५ कुशोंके ऊपर ये सारे मनोहर द्रव्य रखे हुए हैं। इनका और सोमरसका भोग करनेके लिये पितर लोग बुलाये गये हैं। वे पधारें, हमारी स्तुतिको ग्रहण करें, आह्लाद प्रकट करें और हमारी रक्षा करें।

आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येमं यज्ञमभि गृणीत विश्वे ।
मा हिंसिष्ट पितरः केन चिन्नो यद्व आगः पुरुषता कराम ॥६॥
आसीनासो अरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय ।
पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्र यच्छत त इहोर्जं दधात ॥७॥
ये नः पूर्वे पितरः सोम्यासोऽनूहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः ।
तेभिर्यमः संरराणो हवींष्युशन्नुशद्भिः प्रतिकाममत्तु ॥८॥
ये तातृषुर्देवत्रा जेहमाना होत्राविदः स्तोमतष्टासो अर्कैः ।
आग्ने याहि सुविदत्रेभिरर्वाङ् सत्यैः कव्यैः पितृभिर्घर्मसद्भिः ॥९॥
ये सत्यासो हविरदो हविष्पा इन्द्रेण देवैः सरथं दधानाः ।
आग्ने याहि सहस्रं देववन्दैः परैः पूर्वैः पितृभिर्घर्मसद्भिः ॥१०॥

६ पितरो, तुमलोग दक्षिण तरफ घुटने टेककर पृथिवीपर बैठते हुए इस यज्ञकी प्रशंसा करो। हम मनुष्य हैं; इसलिये हमसे अपराध होना सम्भव है। परन्तु उसके लिये हमारी हिंसा नहीं करना ।

७ लोहित शिखाके पास बैठनेवाले इन दाताओंको धन दो । पितरो, उनके पितरोंका धन दो—उन्हें इस यज्ञमें उत्साहित करो।

८ जिन सोमपायी प्राचीन पितरोंने उत्तम परिच्छदका धारण करके, यथानियम, सोमपान किया था, वे भी हविकी अभिलाषा करते हैं—यम भी कामना करते हैं । उनके साथ यम सुखी होकर इन होमीय द्रव्योंका यथेच्छ भोजन करते हैं ।

९ अग्नि, जो पितर, हवन करना जानते थे और अनेक ऋचाओंकी रचना करके स्तोत्र प्रस्तुत करते थे और जो, अपने कर्मके प्रभावसे, इस समय, देवत्वकी प्राप्ति कर चुके हैं, यदि वे क्षुधा-तृष्णावाले हों, तो उन्हें लेकर हमारे पास आओ । वे विशेष परिचित हैं। वे यज्ञमें बैठते हैं । उन पितरोंके लिये यह उत्कृष्ट हवि है।

१० जो साधुस्वभाव पितर लोग देवोंके साथ, एकत्र होकर, हविका भक्षण और पान करते हैं और इन्द्रके साथ एक रथपर चढ़ते हैं, उन सब देवाराधक, यज्ञके अनुष्ठाता, प्राचीन तथा आधुनिक पितरोंके साथ आओ, हे अग्नि !

अग्निष्वात्ताः पितर एह गच्छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः ।
अत्ता हवींषि प्रयतानि बर्हिष्यथा रयिं सर्ववीरं दधातन ॥११॥
त्वमग्न ईळितो जातवेदोऽवाड्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वी ।
प्रादाः पितृभ्यः स्वधया ते अक्षन्नद्धि त्वं देव प्रयता हवींषि ॥१२॥
ये चेह पितरो ये च नेह यांश्च विद्म याँ उ च न प्रविद्म ।
त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञं सुकृतं जुषस्व ॥१३॥
ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते ।
तेभिः स्वराळसुनीतिमेतां यथावशं तन्वं कल्पयस्व ॥१४॥

## १६ सूक्त

अग्नि देवता। यमके पुत्र दमन ऋषि। त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द।

मैनमग्ने विदहो माभिशोच मास्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम् ।
यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेमेनं प्र हिणुतात् पितृभ्यः ॥१॥

११ अग्निके द्वारा स्वादित (अग्निष्वात्त नामक) पितरो, यहाँ आओ और एक-एक कर सब लोग अपने-अपने आसनपर बैठो। अभिपूजित पितरो, कुशोंपर परसे हुए शुद्ध हविका भक्षण करो। अनन्तर पुत्र-पौत्र आदिसे युक्त धन हमें दो।

१२ समस्त संसारके ज्ञाता अग्नि, हमने तुम्हारी स्तुति की है। तुमने हविको सुगन्धि करके पितरोंको दे दिया है। पितर लोग "स्वधा"के साथ दिये गये हविका भक्षण करें। देव, तुम भी परिश्रमसे प्रस्तुत किये गये हविका भक्षण करो।

१३ ज्ञानी अग्नि, यहाँ जो पितर आये हैं और जो नहीं आये हैं, जिन पितरोंको हम जानते हैं और जिन्हें हम नहीं जानते हैं, उन सबको तुम जानते हो। पितरो, स्वधाके साथ इस सुसम्पन्न यज्ञका भोग करो।

१४ स्वयंप्रकाश अग्नि, जो पितर अग्निसे जलाये गये हैं और जो नहीं जलाये गये हैं, वे सब स्वर्गमें स्वधा (हवीरूप अन्न) के साथ आनन्द करते हैं। उनके साथ एकत्र होकर तुम हमारे पितरोंके प्राणधार शरीरको, यथाभिलाष, देव-शरीर बनाओ।

१. अग्नि, मृतको सर्वांशतः नहीं भस्म करना। इसे क्लेश नहीं देना। इसके शरीर (वा चर्म) का छिन्न-भिन्न नहीं करना। ज्ञानी अग्नि, जिस समय तुम्हारी ज्वालासे इसका शरीर, भली भाँति, पकता है, उसी समय इसे पितरोंके पास भेज देना।

शृतं यदा करसि जातवेदोऽथेमेनं परिदत्तात् पितृभ्यः।

यदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथा देवानां वशनीर्भवाति ॥२॥

सूर्यं चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा।

अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः ॥३॥

अजो भागस्तपसा तं तपस्व तं ते शोचिस्तपतु तं ते अर्चिः।

यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्ताभिर्वहैनं सुकृतामु लोकम् ॥४॥

अवसृज पुनरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुतश्चरति स्वधाभिः।

आयुर्वसान उपवेतु शेषः सङ्गच्छतां तन्वा जातवेदः ॥५॥

यत्ते कृष्णः शकुन आतुतोद पिपीलः सर्प उत वा श्वापदः।

अग्निष्टद्विश्वादगदं कृणोतु सोमश्च यो ब्राह्मणाँ आविवेश ॥६॥

---

२ अग्नि, जिस समय इसके शरीरको भली भाँति जलाना, उसी समय पितरोंके पास इसे भेजना। यह जब दोबारा सजीवता प्राप्त करेगा, तब देवोंके वशमें रहेगा।

३ मृत व्यक्ति, तुम्हारा नेत्र सूर्यके पास जाय और श्वास वायुमें। तुम अपने पुण्य-फलसे आकाश और पृथिवीपर जाओ। यदि जलमें जाना चाहते हो, तो जलमें ही जाओ। तुम्हारे शरीरके अवयव वनस्पतियोंमें रहें।

४ इस व्यक्तिका जो अंश जन्म-रहित है, सदा रहनेवाला है, अग्नि, तुम उसी अंशको अपने तापसे उत्तप्त करो। तुम्हारी उज्ज्वलता, तुम्हारी ज्वाला, उसे उत्तप्त करे। ज्ञानी अग्नि, तुम्हारी जो मङ्गलमयी मूर्त्तियाँ हैं, उनके द्वारा इस व्यक्तिको पुण्यवान् लोगोंके देशमें ले आओ।

५ अग्नि, जो तुम्हारा आहुति-स्वरूप होकर यज्ञीय द्रव्यका भोजन करता है, उसे पितरोंके पास भेजो। इसका जो भाग अवशिष्ट है, वह जीवन पाकर उठ जाय। ज्ञानी अग्नि, वह फिर शरीर प्राप्त करे।

६ मृत व्यक्ति, तुम्हारे शरीरके जिस अंशको काक ( कौवे )ने पीड़ा पहुँचायी है अथवा चींटी, साँप वा हिंस्र जीवने जिस अंशको व्यथा दी है, उसे सर्वभुक् अग्नि नीरोग ( व्यथाशून्य ) करें। तुम्हारे शरीरमें पैठ जानेवाले सोम भी उसे नीरोग करें।

अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोर्णुष्व पीवसा मेदसा च ।
नेत्त्वा धृष्णुर्हरसा जर्हृषाणो दधृग्विधक्ष्यन् पर्यङ्खयाते ॥७॥
इममग्ने चमसं मा वि जिह्वरः प्रियो देवानामुत सोम्यानाम् ।
एष यश्चमसो देवपानस्तस्मिन्देवा अमृता मादयन्ते ॥८॥
क्रव्यादमग्निं प्र हिणोमि दूरं यमराज्ञो गच्छतु रिप्रवाहः ।
इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन् ॥९॥
यो अग्निः क्रव्यात् प्रविवेश वो गृहमिमं पश्यन्नितरं जातवेदसम् ।
तं हरामि पितृयज्ञाय देवं स घर्ममिन्वात् परमे सधस्थे ॥१०॥
यो अग्निः क्रव्यवाहनः पितॄन्यक्षदृतावृधः ।
प्रेदु हव्यानि वोचति देवेभ्यश्च पितृभ्य आ ॥११॥
उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि ।
उशन्नुशत आवह पितॄन् हविषे अत्तवे ॥१२॥

---

७ मृत, तुम गोचर्मके साथ अग्नि-शिखा-स्वरूप कवचको धारण करो । तुम अपने मेद और मांससे आच्छादित होओ । ऐसा होनेपर बल-पूर्वक और अहंकारके साथ तुम्हें जलानेको तैयार हुए दुर्द्धर्ष अग्नि तुम्हारे सर्वांशमें नहीं व्याप्त हो सकते।

८ अग्नि, इस चमसको विचलित नहीं करना। यह सोमपायी देवोंको प्रसन्न करता है। देवोंके पान करनेके लिये जो चमस है, उसे देखकर अमर देवता हृष्ट होते ह।

९ मांसभोजनकर्त्ता ( तीव्र ) अग्निको मैं दूर करता हूं। यह अश्रद्धेय वस्तुका वहन करनेवाले हैं। जिन लोगोंके राजा यम हैं, उन्हींके पास अग्नि जायँ। यहाँ भी एक अग्नि हैं। यही विचारके साथ देवोंके पास हवि ले जायँ।

१० मांसभोजनकर्त्ता और चितावाले अग्नि तुम्हारे घरमें पैठे हैं, उन्हें मैं दूर करता हूं। दूसरे ज्ञानी अग्निको मैं, पितरोंको यज्ञ देनेके लिये, ग्रहण करता हूं। यही यज्ञको लेकर परम धाममें गमन करें।

११ जो अग्नि श्राद्धके द्रव्यका वहन करते और यज्ञकी उन्नति करते हैं, वह देवों और पितरोंकी आराधना करते और उनके पास होमीय द्रव्य ले जाते हैं।

१२ अग्नि, मैं तुम्हें यत्न-पूर्वक स्थापित करता हूं और यत्न-पूर्वक ही तुम्हें प्रज्वलित करता हूं। यज्ञाभिलाषी देवों और पितरोंके पास तुम यत्न-पूर्वक, भक्षणके लिये, होमीय द्रव्य ले जाते हो।

यं त्वमग्ने समदहस्तमु निर्वापया पुनः ।
कियाम्ब्वत्र रोहतु पाकदूर्वा व्यल्कशा ॥१३॥
शीतिके शीतिकावति ह्लादिके ह्लादिकावति ।
मण्डूक्या सु सङ्गम इमं स्वग्निं हर्षय ॥१४॥

## २ अनुवाक । १७ सूक्त

सरण्यू, पूषा, सरस्वती, सोम आदि देवता । यमपुत्र देवश्रवा ऋषि । त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, बृहती आदि छन्द ।

त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोतीतीदं विश्वं भुवनं समेति ।
यमस्य माता पर्युह्यमाना महो जाया विवस्वतो ननाश ॥१॥
अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वी सवर्णामददुर्विवस्वते ।
उताश्विनावभरद्यत्तदासीदजहादु द्वा मिथुना सरण्यूः ॥२॥
पूषा त्वेतश्च्यावयतु प्र विद्वाननष्टपशुर्भुवनस्य गोपाः ।
स त्वैतेभ्यः परिददत् पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रियेभ्यः ॥३॥

---

१३ अग्नि, तुमने जिसे जलाया है, उसे बुझाओ । यहाँ कुछ जल हो और शाखा-प्रशाखाओंवाली दूब उत्पन्न हो ।

१४ पृथिवी, तुम शीतल हो । तुमपर कितने ही शीतल वनस्पति हैं । तुम आह्लादिका हो । तुमपर अनेक आह्लादक वनस्पति हैं । भेकी (मेढ़ककी स्त्री) जिससे सन्तुष्ट हो—ऐसी वर्षा ले आओ । अग्निको सन्तुष्ट करो ।

---

१ त्वष्टा नामके देव अपनी कन्या सरण्यूका विवाह करनेवाले हैं; इस उपलक्षमें सारा संसार आ गया है । जिस समय यमकी माताका विवाह हुआ, उस समय महान् विवस्वान्की स्त्री अदृष्ट हुई ।

२ अमर सरण्यूको मनुष्योंके पास छिपाया गया । सरण्यूके सदृश एक स्त्रीका निर्माण करके विवस्वान्को उसे दिया गया । उस समय अश्वरूपिणी सरण्यूने अश्विद्वयको गर्भमें धारण किया और यमज सन्तानको उत्पन्न किया ।

३ ज्ञानी, संसारके रक्षक और अविनष्ट-पशु पूषा तुम्हें यहाँसे उत्तम लोकमें ले जायँ । अग्निदेव तुम्हें धनद देवों और पितरोंके पास ले जायँ ।

आयुर्विश्वायुः परिपासति त्वा पूषा त्वा पातु प्रपथे पुरस्तात् ।
यत्रासते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्र त्वा देवः सविता दधातु ॥४॥
पूषेमा आशा अनु वेद सर्वाः सो अस्माँ अभयतमेन नेषत् ।
स्वस्तिदा आघृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन् पुर एतु प्रजानन् ॥५॥
प्रपथे पथामजनिष्ट पूषा प्रपथे दिवः प्रपथे पृथिव्याः ।
उभे अभि प्रियतमे सधस्थे आ च परा च चरति प्रजानन् ॥६॥
सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने ।
सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती दाशुषे वार्यं दात् ॥७॥
सरस्वति या सरथं ययाथ स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती ।
आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयस्वानमीवा इष आ धेह्यस्मे ॥८॥
सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः ।
सहस्रार्घमिळो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानेषु धेहि ॥९॥

४ सारे संसारके जीवन पूषा तुम्हारे जीवनकी रक्षा करें। वह तुम्हारे गन्तव्य स्थानके अग्र भागमें हैं। वह तुम्हारी रक्षा करें। जहाँ पुण्यवान् हैं, जहाँ वह गये हैं, उसी स्थानपर सविता ( पूषा ) तुम्हें ले जायँ ।

५ पूषा सारी दिशाएं जानते हैं। वह हमें उसी मार्गसे ले जायँ, जिसमें कोई भय नहीं है। वह कल्याणदाता हैं। उनकी मूर्त्ति आलोक-वेष्टित है। उनके साथ सारे वीर पुरुष हैं। वह हमें जानते हैं। सावधान होकर वह हमारे सामने आवें।

६ सारे मार्गोंसे श्रेष्ठ मार्गमें पूषाने दर्शन दिया है। उन्होंने स्वर्ग और मर्त्यके श्रेष्ठ पथमें दर्शन दिया है। पूषाकी जो दो प्रेयसी ( द्यावापृथिवी ) हैं और जो एक साथ रहती हैं, उनको पूषा देव, विशेष समझ करके, मनोरञ्जन करते हैं।

७ जो देवोंके उद्देश्यसे यज्ञ करते हैं, वे सरस्वतीकी पूजाके लिये आह्वान करते हैं। जिस समय देवताका, विस्तारके साथ, यज्ञ प्रारम्भ हुआ, उस समय पुण्यात्माओंने सरस्वती-को बुलाया। सरस्वती दाताकी अभिलाषा पूरी करें।

८ सरस्वती, तुम पितरोंके साथ एक रथपर जाओ। तुम उनके साथ, आह्लाद-पूर्वक, सारे यज्ञीय द्रव्यका भोग करो। आओ, इस यज्ञमें आनन्द करो। हमें नीरोग और अन्न दान करो।

९ सरस्वती, पितर लोग दक्षिण पार्श्वमें आकर और यज्ञस्थानमें विस्तीर्ण होकर तुम्हें बुलाते हैं। तुम यज्ञकर्त्ताके लिये बहुमूल्य और विलक्षण अन्नराशि तथा प्रचुर अन्न उत्पन्न कर दो।

आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ।
विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूत एमि ॥१०॥
द्रप्सश्चस्कन्द प्रथमाँ अनु द्यूनिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः ।
समानं योनिमनु सञ्चरन्तं द्रप्सं जुहोम्यनु सप्त होत्राः ॥११॥
यस्ते द्रप्सः स्कन्दति यस्ते अंशुर्बाहुच्युतो धिषणाया उपस्थात् ।
अध्वर्योर्वा परि वा यः पवित्रात्तं ते जुहोमि मनसा वषट्कृतम् ॥१२॥
यस्ते द्रप्सः स्कन्नो यस्ते अंशुरवश्च यः परः स्रुचा ।
अयं देवो बृहस्पतिः सं तं सिञ्चतु राधसे ॥१३॥
पयस्वतीरोषधयः पयस्वन्मामकं वचः ।
अपां पयस्वदित् पयस्तेन मा सह शुन्धत ॥१४॥

---

१० जल मातृ-स्वरूप है। वह हमारा शोधन करे। जल घृत-प्रवाहसे प्रवाहित हो रहा है। उसी घृतके द्वारा वह हमारे मलको दूर करे। जल-रूपी देवी सारे पापोंको अपने स्रोतमें बहा ले जायँ। जलमेंसे हम स्वच्छ और पवित्र होकर आते हैं।

११ द्रव्य-रूप सोमरस अतीव सुन्दर और दीप्ति-शील अंशुसे क्षरित होते हैं। इस स्थान-पर और इसके पूर्वतन स्थानपर अर्थात् आधारपर सोम क्षरित होते हैं। हम सात हवन-कर्त्ता समान-रूपसे आधारके बीचमें विहार करनेवाले उन द्रव्य-रूप सोमका हवन करते हैं।

१२ सोम, तुम्हारा जो द्रव्यात्मक रस क्षरित होता है अथवा तुम्हारा जो अंशु (खाल) पुरोहितके हाथसे प्रस्तर-फलकके पास गिरता है अथवा जो पवित्रके ऊपर स्थापित हुआ है, उन सबका मन ही मन नमस्कार करते हुए हम हवन करते हैं।

१३ तुम्हारा जो रस बाहर हुआ है और जो तुम्हारा अंशु स्रक् नामक पात्रके नीचे गिरा है, दोनोंका बृहस्पतिदेव सेचन करें। इससे हमें धन मिलेगा।

१४ वनस्पति दुग्धके समान रससे परिपूर्ण हैं। हमारा स्तोत्र—वचन रसमय दुग्धके सार रससे पूर्ण है। इन सारे पदार्थोंसे हमारा संस्कार करो।

## १८ सूक्त

मृत्यु, धाता, त्वष्टा, अग्निसंस्कार आदि देवता । यम-पुत्र संकुसुक ऋषि । जगती, गायत्री, पङ्क्ति, अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द ।

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्वइतरो देवयानात् ।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान् ॥१॥
मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः ॥२॥
इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य ।
प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ॥३॥
इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम् ।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन ॥४॥
यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु ।
यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम् ॥५॥

१ मृत्युदेव, तुम उस मार्गसे जाओ, जो देवयान-मार्गसे दूसरा है । तुम नेत्रवाले हो और सब कुछ जानते हो। मैं तुम्हारे लिये कहता हूँ । हमारे पुत्र, पौत्र आदिको नहीं मारना। वीरोंको भी नहीं मारना।

२ मृत व्यक्तिके सम्बन्धियो, पितृयान (मृत्यु-मार्ग) को छोड़ो। इससे दीर्घ जीवन प्राप्त होगा। यज्ञानुष्ठाता यजमानो, तुम पुत्र, पौत्र, गौ आदिसे युक्त होकर इस जन्म और पूर्व जन्मके पापों-से शून्य होकर पवित्र बनो।

३ जीवित मनुष्य मृत व्यक्तियोंके पास लौट आवें। आज हमारा पितृमेध-यज्ञ कल्याणकर हो। हम उत्तम रीतिसे नर्तन और क्रीड़नके लिये समर्थ हों। हम दीर्घ आयु पावें।

४ पुत्र, पौत्र आदिकी रक्षाके लिये, मृत्युके सामने, रोकनेके लिये, पाषाणका मैं व्यवधान करता हूँ, ताकि मरणमार्ग शीघ्र न आने पावे। ये सैकड़ों वर्ष जीवित रहें। शिला-खण्डसे मृत्युको दूर करो।

५ जैसे दिनपर दिन बीतते हैं, ऋतुके पश्चात् ऋतु बीतती है और पूर्वकालीन पितरोंके रहते आधुनिक पुत्र आदि नहीं मरते, वैसे ही हे धाता, हमारे वंशजोंकी आयु स्थिर रखो—अकाल मृत्यु न होने पावे।

आ रोहतायुर्जरसं वृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ठ ।
इह त्वष्टा सुजनिमा सजोषा दीर्घमायुः करति जीवसे वः ॥६॥
इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं विशन्तु ।
अनश्रवोऽनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे ॥७॥
उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गतासुमेतमुप शेष एहि ।
हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभि सं बभूथ ॥८॥
धनुर्हस्तादाददानो मृतस्यास्मे क्षत्राय वर्चसे बलाय ।
अत्रैव त्वमिह वयं सुवीरा विश्वाः स्पृधो अभिमातीर्जयेम ॥९॥
उप सर्प मातरं भूमिमेतामुरुव्यचसं पृथ्वीं सुशेवाम् ।
ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत एषा त्वा पातु निर्ऋतेरुपस्थात् ॥१०॥

६ मृत व्यक्तिके पुत्रादिको, वार्द्धक्य प्राप्त करते हुए, आयुमें अधिष्ठित रहो। ज्येष्ठके पश्चात् कनिष्ठके क्रमसे तुमलोग कार्यमें अवस्थित रहो। शोभन-जन्मा त्वष्टा देव, तुम लोगोंके साथ, इस कर्ममें प्रवृत्त हुए तुम लोगोंकी आयु लम्बी करें ।

७ ये सधवा और शोभन पतिवाली स्त्रियाँ घृताञ्जनके साथ अपने घरोंको जायँ । अश्रु-शून्य, मानस-रोग-रहित और शोभन धनवाली होकर ये स्त्रियाँ सबसे आगे घरोंमें जायँ ।

८ मृत व्यक्तिकी पत्नी, पुत्रादिके गृहका विचार करके, यहाँसे उठो। यह तुम्हारा पति मरा हुआ है। इसके पास तुम ( व्यर्थ ) सोयी हुई हो। चलो; क्योंकि पणिग्रहण और गर्भ धारण करानेवाले पतिके साथ तुम स्त्री-कर्त्तव्य कर चुकी हो। तुमने इसके प्राण-गमनका निश्चय कर लिया है; इसलिये घर लौट चलो ।

९ अपनी प्रजाके रक्षण, तेज और बलके लिये मैं मृत व्यक्तिके हाथसे धनु ले कर बोलता हूँ । मृत, तुम यहीं रहो । हम वीर पुत्रोंवाले हों। हम सारे अभिमानी शत्रुओंको जीतें ।

१० मृत, मातृ-स्वरूपिणी, विस्तीर्ण, सर्वव्यापिनी और सुखदात्री पृथिवीके पास जाओ। यह यौवनसे युक्त स्त्रीके समान तुम्हारे लिये राशीकृत मेषलोमके सदृश कोमल-स्पर्शा हैं। तुमने दक्षिणा दी है वा यज्ञ किया है। यह पृथिवी मृत्युके पाससे अस्थि-रूप तुम्हारी रक्षा करें ।

उच्छ्वञ्चस्व पृथिवि मा निबाधथाः सूपायनास्मै भव सूपवञ्चना ।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि ॥११॥
उच्छ्वञ्चमाना पृथिवी सु तिष्ठतु सहस्रं मित उप हि श्रयन्ताम् ।
ते गृहासो घृतश्चुतो भवन्तु विश्वाहास्मै शरणाः सन्त्वत्र ॥१२॥
उत्ते स्तभ्नामि पृथिवीं त्वत् परीमं लोगं निदधन्मो अहं रिषम् ।
एतां स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रा यमः सादना ते मिनोतु ॥१३॥
प्रतीचीने मामहनीष्वाः पर्णमिवादधुः ।
प्रतीचीं जग्रभा वाचमश्वं रशनया यथा ॥१४॥

---

११ पृथिवी, तुम इस मृतको उन्नत करके रखो। इसे पीड़ा नहीं देना। इसके लिये सुपरिचारिका और सुप्रतिष्ठा हाओ। जैसे माता पुत्रको अञ्चलसे ढकती है, वैसे ही, हे भूमि, इस अस्थिरूप मृतको आच्छादित करो।

१२ इसके ऊपर स्तूपाकार होकर पृथिवी भली भाँति अवस्थित हों। सहस्र धूलियाँ इसके ऊपर अवस्थिति करें। वे इसके लिये घृतपूर्ण गृहके समान हों। प्रतिदिन वे इसके आश्रय हों।

१३ अस्थित-कुम्भ, तुम्हारे ऊपर पृथिवीको उत्तम्भित करके रखता हूं। तुम्हारे ऊपर मैं लोष्ट्र अर्पण करता हू, ताकि तुम्हारे ऊपर मिट्टी जाकर तुम्हें नष्ट न कर सके। इस स्थूणा ( खूँटी ) को पितर लोग धारण कर। पितृपति यम यहाँ तुम्हारा वासस्थान कर द।

१४ प्रजापति, जैसे वाणके मूलमें पर्ण ( पक्ष ) लगाते हैं, वैसे ही प्रतिपूज्य संवत्सर-रूप दिनमें मुझ संकुसुक ऋषिको सारे देवोंने रखा है। जैसे शीघ्रगामी अश्वको रस्सीसे रोका जाता है, वैसे ही मेरी पूज्य स्तुतिको रखो।

---

# षष्ठ अध्याय समाप्त

# सप्तम अध्याय

## १९ सूक्त

गौ देवता । यम-पुत्र मथित ऋषि । गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

निवर्तध्वं मानु गातास्मान्त्सिषक्त रेवतीः ।
अग्नीषोमा पुनर्वसू अस्मे धारयतं रयिम् ॥१॥
पुनरेना निवर्तय पुनरेना न्या कुरु ।
इन्द्र एणा नियच्छत्वग्निरेना उपाजतु ॥२॥
पुनरेता निवर्तन्तामस्मिन् पुष्यन्तु गोपतौ ।
इहैवाग्ने निधारयेह तिष्ठतु या रयिः ॥३॥
यन्नियानं न्ययनं संज्ञानं यत परायणम् ।
आवर्तनं निवर्तनं यो गोपा अपि तं हुवे ॥४॥

---

१ गायो, तुमलोग हमारे पास आओ । हमारे सिवा दूसरेके पास मत जाओ । धनवती गायो, हमें दुग्ध दान करके सेवित करो । बार-बार धन देनेवाले अग्नि और सोम, तुम लोग हमें धन दो ।

२ इन गायोंको बार-बार हमारे सामने करो । इन्हें अपने वशमें करो । इन्द्र भी इन्हें तुम्हारे वशमें करें । अग्नि इन्हें उपयोगिनी करें ।

३ ये गायें बार-बार मेरे पास आवें । ये मेरे वशमें होकर पुष्ट हों । अग्नि, इन्हें मेरे पास रखो । यह गोधन मेरे पास रहें ।

४ मैं गोसहित गोष्ठकी प्रार्थना करता हूं । गौओंके गृह आनेकी प्रार्थना करता हूं । गोसम्मेलन की भी प्रार्थना करता हूं । गोचरणकी भी प्रार्थना करता हूं । चरकर उनके घर आनेकी भी प्रार्थना करता हूं । गोपालकी भी प्रार्थना करता हूँ ।

य उदानड्व्ययनं य उदानट् परायणम्।
आवर्तनं निवर्तनमपि गोपा निवर्तताम् ॥५॥
आ निवर्त निवर्तय पुनर्न इन्द्र गा देहि। जीवाभिर्भु नजामहै ॥६॥
परि वो विश्वतो दध ऊर्जा घृतेन पयसा।
ये देवाः के च यज्ञियास्ते रय्या संसृजन्तु नः ॥७॥
आ निवर्तन वर्तय नि निवर्तन वर्तय।
भूम्याश्चतस्रः प्रदिशस्याभ्य एना निवर्तय ॥८॥

## २० सूक्त

अग्नि देवता। प्रजापति-पुत्र विमद ऋषि। विराट्, अनुष्टुप्, त्रिष्टुप् आदि छन्द।

भद्रं नो अपिवातय मनः।
भद्रं नो अपिवातय मनः ॥१॥
अग्निमीळे भुजां यविष्ठं शासा मित्रं दुर्धरीतुम्।
यस्य धर्मन्त्स्वरेनीः सपर्यन्ति मतुरूधः ॥२॥

---

५ जो गोपाल (गायें चरानेवाला) चारो ओर गायोंकी खोज करता है, जो गायोंको घरपर ले आता है और जो गायें चराता है, वह कुशल-पूर्वक घरपर लौट आवे।

६ इन्द्र, तुम हमारी ओर होओ। गायोंको हमारी ओर करो। हमें गायें दो। हम चिरञ्जीविनी गायोंका दुग्ध भोगें।

७ देवो, मैं तुम लोगोंको प्रचुर अन्न, घृत और दुग्ध आदि निवेदित कर देता हूं। फलतः जो यज्ञ--योग्य देवता हैं, वे हमें गोधन दें।

८ चरवाहा, गायोंको मेरे पास ले आओ। गायो, तुम भी आओ। चरवाहा, गायोंको लौटाओ। गायो, लौट आओ। सूक्तकर्ता ऋषि, मैं कहाँसे लौटाऊँ? हम कहाँसे लौटें? (उत्तर--) चारों दिशाओंसे गायोंको लौटाओ। गायो, तुम भी इन दिशाओंसे लौट आओ।

१ अग्नि, हमारे मनको शुभ करो—अपने स्तोत्रके योग्य करो।

२ हविका भोग करनेवाले देवोंमें कनिष्ठ, अतीव युवक, सबके मित्र और दुर्द्धर्ष अग्निकी मैं स्तुति न करता हूँ। बछड़े गोस्तन का आश्रय करके प्राण धारण करते हैं।

यमासा कृपनीळं भासाकेतुं वर्धयन्ति । भ्राजते श्रेणिदन् ॥३॥

अर्यो विशां गातुरेति प्र यदानड्दिवो अन्तान् । कविरभ्रं दीद्यानः ॥४॥

जुषद्धव्या मनुषस्योर्ध्वस्तस्थावृभ्वा यज्ञे । मिन्वन्त्सद्म पुर एति ॥५॥

स हि क्षेमो हविर्यज्ञः श्रुष्टीदस्य गातुरेति । अग्निं देवा वाशीमन्तम् ॥६॥

यज्ञासाहं दुवस इषेऽग्निं पूर्वस्य शेवस्य । अद्रेः सूनुमायुमाहुः ॥७॥

नरो ये के चास्मदा विश्वेत्ते वाम आ स्युः । अग्निं हविषा वर्धन्तः ॥८॥

कृष्णः श्वेतोऽरुषो यामो अस्य ब्रध्न ऋज्र उत शोणो यशस्वान् ।
हिरण्यरूपं जनिता जजान ॥९॥

एवा ते अग्ने विमदो मनीषामूर्जो नपादमृतेभिः सजोषाः ।
गिर आ वक्षत् सुमतीरियान इषमूर्जं सुक्षितिं विश्वमाभाः ॥१०॥

---

३ कर्माधार और ज्वाला-रूप अग्निको स्तोतालोग वर्द्धित करते हैं । अग्नि स्तोताओंको अभीष्ट फल देनेवाले हैं ।

४ अग्नि यजमानोंके लिये आश्रणीय हैं । जिस समय अग्नि दीप्त होकर ऊपर उठते हैं, उस समय मेधावी अग्नि द्युलोकतक व्याप्त कर लेते हैं—मेघको भी व्याप्त कर लेते हैं।

५ यजमानके यज्ञमें हविका सेवन करनेवाले अग्नि, अनेक ज्वालाओंसे युक्त होकर ऊपर उठते हैं । अग्नि उत्तर वेदीको मापते हुए सामने आते हैं ।

६ वही अग्नि सबके पालनके कारण हैं, यज्ञ भी वही हैं, पुरोडाश आदि भी हैं । अग्नि देवोंको बुलानेके लिये जाते हैं ।

७ जो अग्नि देवोंको बुलानेवाले हैं, जिन्हें लोग पत्थरका पुत्र कहते हैं और जो यज्ञके धारक हैं, उत्कृष्ट सुखकी प्राप्तिके लिये उन्हीं अग्निकी सेवा करनेकी मैं अभिलाषा करता हूँ ।

८ पुरोडाश आदिके द्वारा अग्निका संवर्द्धन करनेवाले जो हमारे पुत्र, पौत्रादि हैं, वे संभोग-योग्य पशु आदि धनमें बैठेंगे, ऐसी हम आशा करते हैं ।

९ अग्निके जानेके लिये जो वृहत् रथ है, वह कृष्ण-वर्ण, शुभ्रवर्ण, सरल-गन्ता, रक्तवर्ण और बहुमूल्य वा कीर्त्तिशाली हैं । सुवर्णके सदृश उज्ज्वल करके विधाताने उसे बनाया है ।

१० अग्नि, बल वा वनस्पतिके पुत्र हो । तुम अमर धनसे युक्त हो ! अपनी प्रकृष्ट बुद्धिकी इच्छा करनेवाले विमद नामके ऋषिने तुम्हारे लिये ये स्तोत्र कहे हैं । तुम इन उत्कृष्ट स्तुतियोंको प्राप्त करके विमदको अन्न, बल, शोभन निवास और जो कुछ देने योग्य है, सो सब धन दो ।

# २१ सूक्त

देवता और ऋषि पूर्ववत्। आस्तार-ङ्क्ति छन्द—प्रत्येक मन्त्रमें पहलेके दो चरण गायत्री और अन्तके दो चरण जगती छन्द।

आग्निं न स्ववृक्तिभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
यज्ञाय स्तीर्णबर्हिषे वि वो मदे शीरं पावकशोचिषं विवक्षसे ॥१॥
त्वामु ते स्वाभुवः शुम्भन्त्यश्वराधसः ।
वेति त्वामुपसेचनी वि वो मद ऋजीतिरग्न आहुतिर्विवक्षसे ॥२॥
त्वे धर्माण आसते जुहूभिः सिञ्चतीरिव ।
कृष्णा रूपाण्यर्जुना वि वो मदे विश्वा अधि श्रियो धिषे विवक्षसे ॥३॥
यमग्ने मन्यसे रयिं सहसावन्नमर्त्य ।
तमा नो वाजसातये वि वो मदे यज्ञेषु चित्रमा भरा विवक्षसे ॥४॥
अग्निर्जातो अथर्वणा विदद्विश्वानि काव्या ।
भुवद्दूतो विवस्वतो वि वो मदे प्रियो यमस्य काम्यो विवक्षसे ॥५॥

१ अपनी बनायी स्तुतियोंसे देवाह्वाता अग्निको, विस्तृत कुशवाले यज्ञके लिये, हम वरण करते हैं। अग्नि, तुम महान् हो। वनस्पतियोंमें रहनेवाले और शोधक-दीप्ति ज्वालाको विमदके लिये प्रेरित करो।

२ अग्नि, दीप्त और व्याप्त-धन यजमान तुम्हें सुशोभित करते हैं। क्षरणशील और सरल-गति आहुति, अग्निदेव, तुम्हारे पास तृप्तिके लिये जाती है। तुम महान् हो।

३ यज्ञके धारक ऋत्विक् लोग होम-पात्रोंसे वैसे ही तुम्हारी सेवा करते हैं, जैसे जल पृथिवीको सींचता है। अग्नि, देवोंके मदके लिये तुम कृष्णवर्ण ज्वालारूपों और सारी शोभाको धारण करते हो। तुम महान् हो।

४ अमर और बली अग्नि, तुम जिस धनको श्रेष्ठ समझते हो, उस विचित्र धनको, अन्न-लाभके लिये, हमारे निमित्त ले आओ। तुम समस्त देवोंकी तृप्तिके लिये धन ले आओ। तुम महान् हो।

५ अथर्वा ऋषिने अग्निको उत्पन्न किया था। अग्नि सब प्रकारके स्तोत्रोंको जानते हैं। अग्नि, तुम देवाह्वानके लिये यजमानके दूत हो। अग्नि यजमानके प्रिय हैं। अग्नि, तुम कमनीय और महान् हो।

त्वां यज्ञेष्वीलतेऽग्ने प्रयत्यध्वरे ।
त्वं वसूनि काम्या वि वो मदे विश्वा दधासि दाशुषे विवक्षसे ॥६॥
त्वां यज्ञेष्वृत्विजं चारुमग्ने निषेदिरे ।
घृतप्रतीकं मनुषो वि वो मदे शुक्रं चेतिष्ठमक्षभिर्विवक्षसे ॥७॥
अग्ने शुक्रेण शोचिषोरु प्रथयसे बृहत् ।
अभिक्रन्दन्वृषायसे वि वो मदे गर्भं दधासि जामिषु विवक्षसे ॥८॥

## २२ सूक्त

इन्द्र देवता । विमद ऋषि । वृहती, त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द ।

कुह श्रुत इन्द्रः कस्मिन्नद्य जने मित्रो न श्रूयते ।
ऋषीणां वा यः क्षये गुहा वा चर्कृषे गिरा ॥१॥
इह श्रुत इन्द्रो अस्मे अद्य स्तवे वज्यृचीषमः ।
मित्रो न यो जनेष्वायशश्चक्रे असाम्या ॥२॥

---

६ अग्नि, यज्ञका आरम्भ होनेपर ऋत्विक् और यजमान तुम्हारी स्तुति करते हैं। अग्नि, तुम हविर्दाता विमदके लिये सब प्रकारके धन देते हो। इसलिये तुम महान् हो।

७ अग्नि, तृप्तिके लिये होता, रमणीय, आहुतसे पूर्ण मुख वाले, जाज्वल्यमान और व्यापक तेजके कारण ज्ञानी तुम्हें यजमान लोग यज्ञमें नियमतः स्थापित करते हैं। तुम महान् हो।

८ अग्नि, तुम महान् हो। प्रदीप्त तेजसे तुम प्रसिद्ध होते हो। तुम समर-समयमें दर्पित वृषके समान शब्द करते हो। तुम भगिनी-सदृश ओषधियोंमें वीज धारण करते हो। सोमादिका मद उत्पन्न होनेपर तुम महान् होते हो।

---

१ इन्द्र आज कहाँ प्रख्यात हैं? आज वह, मित्रके समान, किस व्यक्तिके पास हैं? इन्द्र क्या ऋषियोंके आश्रम वा किसी गुहामें स्तुत किये जाते हैं?

२ आज इस यज्ञमें इन्द्र प्रख्यात हैं। आज हम उनकी स्तुति करते हैं। इन्द्र वज्रधर और स्तुत्य हैं। इन्द्र स्तोताओंमें मित्रके समान, असाधारण रूपसे, कीर्ति करनेवाले हैं।

महो यस्पतिः शवसो असाम्या महो नृम्णस्य तूतुजिः ।
भर्ता वज्रस्य धृष्णोः पिता पुत्रमिव प्रियम् ॥३॥
युजानो अश्वा वातस्य धुनी देवो देवस्य वज्रिवः ।
स्यन्ता पथा विरुक्मता सृजानः स्तोष्यध्वनः ॥४॥
त्वन्त्या चिद्वातस्याश्वागा ऋज्रा त्मना वहध्यै ।
ययोर्देवो न मर्त्यो यन्ता नकिर्विदाय्यः ॥५॥
अध ग्मन्तोशना पृच्छते वां कदर्था न आ गृहम् ।
आ जग्मथुः पराकाद्दिवश्च ग्मश्च मर्त्यम् ॥६॥
आ न इन्द्र पृक्षसेऽस्माकं ब्रह्मोद्यतम् ।
तत्त्वा याचामहेऽवः शुष्णं यद्धन्नमानुषम् ॥७॥

३ जो इन्द्र बल-पति, अनन्तगुण और स्तोताओंके लिये महान् अन्नके दाता हैं, वह शत्रुओंको रगड़नेवाले वज्रके धारक हैं। जैसे पिता प्रिय पुत्रकी रक्षा करता है, वैसे ही इन्द्र हमारी रक्षा करें।

४ वज्रधर इन्द्र, तुम द्योतमान हो वायुदेवसे भी शीघ्र जानेवाले और उचित मार्गसे जानेवाले अपने हरि नामक अश्वोंको रथमें जोतकर और युद्ध-पथको उत्पन्न करके सदा स्तुत होते हो।

५ इन्द्र, तुम स्वयं उन वायु-वेग-तुल्य और सरल-गामी अश्वोंको चलाकर हमारे अभिमुख जाते हो। देवोंमेंसे कोई भी ऐसा नहीं है, जो तुम्हारे इन दोनों घोड़ोंका सञ्चालन कर सके और इनके बलको जान सके।

६ इन्द्र और अग्नि, जिस समय तुम अपने स्थानोंको जाने लगे, उस समय भार्गव उशनाने तुमसे सम्भाषण किया—तुमलोग किस प्रयोजनसे, इतनी दूरसे हमारे यहाँ आये हो? (मेरे विचारसे) तुम लोग द्युलोक और भूलोकसे जो मेरे यहाँ आये हो, वह केवल तुम लोगोंका अनुग्रह है।

७ इन्द्र हमने इस यज्ञकी सामग्री प्रस्तुत की है। तुम जबतक तृप्त नहीं होओ, तबतक उसका भक्षण करो। हम तुमसे अन्न और उसका रक्षण चाहते हैं, जिससे राक्षसोंका विनाश हो सके। तुमसे हम वैसा बल भी

अकर्मा दस्युरभि नो अमन्तुरन्यव्रतो अमानुषः ।
त्वं तस्यामित्रहन् वधर्दासस्य दम्भय ॥८॥
त्वं न इन्द्र शूर शूरैरुत त्वोतासो बर्हणा ।
पुरुत्रा ते वि पूर्तयो नवन्त क्षोणयो यथा ॥९॥
त्वं तान्वृत्रहत्ये चोदयो नॄन् कार्पाणे शूर वज्रिवः ।
गुहा यदी कवीनां विशां नक्षत्रशवसाम् ॥१०॥
मक्षू ता त इन्द्र दानाप्नस आक्षाणे शूर वज्रिवः ।
यद्ध शुष्णस्य दम्भयो जातं विश्वं सयावभिः ॥११॥
माकुध्र्यगिन्द्र शूर वस्वीरस्मे भूवन्नभिष्टयः ।
वयं वयन्त आसां सुम्ने स्याम वज्रिवः ॥१२॥
अस्मे ता त इन्द्र सन्तु सत्याहिंसन्तीरुपस्पृशः ।
विद्याम यासां भुजो धेनूनां न वज्रिवः ॥१३॥

---

८ हमारी चारो ओर यज्ञ-शून्य दस्युदल है। वह कुछ नहीं मानता, श्रुत्यादि कर्मोंसे शून्य है और उसकी प्रकृति आसुरी है। शत्रु-नाशक इन्द्र, इस दस्यु-जातिका विनाश करो ।

९ विक्रान्त इन्द्र, तुम शूर मरुतोंके साथ हमारी रक्षा करो। तुमसे रक्षित होकर हम शत्रु-विनाशमें समर्थ हों। जैसे मनुष्य अपने स्वामीकी सेवाके लिये उसे वेष्टित करते हैं, वैसे ही तुम्हारे दिये प्रचुर पदार्थ स्तोताओंको वेष्टित करते हैं।

१० वज्रधर इन्द्र, वृत्र-बधके लिये तुम प्रसिद्ध मरुतोंको उस समय प्रेरित करते हो, जिस समय तुम स्तोता कवियोंका, नक्षत्रवासी देवोंके प्रति, सुन्दर स्तोत्र सुनते हो ।

११ शूर और वज्रधर इन्द्र, दान करना ही तुम्हारा कर्म है। युद्ध-क्षेत्रमें बहुत शीघ्र तुम्हारा कर्म होता है। तुमने मरुतोंके साथ शुष्णके सारे वंशका विनाश कर डाला है।

१२ शूर इन्द्र, हमारी ये महती वासनाएँ वृथा न होने पावें। वज्रधर इन्द्र, हमारी सारी लालसाएँ फलवती होकर सुखकरी हों।

१३ हमारे लिये तुम्हारा अनुग्रह हो, ताकि हमारी हिंसा नहीं हो। जैसे लोग गायके दूध आदिका भोग करते हैं, वैसे ही हम तुम्हारे प्रसादका फल भोगें।

अहस्ता यदपदी वर्धत क्षाः शचीभिर्वेद्यानाम् ।
शुष्णं परि प्रदक्षिणिद्विश्वायवे नि शिश्नथः ॥१४॥
पिबापिबेदिन्द्र शूर सोमं मा रिषण्यो वसवान वसुः सन् ।
उत त्रायस्व गृणतो मघोनो महश्च रायो रेवतस्कृधी नः ॥१५॥

## २३ सूक्त

देवता और ऋषि पूर्ववत् । त्रिष्टुप्, अभिसरिणी ( दो चरण दस-दस अक्षरोंके और अन्तके दो बारह-बारह चरणोंके ) तथा जगती छन्द ।

यजामह इन्द्रं वज्रदक्षिणं हरीणां रथ्यं विव्रतानाम् ।
प्र श्मश्रु दोधुवदूर्ध्वथा भूद्वि सेनाभिर्दयमानो वि राधसा ॥१॥
हरी न्वस्य या वने विदे वस्विन्द्रो मघैर्मघवा वृत्रहा भुवत् ।
ऋभुर्वाज ऋभुक्षाः पत्यते शवोऽव क्ष्णौमि दासस्य नाम चित् ॥२॥

---

१४ देवोंकी क्रियाके द्वारा यह पृथिवी हस्त-पाद-शून्या होकर चारो ओर बढ़ी है। पृथिवीकी प्रदक्षिणा करके और चारो ओर गमन करके तुमने शुष्ण नामक असुरकी हिंसा की है ।

१५ शूर इन्द्र, सोमका शीघ्र पान करो । इन्द्र, तुम धनी हो । प्रशस्त होकर तुम हमारी हिंसा नहीं करना । तुम स्तोता यजमानकी रक्षा करना । हमें प्रचुर धनसे धनी बनाओ ।

१ जो इन्द्र विविध कर्म-कुशल और हरितवर्ण अश्वोंको रथमें जोतते हैं और जिनके दाहिने हाथमें वज्र है, हम उनकी पूजा करते हैं । सोमपानके अनन्तर इन्द्र अपने श्मश्रु ( मूँछ, दाढ़ी ) को हिला कर और विस्तृत सेना तथा अन्न लेकर विपक्षियोंका संहार करनेके लिये ऊपर गये वा प्रकट हुए। ‡

२ इन्द्रके हरितवर्ण दो अश्वोंने वनमें बढ़िया घास खायी हैं । इन दोनोंको लेकर और प्रचुर धनसे धनी होकर इन्द्रने वृत्रको नष्ट किया। इन्द्र विराट्-मूर्त्ति, बली, दीप्तिशाली और धनके अधिपति हैं । मैं दस्यु-जातिका नाम तक नष्ट कर देना चाहता हूं ।

‡ क्या उन दिनों सभी दाढ़ी-मूँछ रखते थे ?

यदा वज्रं हिरण्यमिदथा रथं हरी यमस्य वहतो वि सूरिभिः ।
आ तिष्ठति मघवा सनश्रुत इन्द्रो वाजस्य दीर्घश्रवसस्पतिः ॥३॥
सो चिन्नु वृष्टिर्यूथ्या स्वा सचाँ इन्द्रः श्मश्रूणि हरिताभि प्रुष्णुते ।
अव वेति सुक्षयं सुते मधूदिद्धूनोति वातो यथा वनम् ॥४॥
यो वाचा विवाचो मृध्रवाचः पुरू सहस्राशिवा जघान ।
तत्तदिदस्य पौंस्यं गृणीमसि पितेव यस्तवीषीं वावृधे शवः ॥५॥
स्तोमं त इन्द्र विमदा अजीजनन्नपूर्व्यं पुरुतमं सुदानवे ।
विद्मा ह्यस्य भोजनमिनस्य यदा पशुं न गोपाः करामहे ॥६॥
माकिर्न एना सख्या वि यौषुस्तव चेन्द्र विमदस्य च ऋषेः ।
विद्मा हि ते प्रमतिं देव जामिवदस्मे ते सन्तु सख्या शिवानि ॥७॥

---

३ जिस समय इन्द्र सुवर्णमय वज्रका धारण करते हैं, उस समय वह उसी रथपर, विद्वानोंके साथ, चढ़ते हैं, जो रथ हरितवर्णवाले दो अश्वोंके साथ जाता है। इन्द्र चिरप्रसिद्ध धनी और सर्वजन-विदित अन्नराशिके स्वामी हैं।

४ जैसे वृष्टि पशु-समूहको भिंगोती है, वैसे ही इन्द्र हरितवर्ण सोमरसके द्वारा अपनी मूँछ-दाढ़ीको भिगोते हैं। अनन्तर वह शोभन यज्ञ-गृहमें जाते हैं और वहाँ जो मधुर सोमरस प्रस्तुत रहता है, उसे पीकर अपनी मूँछ-दाढ़ीको उसी प्रकार हिलाते हैं, जिस प्रकार वायु वनको हिलाती है।

५ शत्रु लोग नाना प्रकारके वचन बोल रहे थे। इन्द्रने अपने वचनसे उन्हें चुप करके शत-सहस्र शत्रुओंका संहार कर डाला। जैसे पिता, अन्न देकर, पुत्रको बलिष्ठ करता है, वैसे ही वह मनुष्योंको बलिष्ठ करते हैं। हम इन्द्रकी इन शक्तियोंका बखान करते हैं।

६ इन्द्र, विमदवंशीयोंने तुम्हें अतीव प्रतिष्ठित जानकर तुम्हारे लिये अतीव विलक्षण और अतीव विस्तृत स्तुति बनायी है। हम जानते हैं कि, राजा इन्द्रकी तृप्तिका साधन क्या है। जैसे चरवाहा गौको खानेका लोभ दिखाकर उसे अपने पास बुलाता है, वैसे ही हम भी इन्द्रको बुलाते हैं।

७ इन्द्र, तुम्हारे और विमद ऋषिके साथ जो सब मैत्रीका बन्धन है, वह शिथिल न होने पावे। देव, जैसे भ्राता और भगिनीमें मनकी एकता है, वैसे ही तुम्हारे मनका ऐक्य हम जानते हैं। हमारे साथ तुम्हारा कल्याणकर बन्धुत्व स्थिर रहे।

## २४ सूक्त

इन्द्र और अश्विद्वय देवता। विमद ऋषि। अनुष्टुप् और आस्तारपङ्क्ति छन्द।

इन्द्र सोममिमं पिब मधुमन्तं चमू सुतम्।
अस्मे रयिं नि धारय वि वो मदे सहस्रिणं पुरूवसो विवक्षसे ॥१॥
त्वां यज्ञेभिरुक्थैरुप हव्येभिरीमहे।
शचीपते शचीनां वि वो मदे श्रेष्ठं नो धेहि वार्यं विवक्षसे ॥२॥
यस्पतिर्वार्याणामसि रध्रस्य चोदिता।
इन्द्र स्तोतॄणामविता वि वो मदे द्विषो नः पाह्यंहसो विवक्षसे ॥३॥
युवं शक्रा मायाविना समीची निरमन्थतम्।
विमदेन यदीलिता नासत्या निरमन्थतम् ॥४॥
विश्वे देवा अकृपन्त समीच्योर्निष्पतन्त्योः।
नासत्यावब्रुवन्देवाः पुनरावहतादिति ॥५॥

---

१ इन्द्र, प्रस्तर-फलकोंके ऊपर रगड़ा जाकर यह मधुर सोमरस, तुम्हारे लिये, तयार है। पियो। प्रचुर धनवाले इन्द्र, हमें सहस्र-सङ्ख्यक प्रचुर धन दो। विमदके लिये तुम महान् हो।

२ इन्द्र, यज्ञीय सामग्री, स्तुति और होमीय वस्तुके द्वारा हम तुम्हारी आराधना करते हैं। तुम सारे कर्मोंके प्रभु हो। सारे कर्म सफल करते हो। अतीव उत्तम और अभिलषित वस्तु हमें दो। विमदके लिये तुम महान् हो।

३ तुम विविध अभिलषित वस्तुओंके स्वामी हो। तुम उपासकको उपासना-कार्यमें प्रेरित करते हो। तुम स्तोताओंके रक्षक हो। तुम हमें शत्रुके हाथोंसे और पापसे बचाओ।

४ कर्म-निष्ठ अश्विद्वय, तुम्हारा कार्य अद्भुत है। तुम सत्यरूप हो। जिस समय विमदने तुम्हारी स्तुति की थी, उस समय काठोंमें घर्षण करके और दोनोंने एकत्र होकर अग्नि-मन्थन किया था—पृथक्-पृथक् नहीं।

५ अश्विद्वय, जिस समय दोनों अरणि ( अग्नि-मन्थन-काष्ठ ), तुम्हारे हाथोंसे संचालित होकर, इकट्ठे हुए और अग्नि स्फुलिङ्ग बाहर करने लगे, उस समय सारे देवता तुम्हारी प्रशंसा करने लगे। देवता लोग अश्विद्वयको बोलने लगे, "फिर ऐसा करना।"

मधुमन्मे परायणं मधुमत् पुनरायनम् ।
ता नो देवा देवतया युवं मधुमतस्कृतम् ॥६॥

## २५ सूक्त

सोम देवता। विमद ऋषि। आस्तार-पङ्क्ति छन्द।

भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम् ।
अधा ते सख्ये अन्धसो वि वो मदे रणन्गावो न यवसे विवक्षसे ॥१॥
हृदिस्पृशस्त आसते विश्वेषु सोम धामसु ।
अधा कामा इमे मम वि वो मदे वितिष्ठन्ते वसूयवो विवक्षसे ॥२॥
उत व्रतानि सोम ते प्राहं मिनामि पाक्या ।
अधा पितेव सूनवे वि वो मदे मृळा नो अभि चिद्वधाद्विवक्षसे ॥३॥
समु प्र यन्ति धीतयः सर्गासोऽवताँइव ।
क्रतुं नः सोम जीवसे वि वो मदे धारया चमसाँइव विवक्षसे ४॥

---

६ अश्विद्वय, मेरा बाहर जाना प्रीतिकर हो। मेरा पुनरागमन भी वैसा ही मधुर हो—मैं जब जहाँ जाऊँ, प्रीति प्राप्त करूं। दोनों देव, अपनी दिव्यशक्तिके बलसे हमें सभी विषयोंमें सन्तुष्ट करो।

१ सोम, हमारे मनको इस प्रकार उत्तम रूपसे प्रेरित करो कि, वह निपुण और कर्मनिष्ठ हो। जैसे गायें घासमें रत होती हैं, वैसे ही स्तोता लोग अन्नके प्रति रत होते हैं। विमदके लिये तुम महान् हो।

२ सोम, पुरोहित लोग स्तुतिके द्वारा तुम्हारे चित्तका हरण करके चारो ओर बैठते हैं। धन-प्राप्तिके लिये मेरे मनमें नाना प्रकारकी कामनाएँ उत्पन्न होती हैं। विमदके लिये तुम महान् हो।

३ सोम, अपनी इस परिणत बुद्धिके द्वारा मैं तुम्हारे कार्यका परिमाण करके देखता हूं। जैसे पिता पुत्रके प्रति अनुकूल होता है, वैसे ही तुम हमारे लिये होओ। शत्रु-संहार करके हमें सुखी करो। विमदके लिये महान् हो।

४ सोम, जैसे कलस जल निकालनेके लिये कुएँके भीतर जाता है, वैसे ही हमारे सारे स्तोत्र तुम्हारे लिये जाते हैं। हमारो प्राण-रक्षाके लिये इस यज्ञको सुसम्पन्न करो। जैसे जल-पिपासु तीरके पास पान-पात्र धारण करता है, वैसे ही तुम धारण करो। तुम महान् हो।

तव त्ये सोम शक्तिभिर्निकामासो व्यृण्विरे ।

गृत्सस्य धीरास्तवसो वि वो मदे व्रजं गोमन्तमश्विनं विवक्षसे ॥५॥

पशुं नः सोम रक्षसि पुरुत्रा विष्ठितं जगत् ।

समाकृणोषि जीवसे वि वो मदे विश्वा संपश्यन् भुवना विवक्षसे ॥६॥

त्वं नः सोम विश्वतो गोपा अदाभ्यो भव ।

सेध राजन्नप स्रिधो वि वो मदे मा नो दुःशंस ईशता विवक्षसे ॥७॥

त्वं नः सोम सुक्रतुर्वयोधेयाय जागृहि ।

क्षेत्रवित्तरो मनुषो वि वो मदे द्रुहो नः पाह्यंहसो विवक्षसे ॥८॥

त्वं नो वृत्रहन्तमेन्द्रस्येन्दो शिवः सखा ।

यत सीं हवन्ते समिथे वि वो मदे युध्यमानास्तोकसातौ विवक्षसे ॥९॥

---

५ विविध-फलाभिलाषी सारे धीर व्यक्तियोंने अनेक प्रकारके कार्य करके तुम्हारा परितोष किया है; क्योंकि तुम महान् और मेधावी हो। फलतः तुम गौ और अश्वसे युक्त पशुशाला हमें दो। तुम महान् हो ।

६ सोम, हमारे पशुओंकी रक्षा करो और नाना मूर्त्तियोंमें स्थित विशाल भुवनोंकी रक्षा करो। हमारे प्राण-धारणके लिये सारे भुवनोंका अन्वेषण करके जीवनोपाय ले आ देते हो। विमदके लिये तुम महान् हो ।

७ सोम, तुम सब प्रकारसे हमारे लिये रक्षक होओ; क्योंकि तुम दुर्द्धर्ष हो । राजा सोम, शत्रुओंको दूर कर दो। हमारा निन्दक हमारा कुछ न करने पावे। विमदके लिये तुम महान् हो।

८ सोम, तुम्हारा कार्य अतीव सुन्दर है। तुम हमें अन्न देनेके लिये सतर्क रहते हो। हमें भूमि देनेके लिये तुम्हारे सदृश कोई नहीं है। अनिष्ट-कर्त्ताओंके हाथसे हमारी रक्षा करो। पापसे भी बचाओ। तुम महान् हो ।

९ जिस समय भयंकर युद्ध उपस्थित होता है और अपनी सन्तानोंका उसमें बलिदान करना पड़ता है और जिस समय योद्धा शत्रु चारो ओरसे हमें, युद्धके लिये, बुलाते हैं, उस समय, हे सोम, तुम इन्द्रके सहायक होते हो, उन्हें विपदोंसे बचाते हो; क्योंकि तुम्हारे समान शत्रु-संहारक कोई नहीं है। विमदके लिये महान् हो ।

अयं घ स तुरो मद इन्द्रस्य वर्धत प्रियः ।
अयं कक्षीवतो महो वि वो मदे मतिं विप्रस्य वर्धयद्विवक्षसे ॥१०॥
अयं विप्राय दाशुषे वाजाँ इयर्ति गोमतः ।
अयं सप्तभ्य आ वरं वि वो मदे प्रान्धं श्रोणं च तारिषद्विवक्षसे ॥११॥

---

## २६ सूक्त

पूषा देवता। विमद ऋषि। उष्णिक् और अनुष्टुप् छन्द।

प्र ह्यच्छा मनीषाः स्पार्हा यन्ति नियुतः ।
प्र दस्रा नियुद्रथः पूषा अविष्टु माहिनः ॥१॥
यस्य त्यन्महित्वं वाताप्यमयं जनः ।
विप्र आ वंसद्धीतिभिश्चिकेत सुष्टुतीनाम् ॥२॥
स वेद सुष्टुतीनामिन्दुर्न पूषा वृषा ।
अभि प्सुरः प्रुषायति व्रजं न आ प्रुषायति ॥३॥

---

१० सोम सारे कार्योंमें क्षिप्रकारी हैं। वह मदकर और इन्द्रके तर्पक हैं। सोमने महामेधावी कक्षीवान् ऋषिकी बुद्धिको बढ़ाया था। विमदके लिये तुम महान् हो।

११ सोम मेधावी और हविर्दाता यजमानको पशु-युक्त अन्न देते हैं। यही सोम सातो होताओंको श्रेष्ठ धन देते हैं। सोमने आधे दीर्घतमा ऋषिको नेत्र और लंगड़े परावृज ऋषिको पैर दिये थे। विमदके लिये महान् हो।

---

१ अतीव उत्कृष्ट स्तोत्र प्रस्तुत किये गये हैं। उन सबका पूषा देवके प्रति प्रयोग किया जाता है। वह श्रेष्ठ देव सदा रथको जोतनेवाले हैं। वह आकर यजमान और उसकी पत्नीकी रक्षा करें।

२ मेधावी यजमान पूषा ( सूर्य ) के मण्डलमें जो जलका भाण्डार है, उसे, यज्ञके द्वारा, पृथिवीपर ले आवें। पूषा देव यजमानका स्तोत्र सुनते हैं।

३ पूषा देव सोमके समान रसका सेचन करनेवाले हैं। वह उत्तम स्तोत्र सुनते हैं। सुशोभित पूषा जलका सिञ्चन करते हैं। हमारे गोष्ठमें भी जलका सिञ्चन करते हैं।

मंसीमहि त्वा वयमस्माकं देव पूषन् ।
मतीनां च साधनं विप्राणां चाधवम् ॥४॥
प्रत्यर्धिर्यज्ञानामश्वहयो रथानाम् ।
ऋषिः स यो मनुर्हितो विप्रस्य यावयत्सखः ॥५॥
आधीषमाणायाः पतिः शुचायाश्च शुचस्य च ।
वासोवायोऽवीनामा वासांसि मर्मृजत् ॥६॥
इनो वाजानां पतिरिनः पुष्टीनां सखा ।
प्र श्मश्रु हर्यतो दूधोद्वि वृथा यो अदाभ्यः ॥७॥
आ ते रथस्य पूषन्नजा धुरं ववृत्युः ।
विश्वस्यार्थिनः सखा सनोजा अनपच्युतः ॥८॥
अस्माकमूर्जा रथं पूषा अविष्टु माहिनः ॥
भुवद्वाजानां वृध इमं नः शृणवद्धवम् ॥९॥

४ पूषा देव, हम मन ही मन तुम्हारा ध्यान करते हैं। तुम हमारे स्तोत्रकी स्फूर्ति कर दो। तुम्हारी सेवाके लिये पुरोहित लोग व्यस्त रहते हैं।

५ पूषा यज्ञके अर्द्धांशके भागी हैं। वह रथमें घोड़े जोत कर जाते हैं। वह मनुष्योंके परम हितैषी हैं। वह बुद्धिशालीके बन्धु हैं। वह उसके शत्रुओंको दूर कर देते हैं।

६ गर्भाधान करनेमें समर्थ और सुन्दर-मूर्त्ति छागो और छाग आदि पशुओंके प्रभु पूषा हैं। वही मेषलोमका वस्त्र (कम्बल) बुनते हैं और वही वस्त्र धो देते हैं।

७ प्रभु पूषा अन्नके अधिपति हैं—प्रभु पूषा सबके लिये पुष्टिकर हैं। वही सौम्यमूर्त्ति और दुर्द्धर्ष पूषा क्रीड़ास्थलमें अपनी मूँछ-दाढ़ीको कँपाने लगे।

८ पूषा देव, छाग तुम्हारे रथकी धुराका वहन करने लगे। तुम अनेक समय पहले जनमे थे। तुम कभी भी अपने अधिकारसे वञ्चित नहीं हुए। सारे याचकोंकी मनःकामना पूर्ण करते हो।

९ वही महीयान् पूषा देव अपने बलके द्वारा हमारे रथकी रक्षा करें। वह अन्न-वृद्धि करें। वह हमारे इस निमन्त्रणके प्रति कर्णपात करें।

# २७ सूक्त

इन्द्र देवता। इन्द्र-पुत्र वसुक्र ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

असत् सु मे जरितः साभिवेगो यत् सुन्वते यजमानाय शिक्षम्।
अनाशीर्दामहमस्मि प्रहन्ता सत्यध्वृतं वृजिनायन्तमाभुम् ॥१॥
यदीदहं युधये संनयान्यदेवयून् तन्वा शूशुजानान्।
अमा ते तुम्रं वृषभं पचानि तीव्रं सुतं पञ्चदशं निषिञ्चम् ॥२॥
नाहं तं वेद य इति ब्रवीत्यदेवयून्त्समरणे जघन्वान्।
यदावाख्यत् समरणमृघावदादिद्ध मे वृषभा प्र ब्रुवन्ति ॥३॥
यदज्ञातेषु वृजनेष्वासं विश्वे सतो मघवानो म आसन्।
जिनामि वेत् क्षेम आ सन्तमाभुं प्र तं क्षिणां पर्वते पादगृह्य ॥४॥
न वा उ मां वृजने वारयन्ते न पर्वतासो यदहं मनस्ये।
मम स्वनात् कृधुकर्णो भयात एवेदनु द्यून् किरणः समेजात् ॥५॥

---

१ (इन्द्रकी उक्ति—) भक्त स्तोता, मेरा यह स्वभाव है कि, सोम-यज्ञके अनुष्ठाता यजमान को मैं अभिलषित फल देता हूं। जो मुझे होमीय द्रव्य नहीं देता, वह सत्यको नष्ट करता है। जो चारो ओर पाप करता फिरता है, उसका मैं सर्वनाश करता हूं।

२ (ऋषिका कथन—) जो लोग देवानुष्ठान नहीं करते और केवल अपने उदरका पोषण करते हैं—जिस समय ऐसे लोगोंके साथ मैं युद्ध करने जाता हूं, उस समय, इन्द्र, तुम्हारे लिये, पुरोहितोंके साथ, स्थूलकाय वृषभका पाक करता हूं। मैं पन्द्रह तिथियोंमेंसे प्रत्येक तिथिको (अथवा त्रिवृत्पञ्चदशस्तोत्रोंसे युक्त माध्यन्दिन सवनको) सोमरस प्रस्तुत करता हूं।

३ (इन्द्रकी उक्ति—) मैंने ऐसा किसीको भी नहीं देखा, जो यह कहे कि, मैंने देवशून्य और देव-कर्मशून्य व्यक्तियोंको संग्राममें मारा है। जिस समय युद्धमें जाकर मैं उनका संहार करता हूं, उस समय सब उस वीरत्वका, विस्तारित, रूपसे, वर्णन करते हैं।

४ जिस समय मैं अनजानते सहसा युद्धमें प्रवृत्त होता हूं, उस समय सारे ऋषि मुझे घेर लेते हैं। प्रजाके मङ्गलके लिये मैं सर्वत्र विहार करनेवाले शत्रुका पराभव करता हूं—उसके पैर पकड़ कर उसे पत्थरके ऊपर फेंक देता हूं।

५ युद्धमें मुझे निरुद्ध करनेवाला कोई नहीं है। यदि मैं चाहूं, तो पर्वत भी मेरा निरोध नहीं कर सकें। जिस समय मैं शब्द करता हूं, उस समय जिसका कान बधिर है, वह भी डर जाय अर्थात् उसके भी कर्ण-कुहरमें वह शब्द पहुँच जाय। और तो और, किरणमाली सूर्य तक प्रतिदिन काँपते हैं।

दर्शन्नत्र शृतपाँ अनिन्द्रान् बाहुक्षदः शरवे पत्यमानान् ।
घृषुं वा ये निनिदुः सखायमध्यू न्वेषु पवयो ववृत्युः ॥६॥
अभूर्वौक्षीर्व्यु आयुरानड् दर्षन्नु पूर्वो अपरो नु दर्षत् ।
द्वे पवस्ते परि तं न भूतो यो अस्य पारे रजसो विवेष ॥७॥
गावो यवं प्रयुता अर्यो अक्षन् ता अपश्यं सहगोपाश्चरन्तीः ।
हवा इदर्यो अभितः समायन् कियदासु स्वपतिश्छन्दयाते ॥८॥
सं यद्वयं यवसादो जनानामहं यवाद उर्वज्रे अन्तः ।
अत्रा युक्तोऽवसातारमिच्छादथो अयुक्तं युनजद्ववन्वान् ॥९॥
अत्रेदु मे मंससे सत्यमुक्तं द्विपाच्च यच्चतुष्पात् संसृजानि ।
स्त्रीभिर्यो अत्र वृषणं पृतन्यादयुद्धो अस्य वि भजानि वेदः ॥१०॥

६ मैं इन्द्र हूं। मुझे जो लोग नहीं मानते, जो लोग देवोंके लिये प्रस्तुत सोमरस बलपूर्वक पी डालते हैं और जो बाहें भाँजते हुए, हिंसा करनेके लिये, आते हैं, उनको मैं तुरत देख लेता हूं। मैं महान् हूं; मैं सबका मित्र हूं। जो लोग मेरी निन्दा करते हैं, उनके लिये मेरे वज्रका प्रहार होता है।

७ (ऋषिका कथन—) इन्द्र, तुमने दर्शन दिया; वृष्टि भी बरसायी। तुमने सुदीर्घ आयु प्राप्त की है। तुमने पहले भी शत्रु-विनाश किया था; पश्चात् भी किया था। इन्द्र सारे विश्वके अपर पारमें हैं; सर्वव्यापक द्यावा-पृथिवी उनको नहीं माप सकते।

८ (इन्द्रकी उक्ति—) अनेक गायें इकट्ठी होकर यव (जौ) खा रही हैं। मैं इन्द्र हूं; स्वामीके समान मैं गायोंकी देख-भाल करता हूं। मैं देखता हूं कि, वह चरवाहोंके साथ चर रही हैं। बुलानेके साथ ही वह गायें अपने स्वामीके पास पहुंच गयीं। स्वामीने गायोंसे प्रचुर दूधका दोहन कर लिया है।

९ (ऋषिकी व्यापक अनुभूति—) संसारमें जो तृण खानेवाले हैं, वह हम ही हैं। जो अन्न वा यव खानेवाले मनुष्य हैं, वह भी हम ही हैं। विस्तृत हृदयाकाशमें जो अन्तर्यामी ब्रह्म हैं, वह मैं ही हूं। हृदयाकाशमें रहनेवाले इन्द्र अपने सेवकको चाहते हैं। योग-शून्य और अतीव विषयी पुरुषको इन्द्र सन्मार्गमें लगाते हैं।

१० (इन्द्रका कथन—) मैं यहाँ जो कहता हूं, वह सत्य है- निश्चय जानो। द्विपद (मनुष्य) और चतुष्पद (पशु)—सबकी सृष्टि मैं करता हूं। जो व्यक्ति स्त्रियोंके साथ पुरुषको युद्ध करनेको भेजता है, उसका धन, विना युद्धके ही, हर कर मैं भक्तोंको दे देता हूं।

यस्यानक्षा दुहिता जात्वास करतां विद्वाँ अभि मन्याते अन्धाम् ।
कतरो मेनिं प्रति तं मुचाते य ईं वहाते य ईं वा वरेयात् ॥११॥
कियती योषा मर्यतो वधूयोः परिप्रीता पन्यसा वार्येण ।
भद्रा वधूर्भवति यत् सुपेशाः स्वयं सा मित्रं वनुते जने चित् ॥१२॥
पत्तो जगार प्रत्यञ्चमत्ति शीर्ष्णा शिरः प्रति दधौ वरूथम् ।
आसीन ऊर्ध्वामुपसि क्षिणाति न्यङ्ङुत्तानामन्वेति भूमिम् ॥१३॥
बृहन्नच्छायो अपलाशो अर्वा तस्थौ माता विषितो अत्ति गर्भः ।
अन्यस्या वत्सं रिहती मिमाय कया भुवा निदधे धेनुरूधः ॥१४॥
सप्त वीरासो अधरादुदायन्नष्टोत्तरात्तात् समजग्मिरन्ते ।
नव पश्चातात् स्थिविमन्त आयन्दश प्राक् सानु वि तिरन्त्यश्नः ॥१५॥

---

११ जिस-किसीकी भी अन्धी कन्याको कौन बुद्धिमान् आश्रय देगा ? जो उसका वहन करता है और जो उसका वरण करता है, उसकी हिंसा कौन करेगा ?

१२ कितनी ऐसी स्त्रियाँ हैं, जो केवल द्रव्यसे ही प्रसन्न होकर स्त्री चाहनेवाले पुरुषके ऊपर आसक्त होती हैं। जो स्त्री भद्र वा सभ्य है, जिसका शरीर सुसंगठित है, वह अनेक पुरुषोंमेंसे अपने मनके अनुकूल प्रिय पात्रको पति स्वीकृत करती है।

१३ सूर्य्यदेव किरणके द्वारा प्रकाशका उद्गिरण करते हैं, अपने मण्डलमें स्थित प्रकाशका ग्रास करते हैं और अपने मस्तकको ढकनेवाली किरणोंको लोगोंके मस्तकोंपर फेंकते हैं। ऊपर स्थित होकर वह अपने पासमें प्रकाश फेंकते हैं और नीचे पृथिवीपर आलोकका विस्तार करते हैं।

१४ जैसे पत्र-हीन वृक्षकी छाया नहीं रहती, वैसे ही इन प्रकाण्ड और विचरणशील सूर्यकी छाया नहीं है। द्युलोकस्वरूप माता स्थिर होकर बोली—"सूर्यस्वरूप गर्भस्थ शिशु पृथक् होकर दुग्धका पान करते हैं। यह (द्युलोक-रूपिणी) गाय दूसरी गाय (अदिति) के बछड़ेको, प्रेमके साथ, चाटकर स्थापित करती है। इस गायने अपने स्तनको रखनेका स्थान कहाँ पाया ?

१५ इन्द्र-रूप प्रजापतिके शरीरसे विश्वामित्र आदि सात ऋषि उत्पन्न हुए। उनके उत्तरी शरीरसे बालखिल्य आदि आठ उत्पन्न हुए। पीछेसे भृगु आदि नौ उत्पन्न हुए। अङ्गिरा आदि दस आगेसे उत्पन्न हुए। ये भोजन (यज्ञांशका भक्षण) करनेवाले द्युलोकके उन्नत प्रदेशको संवर्द्धना करने लगे।

दशानामेकं कपिलं समानं तं हिन्वन्ति क्रतवे पार्याय ।
गर्भं माता सुधितं वक्षणास्ववेनन्तं तुषयन्ती बिभर्ति ॥१६॥
पीवानं मेषमपचन्त वीरा न्युप्ता अक्षा अनु दीव आसन् ।
द्वा धनुं बृहतीमप्स्वन्तः पवित्रवन्ता चरतः पुनन्ता ॥१७॥
वि क्रोशनासो विष्वञ्च आयन् पचाति नेमो नहि पक्षदर्धः ।
अयं मे देवः सविता तदाह द्रुन्न इद्वनवत् सर्पिरन्नः ॥१८॥
अपश्यं ग्रामं वहमानमारादचक्रया वधया वर्त्तमानम् ।
सिषक्त्यर्यः प्र युगा जनानां सद्यः शिश्ना प्रमिनानो नवीयान् ॥१९॥
एतौ मे गावौ प्रमरस्य युक्तौ मो षु प्र सेधीर्मुहुरिन्ममन्धि ।
आपश्चिदस्य विनशन्त्यर्थं सूरश्च मर्क उपरो बभूवान् ॥२०॥
अयं यो वज्रः पुरुधा विवृत्तोऽवः सूर्यस्य बृहतः पुरीषात् ।
श्रव इदेना परो अन्यदस्ति तदव्यथी जरिमाणस्तरन्ति ॥२१॥

---

१६ दस अङ्गिरा लोगोंमें एक पिङ्गलवर्णवाले (कपिल) हैं। उन्हें यज्ञकी साधनाके लिये प्रेरित किया गया। सन्तुष्ट होकर माताने जलमें गर्भाधान किया ।

१७ प्रजापतिके पुत्र अङ्गिरा लोगोंने मोटे-मोटे मेष ( अज ) को पाया। पाशा-क्रीड़ा-स्थानमें पाश फेंके गये। इनमेंसे दो प्रकाण्ड धनु लेकर, मन्त्रोच्चारणके द्वारा, अपने शरीरको शुद्ध करते-करते, जलके बीच विचरण करने लगे।

१८ चीत्कार करनेवाले और नानागति अङ्गिरा लोग प्रजापतिसे उत्पन्न हुए। उनमें आधे लोग, प्रजापतिके लिये, हविका पाक करते हैं और आधे नहीं। इन बातोंको सूर्यदेवने मुझसे कहा है। काष्ठान्न और घृतौदन अग्नि प्रजापतिका भजन करते हैं ।

१९ देखा, अनेक लोग दूरसे आते हैं। वे स्वयंसिद्ध आहारके द्वारा प्राणका धारण करते हैं। उनके प्रभु दो-दो व्यक्तियोंको योजित करते हैं। उनकी अवस्था नयी है । वह तुरत शत्रु-संहार करते हैं ।

२० मेरा नाम प्रमर वा मारक है। मेरे ये दो वृषभ योजित हुए हैं । इनकी ताड़ना मत करो। इन्हें बार-बार सान्त्वना दो। इनका धन जलमें नष्ट होता है। जो वीर गायोंका शोधन करना जानता है, वह ऊपर उठता है ।

२१ यह वज्र प्रकाण्ड सूर्यमण्डलके नीचे, घोर वेगसे, नीचे गिरता है। इसके अनन्तर और भी स्थान है। जो स्तोता है, वह अनायास उस स्थानका पार पा जाते हैं ।

वृक्षेवृक्षे नियता मीमयद्गौस्ततो वयः प्र पतान् पूरुषादः ।
अथेदं विश्वं भुवनं भयात इन्द्राय सुन्वदृषये च शिक्षत् ॥२२॥
देवानां माने प्रथमा अतिष्ठन् कृन्तत्रादेषामुपरा उदायन् ।
त्रयस्तपन्ति पृथिवीमनूपा द्वा बृबूकं वहतः पुरीषम् ॥२३॥
सा ते जीवातुरुत तस्य विद्धि मा स्मैतादृगप गूहः समर्ये ।
आविः स्वः कृणुते गूहते बुसं स पादुरस्य निर्णिजो न मुच्यते ॥२४॥

---

## २८ सूक्त

इन्द्र देवता। वसुक्र ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

विश्वो ह्यन्यो अरिराजगाम ममेदह श्वशुरो नाजगाम ।
जक्षीयाद्धाना उत सोमं पपीयात् स्वाशितः पुनरस्तं जगायात् ॥१॥
स रोरुवद्वृषभस्तिग्मशृङ्गो वर्ष्मन्तस्थौ वरिमन्ना पृथिव्याः ।
विश्वेष्वेनं वृजनेषु पामि यो मे कुक्षी सुतसोमः पृणाति ॥२॥

---

२२ प्रत्येक वृक्ष ( काष्ठ-निर्मित धनुष् ) के ऊपर गौ अर्थात् गौके स्नायुसे निर्मित प्रत्यञ्चा शब्द करती है। शत्रु-भक्षण-करी बाण निकलते हैं। इससे सारा संसार डरता है। सब लोग इन्द्रको सोम देते हैं। ऋषि भी उसकी शिक्षा प्राप्त करते हैं।

२३ देवोंके सृष्टि-कालमें प्रथम मेघ देखे गये। इन्द्रने मेघका छेदन किया, जिससे जल निकला। पर्जन्य, वायु और सूर्य—ये तीन उद्भिज्जोंका परिपाक करते हैं। वायु और सूर्य प्रीतिकर जलका वहन करते हैं।

२४ सूर्य ही तुम्हारे ( ऋषिके ) प्राणाधार हैं। यज्ञके समय सूर्यके उस प्रभावका वर्णन और स्तवन करना। सूर्यने स्वर्गका प्रकाश किया है। सूर्य शोषण करते हैं। वह परिष्कारक हैं। वह अपनी गतिका कभी त्याग नहीं करते।

—:o:—

१ ( इन्द्रके पुत्र वसुक्रकी स्त्री कहती है—) इन्द्रके अतिरिक्त सारे देवता हमारे यज्ञमें आये हैं। केवल मेरे श्वशुर इन्द्र नहीं आये। यदि वह आये रहते, तो भुना हुआ जौ खाते और सोम पीते। आहारादि करके पुनः अपने घर लौट जाते।

२ ( इन्द्रका कथन—) तीखी सींगवाले वृषभके समान शब्द करते-करते मैं पृथिवीके उन्नत और विस्तीर्ण प्रदेशमें रहता हूं। जो मुझे भरपेट सोम पीनेको देता है, मैं उसकी रक्षा करता हूं।

अद्रिणा ते मन्दिन इन्द्र तूयान्त्सुन्वन्ति सोमान् पिबसि त्वमेषाम् ।
पचन्ति ते वृषभाँ अत्सि तेषां पृक्षेण यन्मघवन् हूयमान ॥३॥
इदं सु मे जरितरा चिकिद्धि प्रतीपं शापं नद्यो वहन्ति ।
लोपाशः सिंहं प्रत्यञ्चमत्साः क्रोष्टा वराहं निरतक्त कक्षात् ॥४॥
कथा त एतदहमा चिकेतं गृत्सस्य पाकस्तवसो मनीषाम् ।
त्वं नो विद्वाँ ऋतुथा वि वोचो यमर्धं ते मघवन् क्षेम्या धूः ॥५॥
एवा हि मां तवसं वर्धयन्ति दिवश्चिन् मे बृहत उत्तरा धूः ।
पुरू सहस्रा नि शिशामि साकमशत्रुं हि मा जनिता जजान ॥६॥
एवा हि मां तवसं जज्ञुरुग्रं कर्मन्कर्मन् वृषणमिन्द्र देवाः ।
वधीं वृत्रं वज्रेण मन्दसानोऽप व्रजं महिना दाशुषे वम् ॥७॥
देवास आयन् परशूँरबिभ्रन्वना वृश्चन्तो अभि विड्भिरायन् ।
नि सुद्र्वं दधतो वक्षणासु यत्रा कृपीटमनु तद्दहन्ति ॥८॥

३ इन्द्र, अन्न-कामनासे जिस समय तुम्हारे लिये हवन किया जाता है, उस समय यजमान शीघ्र-शीघ्र प्रस्तर-फलकोंपर मदकर सोम प्रस्तुत करते हैं। उसका तुम पान करते हो। यजमान -वृषभ पकाते हैं; तुम उनका भक्षण करते हो।

४ इन्द्र, तुम मेरी ऐसी सामर्थ्य कर दो कि, मेरी इच्छा होने पर नदीका जल विपरीत दिशामें बहने लगे, तिनका खानेवाला हरिण सिंहको पराङ्मुख करके उसके पीछे-पीछे दौड़े और शृगाल वराहको वनसे भगा दे।

५ मैं अपरिपक्व-बुद्धि हूं। तुम प्राचीन और बुद्धिमान् हो। मेरी शक्ति कहाँ कि, मैं तुम्हारा स्तोत्र कर सकूं। किन्तु समय-समय पर तुम हमें उपदेश देते हो; इस लिये तुम्हारा स्तोत्र कुछ-कुछ कर सकते हैं।

६ (इन्द्रकी उक्ति—) मैं प्राचीन हूं। स्तोता लोग मेरी इस प्रकारकी स्तुति करते हैं कि, मेरा कार्य-भार स्वर्गसे भी बड़ा है। मैं एक ही साथ सहस्राधिक शत्रुओंको दुर्बल कर डालता हूं। मेरे जन्मदाताने मेरा जन्म ही ऐसा किया है कि, मेरा शत्रु कोई नहीं टिक सकता।

७ इन्द्र, देवता लोग मुझे तुम्हारे ही समान प्राचीन, प्रत्येक कर्ममें शूर और अभीष्ट फलके दाता समझते हैं। आह्लादके साथ मैंने वज्रके द्वारा वृत्र (असुर) का बध किया है। मैंने अपनी महिमासे दाताको गोधन दिया है।

८ देवता लोग जाते हैं। मेघ-बधके लिये वज्र धारण करते हैं। जल गिराते हैं। मनुष्योंके लिये जल बरसाते हैं। नदियोंमें उस सुन्दर जलको रखते हैं। वह जहाँ मेघमें जल देखते हैं, उसे जलाकर जल निकाल देते हैं।

शशः क्षुरं प्रत्यञ्चं जगाराद्रिं लोगेन व्यभेदमारात् ।
बृहन्तं चिद्दृहते रन्धयानि वयद्वत्सो वृषभं शूशुवानः ॥९॥
सुपर्ण इत्था नखमासिषायावरुद्धः परिपदं न सिंहः ।
निरुद्धश्चिन्महिषस्तर्ष्यावान् गोधा तस्मा अयथं कर्षदेतत् ॥१०॥
तेभ्यो गोधा अयथं कर्षदेतद्ये ब्रह्मणः प्रतिपीयन्त्यन्नैः ।
सिम उक्ष्णोऽवसृष्टाँ अदन्ति स्वयं बलानि तन्वः शृणानाः ॥११॥
एते शमीभिः सुशमी अभूवन्ये हिन्विरे तन्वः सोम उक्थैः ।
नृवद्वदन्नुप नो माहि वाजान्दिवि श्रवो दधिषे नाम वीरः ॥१२॥

---

## २९ सूक्त

इन्द्र देवता। वसुक्र ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

वने न वा यो न्यधायि चाकञ्छुचिर्वां स्तोमो भुरणावजीगः ।
यस्येदिन्द्रः पुरुदिनेषु होता नृणां नर्यो नृतमः क्षपावान् ॥१॥

---

९ इन्द्रके चाहने पर शशक भी आते हुए सिंह आदिका सामना करता है और दूरसे एक लोष्ट्र ( ढेला ) फेंक कर मैं पर्वतको भी तोड़ सकता हूं। क्षुद्रके वशमें महान् भी आ जाता है और बछड़ा भी, बढ़कर, महोक्ष (साँड़) के साथ लड़नेको जाता है।

१० जैसे पिँजड़ेमें बँधा सिंह चारों ओर अपना पैर रगड़ता है, वैसे ही श्येन पक्षी अपना नख रगड़ने लगा। इन्द्रकी इच्छा होने पर यदि महिष तृषातुर होता है, तो उसके लिये गोधा (गोह) भी पानी ले आता है।

११ जो यज्ञीय अन्नके द्वारा अपना पोषण करते हैं, उनके लिये गोधा अनायास जल ले आ देता है। वे सब प्रकारके रससे युक्त सोमको पीते और शत्रुओंकी देह तथा बलका विध्वंस कर देते हैं।

१२ जिन्होंने सोमरसका यज्ञ करके अपनी देहको पुष्ट किया है, वे "उत्तम कर्मके कर्त्ता" कहे जा कर सुकर्मसे युक्त होते हैं। इन्द्र, तुम, मनुष्योंके समान स्पष्ट वाक्यका उच्चारण करके, हमारे लिये, अन्न ले आते हो; क्योंकि दिव्य धाममें तुम्हारा "दानवीर" नाम प्रसिद्ध है।

१ शीघ्रगामी अश्विद्वय, यह अतिशय निर्मल स्तोत्र तुम्हारे लिये जाता है। जैसे पक्षी, भयके साथ, चारों ओर देखते-देखते अपने बच्चेको वृक्षके घोसलेमें रखता है, वैसे ही मैंने यत्न-पूर्वक, इस स्तोत्रको प्रस्तुत किया है। कितने ही दिन मैं इसी स्तोत्रसे बुलाता हूं और वह आकर यज्ञ सम्पन्न करते हैं। वह नेताओंके भी नेता हैं। वह मनुष्यके हितेषी हैं। वह रात्रिमें सोमका भाग ग्रहण करते हैं।

प्र ते अस्या उषसः प्रापरस्या नृतौ स्याम नृतमस्य नृणाम् ।
अनु त्रिशोकः शतमावहन्नॄन् कुत्सेन रथो यो असत् ससवान् ॥२॥
कस्ते मद इन्द्र रन्त्यो भूद्दुरो गिरो अभ्युग्रो वि धाव ।
कद्वाहो अर्वागुप मा मनीषा आ त्वा शक्यामुपमं राधो अन्नैः ॥३॥
कदु द्युम्नमिन्द्र त्वावतो नॄन् कया धिया करसे कन्न आगन् ।
मित्रो न सत्य उरुगाय भृत्या अन्ने समस्य यदसन्मनीषाः ॥४॥
प्रेरय सूरो अर्थं न पारं ये अस्य कामं जनिधाइव ग्मन् ।
गिरश्च ये ते तुविजात पूर्वीर्नर इन्द्र प्रति शिक्षन्त्यन्नैः ॥५॥
मात्रे नु ते सुमिते इन्द्र पूर्वी द्यौर्मज्मना पृथिवी काव्येन ।
वराय ते घृतवन्तः सुतासः स्वाद्मन् भवन्तु पीतये मधूनि ॥६॥

---

२ इन्द्र, तुम नेताओंके भी नेता हो । आज प्रातःकाल और अन्यान्य प्रातःकालोंमें हम तुम्हारी स्तुति कर उत्तम बनें। तुम्हारा स्तोत्र करके त्रिशोक नामक ऋषिने सौ मनुष्योंकी सहायता पायी थी और कुत्स नामक ऋषि तुम्हारे साथ एक रथपर चढ़े थे ।

३ इन्द्र, किस प्रकारकी मत्तता तुम्हें अतिशय प्रसन्नता-कारक है ? हमारा स्तोत्र सुनकर महावेगसे तुम यज्ञ-गृहके द्वारकी ओर आओ। मैं कब उत्तम वाहन पाऊँगा? तुम्हारी स्तुतिसे कब मैं अन्न और अर्थ अपनी ओर खींच सकूँगा ?

४ इन्द्र, कब धन होगा? किस स्तोत्रका पाठ करने पर तुम मनुष्योंको अपने समान करोगे? कब आओगे? कीर्त्तिशाली इन्द्र, तुम यथार्थ बन्धुके समान सबका भरण-पोषण करते हो। स्तव करनेसे ही तुम भरण-पोषण करते हो।

५ जैसे पति अपनी पत्नीकी कामना पूर्ण करता है, वैसे ही जो तुम्हारी कामना पूर्ण करता है (इच्छानुरूप यज्ञ करता है), उन्हें यथेष्ट धन दो; क्योंकि तुम सूर्यके समान दाता हो। हे अनेक-रूप-धारी, जो लोग चिरप्रचलित स्तुति-वचनोंका तुम्हारे लिये पाठ करते और अन्न देते हैं, उन्हें धन दो।

६ इन्द्र, प्राचीन समयमें अतीव सुन्दर सृष्टि-प्रक्रियाके द्वारा विरचित यह जो द्यावा-पृथिवी हैं, वह तुम्हारी माताके सदृश हैं। जो घृत-युक्त सोमरस प्रस्तुत किया गया है, उसे पीकर प्रसन्न होओ। मधुर रससे युक्त अन्न तुम्हारे लिये सुस्वादु हो।

आ मध्वो अस्मा असिचन्नमत्रमिन्द्राय पूर्णं स हि सत्यराधाः ।
स वावृधे वरिमन्ना पृथिव्या अभि क्रत्वा नर्यः पौंस्यैश्च ॥७॥
व्यानलिन्द्रः पृतनाः स्वोजा आस्मै यतन्ते सख्याय पूर्वीः ।
आ स्मा रथं न पृतनासु तिष्ठ यं भद्रया सुमत्या चोदयासे ॥८॥

## ३ अनुवाक । ३० सूक्त

जल देवता। ईलूष-पुत्र कवष ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र देवत्रा ब्रह्मणे गातुरेत्वपो अच्छा मनसो न प्रयुक्ति ।
महीं मित्रस्य वरुणस्य धासिं पृथुज्रयसे रीरधा सुवृक्तिं ॥१॥
अध्वर्यवो हविष्मन्तो हि भूताच्छाप इतोशतीरुशन्तः ।
अव याश्चष्टे अरुणः सुपर्णस्तमास्यध्वमूर्मिमद्या सुहस्ताः ॥२॥
अध्वर्यवोऽप इता समुद्रमपां नपातं हविषा यजध्वम् ।
स वो दददूर्मिमद्या सुपूतं तस्मै सोमं मधुमन्तं सुनोत ॥३॥

---

७ इन्द्र वस्तुतः धनदाता हैं; इसलिये इन्द्रके लिये पात्र पूर्ण करके मधुर सोमरस दो । इन्द्र पृथिवीसे भी बड़े हैं। वह मनुष्योंके हितैषी हैं। उनका कार्य और पौरुष विस्मयकर हैं।

८ शोभन बलवाले इन्द्रने शत्रु-सेनाको घेर डाला । उत्कृष्ट शत्रुसैनिक इन्द्रसे मैत्री करनेकी चेष्टा करते हैं । इन्द्र, जैसे संसारके कल्याणके लिये, बुद्धिमान् व्यक्तिके समान, तुम युद्धके लिये रथपर चढ़ा करते हो, वैसे ही इस समय भी रथ पर चढ़ो।

१ मनके समान शीघ्र गतिसे सोमरस, यज्ञ-कालमें, देवोंके लिये जलकी ओर जायँ। मेरे अन्तःकरण, मित्र और वरुणके लिये विस्तृत अन्न (सोम-रूप) का पाक वा संशोधन करो और तीव्र वेगवाले उन इन्द्रके लिये सुन्दर रचनावाली स्तुति करो ।

२ पुरोहितो, होमीय द्रव्य (हवि) का आयोजन करो। तुम्हारे लिये जल स्नेह-युक्त हो। जलकी ओर तत्परताके साथ जाओ। लोहित-वर्ण पक्षीके समान यह जो सोम नीचे गिरता है, हे सुन्दर हाथों-वालो, उसे तरङ्गके रूपमें यथास्थान फेंको।

३ पुरोहितो, जलके समुद्रमें जाओ। "आपांनपात्" देवताको होमीय द्रव्यके द्वारा पूजित करो। आज वह तुम्हें स्वच्छ जलकी तरङ्ग प्रदान करें। उनके लिये मधुर सोम प्रस्तुत करो।

यो अनिध्मो दीदयदप्स्वन्तर्यं विप्रास ईलते अध्वरेषु ।
अपान्नपान्मधुमतीरपो दा याभिरिन्द्रो वावृधे वीर्याय ॥४॥

याभिः सोमो मोदते हर्षते च कल्याणीभिर्युवतिभिर्न मर्यः ।
ता अध्वर्यो अपो अच्छा परेहि यदासिञ्चा ओषधीभिः पुनीतात् ॥५॥

एवेद्यूने युवतयो नमन्त यदीमुशन्नुशतीरेत्यच्छ ।
सञ्जानते मनसा सञ्चिकित्रेऽध्वर्यवो धिषणापश्च देवीः ॥६॥

यो वो वृताभ्यो अकृणोदु लोकं यो वो मह्या अभिशस्तेरमुञ्चत् ।
तस्मा इन्द्राय मधुमन्तमूर्मिं देवमादनं प्र हिणोतनापः ॥७॥

प्रास्मै हिनोत मधुमन्तमूर्मिं गर्भो यो वः सिन्धवो मध्व उत्सः ।
घृतपृष्ठमीड्यमध्वरेष्वापो रेवतीः शृणुता हवम्मे ॥८॥

---

४ जो काष्ठ-जलके भीतर जलते हैं और यज्ञ-कालमें विप्र लोग जिसकी स्तुति करते हैं, वही आपांनपात् देवता ऐसा सुरस जल दें, जिसका पान करके इन्द्र बलशाली होकर वीरता प्रकट करें।

५ जिन जलोंमें मिलकर सोम अतीव विस्मयकर हो जाते हैं, जैसे पुरुष सुन्दरी युवतियोंसे मिलने पर आनान्दत होते हैं, वैसे ही उन जलोंके साथ मिलनेपर सोम आनन्दित होते हैं। पुरोहितो, ऐसे ही जल लानेको जाओ। जल लाकर सेचन करनेपर सोम-लता शोधित होती है।

६ जिस समय कोई युवा पुरुष, प्रेमके साथ, प्रेमसे पूर्ण युवतियोंकी ओर जाते हैं, उस समय जैसे युवतियाँ उस युवाके प्रति अनुकूल होती हैं, वैसे ही जल सोमके प्रति अनुकूल होते हैं। पुरोहितों और उनके स्तोत्रोंसे जलस्वरूप देवोंका विशेष परिचय है। दोनों अपने-अपने कार्योंकी ओर दृष्टि रखते हैं।

७ जलगण, तुम्हारे रोके जानेपर जो तुम्हें निकलनेके लिये मार्ग देते हैं और जो तुम्हें विषम निरोधसे छुड़ाते हैं, उन्हीं इन्द्रके प्रति मधु-पूर्ण और देवोंके लिये मत्तता-जनक तरङ्ग प्रेरित करो।

८ क्षरणशील जल, तुम्हारे लिये गर्भस्वरूप और मधुर रससे युक्त जो प्रस्रवण है, उसकी मधुर तरङ्गको इन्द्रके पास प्रेरित करो। धनशाली जल मेरा आह्वान सुनो। मेरे आह्वानमें यज्ञके लिये घृतदान किया जाता है और तुम्हारा स्तोत्र किया जाता है।

तं सिन्धवो मत्सरमिन्द्रपानमूर्मिं प्र हेत य उभे इयर्ति ।
मदच्युतमौशानं नभोजां न परि त्रितन्तुं विचरन्तमुत्सम् ॥९॥
आवर्वृततीरध नु द्विधारा गोषुयुधो न नियवं चरन्तीः ।
ऋषे जनित्रीर्भुवनस्य पत्नीरपो वन्दस्व सवृधः सयोनीः ॥१०॥
हिनोता नो अध्वरं देवयज्या हिनोत ब्रह्म सनये धनानाम् ।
ऋतस्य योगे विष्यध्वमूधः श्रुष्टीवरीर्भूतनास्मभ्यमापः ॥११॥
आपो रेवतीः क्षयथा हि वस्वः क्रतुं च भद्रं बिभृथामृतञ्च ।
रायश्च स्थः स्वपत्यस्य पत्नीः सरस्वती तद्गृणते वयो धात् ॥१२॥
प्रति यदापो अदृश्रमायतीर्घृतं पयांसि बिभ्रतीर्मधूनि ।
अध्वर्युभिर्मनसा संविदाना इन्द्राय सोमं सुषुतं भरन्तीः ॥१३॥
एमा अग्मन्रेवतीर्जीवधन्या अध्वर्यवः सादयता सखायः ।
नि बर्हिषि धत्तन सोम्यासोऽपां नप्त्रा संविदानास एनाः ॥१४॥

---

९ जल, तुम्हारी जो तरङ्ग इस लोक और पर लोकके लिये हितकर होती है, उसी मदकारक तरङ्गको इन्द्रके पानके लिये प्रेरित करो। ऐसी तरङ्ग भेजो, जो मद क्षरण करे, जो कामना बढ़ावे, जिसकी उत्पत्ति आकाशमें है और जो तीनों लोकोंमें विचरण करते हुए ऊपर उठ जाती है।

१० जो इन्द्र जलके लिये युद्ध करते हैं, उनकी आज्ञासे जल नाना धाराओंमें बार-बार गिरकर सोमके साथ मिलता है। जल संसारकी माताके सदृश और संसारकी रक्षिकाके समान है। वह सोम के साथ मिलता है, वह आत्मीय है। ऋषि, ऐसे जलकी बन्दना करो।

११ जल, देवोंके यज्ञके लिये हमारे यज्ञ-कार्यमें सहायता करो। धन-प्राप्तिके लिये हमारे पास पवित्रता प्रेरित करो। यज्ञानुष्ठानके समय अपने दुग्ध-स्थानका द्वार खोलो। हमारे लिये सुखकर होओ।

१२ जल, तुम धनके प्रभु-स्वरूप इस कल्याणमय यज्ञको सम्पन्न करो और अमृत ले आओ। धन और उत्तम सन्तानोंके रक्षक होओ। स्तोताको सरस्वती धन दें।

१३ मैं देखता था कि, जल, तुम आते समय घृत, दुग्ध और मधु ले आते थे। पुरोहित लोग स्तुतिके द्वारा तुमसे संभाषण करते थे। उत्तम रूपसे प्रस्तुत सोमको तुम इन्द्रको देते थे।

१४ सब प्रकारका जल आ रहा है। यह धनका आधार और जीवके लिये हितप्रद है। पुरोहित बन्धुओ, जलकी स्थापना करो। जल वृष्टिके अधिष्ठाता देवताके चिरपरिचित है। यह सोमरसके अनुकूल है। जलको कुशके ऊपर स्थापित करो।

आग्मन्नाप उशतीर्बर्हिरेदन् न्यध्वरे असदन्देवयन्तीः ।
अध्वर्यवः सुनुतेन्द्राय सोममभूदु वः सुशका देवयज्या ॥१५॥
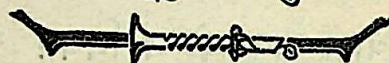
## ३१ सूक्त

विश्वदेव देवता। कवष ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आ नो देवानामुप वेतु शंसो विश्वेभिस्तुरैरवसे यजत्रः ।
तेभिर्वयं सुषखायो भवेम तरन्तो विश्वा दुरिता स्याम ॥१॥
परि चिन्मर्तो द्रविणं ममन्यादृतस्य पथा नमसा विवासेत् ।
उत स्वेन क्रतुना संवदेत श्रेयांसं दक्षं मनसा जगृभ्यात् ॥२॥
अधायि धीतिरससृग्रमंशान्तीर्थे न दस्ममुप यन्त्यूमाः ।
अभ्यानश्म सुवितस्य शूषं नवेदसो अमृतानामभूम ॥३॥
नित्यश्चाकन्यात् स्वपतिर्दमूना यस्मा उ देवः सविता जजान ।
भगो वा गोभिरर्यमेमनज्यात् सो अस्मै चारुश्छदयदुत स्यात् ॥४॥

---

१५ तत्परताके साथ जल कुशकी ओर आता है। देखो, जल देवोंके पास जानेके लिये यज्ञ-स्थानमें बैठता है। पुरोहितो, इन्द्रके लिये सोम प्रस्तुत करो। इस समय जल आने पर तुम्हारी देव-पूजा सुसाध्य हुई है।

१ हमारा स्तोत्र देवोंके पास जाय। यज्ञ-देवता सारे शत्रुओंसे हमें बचावें। उन देवोंके साथ हमारी मैत्री हो। हम सारे पापोंसे छूटें।

२ मनुष्य सब प्रकारके धनकी कामना करे, सत्य-मार्गसे पुण्यानुष्ठानमें प्रवृत्त हो, अपने कर्मसे कल्याणभागी बने और मनमें सुख प्राप्त करे।

३ यज्ञ-कार्यका प्रारम्भ किया गया है। सारे यज्ञीय द्रव्य, आवश्यकतानुसार, छोटे-बड़े करके, रखे गये हैं। वे द्रव्य सुदृश्य और रक्षणके साधन हैं। अभिषुत सोमका आस्वादन हमने किया है। देवता लोग स्वरूपसे ही यह सब जाननेवाले हैं।

४ अविनाशी प्रजापति दाताका अन्तःकरण धारण करके कृपा करें। यज्ञकर्त्ताको सविता-देव शुभ फूल दें। भग और अर्यमा स्तुतिके द्वारा प्रसन्न होकर स्नेह-युक्त हों। शेष सुन्दर-मूर्त्ति सारे देवता यजमानके लिये अनुकूल हों।

इयं सा भूया उषसामिव क्षा यद्ध क्षुमन्तः शवसा समायन् ।
अस्य स्तुतिं जरितुर्भिक्षमाणा आ नः शग्मास उपयन्तु वाजाः ॥५॥

अस्येदेषा सुमतिः पप्रथानाभवत् पूर्व्या भूमना गौः ।
अस्य सनीला असुरस्य योनौ समान आ भरणे बिभ्रमाणाः ॥६॥

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः ॥
सन्तस्थाने अजरे इतऊती अहानि पूर्वीरुषसो जरन्त ॥७॥

नैतावदेना परो अन्यदस्त्युक्षास द्यावापृथिवी बिभर्ति ।
त्वचं पवित्रं कृणुत स्वधावान्यदीं सूर्यं न हरितो वहन्ति ॥८॥

स्तेगो न क्षामत्येति पृथ्वीं मिहं न वातो वि ह वाति भूम ।
मित्रो यत्र वरुणो अज्यमानोऽग्निर्वने न व्यसृष्ट शोकम् ॥९॥

---

५ स्तोताके पास स्तोत्र पानेकी कामनासे जिस समय देवता लोग, कोलाहल करके, महावेगके साथ, आते हैं, उस समय, प्रातःकालके समान, हमारे लिये पृथिवी आलोकमयी हुई। सुखदाता नानाविध अन्न हमारे पास आवें।

६ हमारा स्तोत्र इस समय चिरपरिचित विशाल भाव धारण करके सारे देवोंके पास जानेके लिये विस्तृत होता है। हमारे इस यज्ञमें समस्त देवता समान स्थानपर अधिकार करके नानाविध शुभ फल देनेके लिये आव। इससे मैं बलशाली बनूँगा।

७ वह कौन वन और वह कौन वृक्ष है, जिससे उपादान लेकर इस द्युलोक और भूलोकका निर्माण किया गया है? प्राचीन दिन और उषा जीर्ण हो गये हैं; परन्तु द्यावापृथिवी परस्पर-संयुक्त हैं, एक भावमें स्थित हैं, न जीर्ण हैं, न पुरातन।

८ द्युलोक और भूलोक ही अन्तिम नहीं हैं; इनके ऊपर भी और कुछ है। वह ( ईश्वर ) प्रजाका बनानेवाला और द्यावापृथिवीका धारण करनेवाला है। वह अन्नका प्रभु है। जिस समय सूर्यके घोड़ोंने सूर्यका वहन करना प्रारम्भ नहीं किया था, उसी समय उसने अपने शरीरका निर्माण किया था।

९ किरणधारी सूर्यदेव पृथिवीका अतिक्रम नहीं करते और वायु वृष्टिको अतीव छिन्न-भिन्न नहीं करते। मित्र तथा वरुण, प्रकट होकर, वनके बीच उत्पन्न अग्निके समान चारो ओर प्रकाशको विस्तारित करते हैं।

स्तरीर्यत् सूत सद्योऽज्यमाना व्यथिरव्यथीः कृणुत स्वगोपा ।
पुत्रो यत् पूर्वः पित्रोर्जनिष्ट शम्यां गौर्जगार यद्ध पृच्छान् ॥१०॥
उत कण्वन्नृषदः पुत्रमाहुरुत श्यावो धनमादत्त वाजी ।
प्र कृष्णाय रुशदपिन्वतोधर्ऋतमत्र नकिरस्मा अपीपेत् ॥११॥

## ३२ सूक्त

विश्वदेव देवता। कवष ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र सु ग्मन्ता धियसानस्य सक्षणि वरेभिर्वरा अभि षु प्रसीदतः ।
अस्माकमिन्द्र उभयं जुजोषति यत् सोम्यस्यान्धसो बुबोधति ॥१॥
वीन्द्र यासि दिव्यानि रोचना वि पार्थिवानि रजसा पुरुष्टुत ।
ये त्वा वहन्ति मुहुरध्वराँ उप ते सु वन्वन्तु वग्वनाँ अराधसः ॥२॥

---

१० रेतःसेक पाकर जैसे वृद्धा गाय प्रसव करती है, वैसे ही अरणि ( अग्निमन्थन-काष्ठ ) अग्निको उत्पन्न करती है। अरणि संसारका क्लेश दूर करती है। जो अरणिकी रक्षा करते हैं, उनको कष्ट नहीं होता। अग्नि दोनों अरणियोंके पुत्र हैं—उन्होंने प्राचीन समयमें अरणि-स्वरूप माता-पितासे जन्म ग्रहण किया था। यह जो अरणि-स्वरूप गाय है, वह शमी वृक्ष ( शमीपर उत्पन्न अश्वत्थ वृक्ष ) पर जन्म ग्रहण करती है। उसकी खोज की जाती हैं।

११ कण्व ऋषिको नृसदका पुत्र कहा गया है। अन्न-युक्त और श्यामवर्ण कण्वने धन ग्रहण किया था। उन्हीं श्यामवर्ण कण्वके लिये अग्निने अपने रोचक रूपको प्रकट किया था। अग्निके लिये कण्वके अतिरिक्त किसीने भी वैसा यज्ञ नहीं किया था।

---
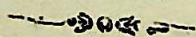
१ यज्ञ-कर्त्ता इन्द्रका ध्यान करता है। उसकी सेवा ग्रहण करनेके लिये इन्द्र अपने अश्वोंको यज्ञकी ओर प्रेरित करते हैं। हरि नामके दोनों अश्व विचित्र गतिसे आ रहे हैं। प्रसन्न मनसे यजमान उत्तमोत्तम सामग्री देता है—इन्द्र भी उत्तम-उत्तम वर लेकर आ रहे हैं। जिस समय इन्द्र सोमरस और आहारीय द्रव्यका आस्वादन पाते हैं, उस समय हमारे स्तोत्र और होमीय द्रव्य (हवि आदि) का ग्रहण करते हैं।

२ बहुतोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम प्रकाश विस्तार करते-करते विभिन्न स्वर्गीय धामोंमें विचरण करते हो। तुम ज्योति लेकर पृथिवीपर आगमन किया करते हो। तुम्हारे दो घोड़े तुम्हें जो यज्ञमें ढो ले आते हैं, वे हमें धनी करें; क्योंकि हमारे पास धन नहीं है। धनके लिये ही हम यह सब प्रार्थना-वचन उच्चारित करते हैं।

तदिन्मे छन्त्सद्वपुषो वपुष्टरं पुत्रो यज्जानं पित्रोरधीयति ।
जाया पतिं वहति वग्नुना सुमत् पुंस इद्भद्रो वहतुः परिष्कृतः ॥३॥
तदित् सधस्थमभि चारु दीधय गावो यच्छासन् वहतुं न धेनवः ।
माता यन्मन्तुर्यूथस्य पूर्व्याभि वाणस्य सप्तधातुरिज्जनः ॥४॥
प्र वोऽच्छा रिरिचे देवयुष्पदमेको रुद्रेभिर्याति तुर्वणिः ।
जरा वा येष्वमृतेषु दावने परि व ऊमेभ्यः सिञ्चता मधु ॥५॥
निधीयमानमपगूळ्हमप्सु प्र मे देवानां व्रतपा उवाच ।
इन्द्रो विद्वाँ अनु हि त्वा चचक्ष तेनाहमग्ने अनुशिष्ट आगाम् ॥६॥
अक्षेत्रवित् क्षेत्रविदं ह्यप्राट् स प्रैति क्षेत्रविदानुशिष्टः ।
एतद्वै भद्रमनुशासनस्योत स्रुतिं विन्दत्यञ्जसीनाम् ॥७॥

---

३ जन्म ग्रहण करके पुत्र पितासे जो धन प्राप्त करता है, वह अतीव चमत्कारी धन है। इन्द्र मुझे देनेकी कामना करें। मीठे वचनोंसे पत्नी स्वामीको अपने पास बुलाती है। भली भाँति प्रस्तुत होकर सोमरस उस पुरुषार्थ-युक्तके पास जाता है ।

४ स्तुति-रूपिणी गायें जिस स्थानपर मिलती हैं, उस स्थानको, अपनी उज्ज्वल प्रभाके द्वारा, आलोकमय करो। स्तोत्रोंकी प्राचीन और पूजनीय जो माता (गायत्री) है, उसके सात छन्द (सात महाव्याहृतियाँ) उसी स्थानपर हैं।

५ देवोंके पास जो अग्नि जाते हैं, वह तुम्हारी भलाईके लिये दिखाई देते हैं। वह अकेले ही रुद्रोंके साथ शीघ्र अपने स्थानपर जाते हैं। अमर देवतागणके बलका ह्रास होता है; इसलिये बन्धु-बान्धवोंसे युक्त होकर इन्द्रके लिये यज्ञीय मधु ( सोम ) ढाल दो। तब ये लोग वर देंगे।

६ देवोंके लिये जो पुण्यानुष्ठान होता है, विद्वान् इन्द्र उसकी रक्षा करते हैं। इन्द्रने कहा है कि, अग्नि जलमें निगूढ़—रूपसे हैं। अग्नि, उसी उपदेशके अनुसार मैं तुम्हारे पास आया हूं ।

७ यदि कोई किसी मार्गको नहीं जानता, तो उसे जो व्यक्ति जानता है, उसीसे उसे पूछता है। ज्ञाता व्यक्तिसे जानकर वह अभीष्ट स्थानपर पहुँच सकता है। अभिज्ञके कथनानुसार यदि तुम जलको खोजो, तो जहाँ जल है, वहाँ पहुँच सकते हो।

अद्येदु प्राणीदममन्निमहापीवृतो अधयन्मातुरूधः ।
एमेनमाप जरिमा युवानमहेलन् वसुः सुमना बभूव ॥८॥
एतानि भद्रा कलश क्रियाम कुरुश्रवण ददतो मघानि ।
दान इद्वो मघवानः सो अस्त्वयं च सोमो हृदि यं बिभर्मि ॥९॥

८ आज ही यह ( गोवत्सरूप ) अग्नि उत्पन्न हुए हैं, कुछ दिनोंसे क्रमशः वृद्धि प्राप्त कर रहे हैं, जननीका स्तन पी चुके हैं। युवावस्थाके साथ ही बुढ़ापा आ गया है। वह सरल-कर्मा, धनाढ्य और मनः-प्रसाद-सम्पन्न हुए हैं।

९ सर्वकला-परिपूर्ण और स्तुतियोंके श्रोता इन्द्र, तुम धन देते हो। तुम्हारे लिये ये स्तुतियाँ रची गयी हैं। पूजनीय-स्तोतृ-रूप धनवालो, तुम्हारे लिये इन्द्र दाता हों और जिस सोमको मैं हृदयमें धारण करता हूं, वह भी दाता हों।

# सप्तम अध्याय समाप्त

# अष्टम अध्याय

## ३३ सूक्त

कुरुश्रवण, मित्रातिथि आदि देवता। ऐलूष कवष ऋषि। त्रिष्टु आदि छन्द।

प्र मा युयुज्रे प्रयुजो जनानां वहामि स्म पूषणमन्तरेण ।
विश्वे देवासो अध मामरक्षन्दुःशासुरागादिति घोष आसीत् ॥१॥
सं मा तपन्त्यभितः सपत्नीरिव पर्शवः ।
नि बाधते अमतिर्नग्नता जसुर्वेर्न वेवीयते मतिः ॥२॥
मूषो न शिश्ना व्यदन्ति माध्यः स्तोतारं ते शतक्रतो ।
सकृत् सु नो मघवन्निन्द्र मृळयाधा पितेव नो भव ॥३॥
कुरुश्रवणमावृणि राजानं त्रासदस्यवम् । मंहिष्ठं वाघतामृषिः ॥४॥
यस्य मा हरितो रथे तिस्रो वहन्ति साधुया । स्तवै सहस्रदक्षिणे ॥५॥

---

१ जो देवता सबको कर्मोंमें लगाते हैं, उन्होंने मुझे प्रेरित किया। मैंने मार्गमें पूषाका वहन किया। विश्वदेवोंने मुझ कवषकी रक्षा की। चारो ओर हल्ला मचा कि, दुर्द्धर्ष ऋषि आ रहे हैं।

२ सपत्नियोंके समान मेरी पँजरियाँ (पार्श्वास्थियाँ) मुझे दुःख देती हैं। दुर्बुद्धि मुझे क्लेश देती है। मैं दीन, हीन और क्षीण हो रहा हूं। पक्षीके समान मेरा मन चञ्चल हो रहा है।

३ इन्द्र, जैसे चूहे स्नायुको खाते हैं, वैसे तुम्हारा भक्त होनेपर भी मेरी मनोव्यथा मुझे खा रही है। धनी इन्द्र, एक बार हमारे ऊपर कृपा-कटाक्ष करो। हमारे पितृतुल्य रक्षक बनो।

४ मैं कवष ऋषि हूं। मैं त्रसदस्युके पुत्र कुरुश्रवण राजाके पास याचना करने गया था; क्योंकि वह श्रेष्ठ दाता हैं।

५ मेरी दक्षिणा, सहस्र-संख्यामें, दी जाती थी और सब उसकी श्लाघा करते थे। मेरे रथपर चढ़नेपर तीन हरित-वर्ण घोड़े, भली भाँति. वहन करते थे।

यस्य प्रस्वादसो गिर उपमश्रवसः पितुः । क्षेत्रं न रण्वमूचुषे ॥६॥
अधि पुत्रोपमश्रवो नपान्मित्रातिथेरिहि । पितुष्टे अस्मि वन्दिता ॥७॥
यदीशीयामृतानामुत वा मर्त्यानाम् । जीवेदिन्मघवा मम ॥८॥
न देवानामति व्रतं शतात्मा चन जीवति । तथा युजा विववृते ॥९॥

---

## ३४ सूक्त

अक्ष (जुआ खेलनेका पाशा वा कौड़ी अथवा बहेरे के काठकी गोली) और द्युतकार (जुआड़ी) देवता । कवष ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे वर्वृतानाः ।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान् ॥१॥

---

६ मेरे पिताकी कीर्त्ति दृष्टान्त देनेका स्थल थी। पिताका वचन, सेवकोंके निकट, रमणीय क्षेत्रके समान प्रसन्नता-कारक होता था।

७ उपमश्रवस, तुम मित्रातिथिके पुत्र हो। मेरे पास आओ । मैं मित्रातिथिका स्तोता हूं। शोक मत करो। देने योग्य धन मुझे दो।

८ यदि मैं अमर देवों और मरणशील मनुष्योंका स्वामी होता, तो धनवान् मित्रातिथि अवश्य जीवित रहते।

९ एक सौ प्राण रहनेपर भी देवोंके अभिप्रायके विरुद्ध कोई नहीं जीवित रह सकता । इसीसे हमारे सहचरोंसे हमरा वियोग हुआ करता है।

---

१ बड़े-बड़े पाशे जिस समय नक्शे (पाशा खेलनेके स्थान) के ऊपर इधर-उधर चलते हैं, उस समय उन्हें देखकर मुझे बड़ा आनन्द होता है। मूजवान् पर्वतपर उत्पन्न उत्तम सोमलताका रस पीकर जैसे प्रसन्नता होती है, वैसे ही बहेरे (वृक्ष) के काठसे बना अक्ष (पाशा) मेरे लिये प्रीति-प्रद और उत्साह-दाता है।

न मा मिमेथ न जिहील एषा शिवा सखिभ्य उत मह्यमासीत् ।
अक्षस्याहमेकपरस्य हेतोरनुव्रतामप जायामरोधम् ॥२॥

द्वेष्टि श्वश्रूरप जाया रुणद्धि न नाथितो विन्दते मर्डितारम् ।
अश्वस्येव जरतो वस्न्यस्य नाहं विदामि कितवस्य भोगम् ॥३॥

अन्ये जायां परि मृशन्त्यस्य यस्यागृधद्वेदने वाज्यक्षः ।
पिता माता भ्रातर एनमाहुर्न जानीमो नयता बद्धमेतम् ॥४॥

यदादीध्ये न दविषाण्येभिः परायद्भ्योऽव हीये सखिभ्यः ।
न्युप्ताश्च बभ्रवो वाचमक्रतँ एमीदेषां निष्कृतं जारिणीव ॥५॥

सभामेति कितवः पृच्छमानो जेष्यामीति तन्वा शूशुजानः ।
अक्षासो अस्य वि तिरन्ति कामं प्रतिदीव्ने दधत आ कृतानि ॥६॥

---

२ मेरी यह रूपवती पत्नी कभी मुझसे उदासीन नहीं हुई, न कभी मुझसे लज्जित हुई। वह पत्नी मेरी और मेरे बन्धुओंकी विशेष सेवा-शुश्रूषा करती थी। किन्तु केवल पाशेके कारण मैंने उस परम अनुरागिणी भार्याको छोड़ दिया।

३ जो जुआड़ी (कितव) जुआ खेलता है, उसकी सास उसकी निन्दा करती है और उस की स्त्री उसे छोड़ देती है। जुआड़ी किसीसे कुछ माँगता है, तो उसे कोई नहीं देता। जैसे बूढ़े घोड़ेको कोई नहीं खरीदता, वैसे ही जुआड़ीका कोई आदर नहीं करता।

४ पाशेका आकर्षण बड़ा कठिन है। यदि किसीके धनके प्रति अक्ष (पाशे) की लोभ-दृष्टि हो जाय, तो पाशावालेकी पत्नी व्यभिचारिणी हो जाती है। जुआड़ीके माता, पिता और सहोदर भ्राता कहते हैं—"हम इसे नहीं जानते; जुआड़ियो, इसे पकड़कर ले जाओ।"

५ जिस समय मैं इच्छा करता हूं कि, मै अब नहीं पाशा खेलूंगा, उस समय साथी जुआड़ियोंके पाससे हट जाता हूं। किन्तु नक्शेपर पीले पाशोंको देखकर नहीं ठहरा जाता। जैसे भ्रष्टा नारी उपपतिके पास जाती है, वैसे ही मैं भी जुआड़िओंके घर जाता हूं।

६ जुआड़ी अपनी छाती फुलाकर कूदता हुआ जुएके अड्डेपर आता और कहता है कि, "मैं जीतूंगा"। कभी-कभी पाशा जुआड़ीकी इच्छा पूरी करता है और कभी विपक्षके जुआड़ीके लिये वह जो कुछ चाहता है, वह सब भी कभी सिद्ध हो जाता है।

अक्षास इदङ्कुशिनो नितोदिनो निकृत्वानस्तपनास्तापयिष्णवः ।
कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणो मध्वा सम्पृक्ताः कितवस्य बर्हणा ॥७॥
त्रिपञ्चाशः क्रीळति व्रात एषां देवइव सविता सत्यधर्मा ।
उग्रस्य चिन्मन्यवे ना नमन्ते राजा चिदेभ्यो नम इत् कृणोति ॥८॥
नीचा वर्तन्त उपरि स्फुरन्त्यहस्तासो हस्तवन्तं सहन्ते ।
दिव्या अङ्गारा इरिणे न्युप्ताः शीताः सन्तो हृदयं निर्दहन्ति ॥९॥
जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क स्वित् ।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानोऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति ॥१०॥
स्त्रियं दृष्ट्वाय कितवं ततापान्येषां जायां सुकृतं च योनिम् ।
पूर्वाह्णे अश्वान्युयुजे हि बभ्रून्त्सो अग्नेरन्ते वृषलः पपाद ॥११॥

७ किन्तु कभी-कभी वही पाशा बेहाथ हो जाता है—अंकुशके समान चूभता है, वाणके सदृश छेदता है, छुरेके समान काटता है, तप्त पदार्थके समान संताप देता है। जो जुआड़ी विजयी होता है, उसके लिये पाशा पुत्रजन्मके समान आनन्द-दाता होता हैं, मधुरिमासे युक्त होता है और मानो मीठे वचनोंसे सम्भाषण करता है; किन्तु हारे हुए जुआड़ीको तो प्रायः मार ही डालता है।

८ तिरेपन पाशे नक्शेके ऊपर मिलकर विहार करते हैं—मानो सत्य-स्वरूप सूर्यदेव संसारमें विचरण करते हैं। कोई कितना बड़ा उग्र क्यों न हो; परन्तु पाशा किसीके वशमें नहीं आ सकता। राजा तक पाशेको नमस्कार करते हैं।

९ पाशे कभी नीचे उतरते हैं और कभी ऊपर उठते हैं। इनके हाथ नहीं हैं; परन्तु जिनके हाथ हैं, वे इनसे हार खाते हैं। ये श्री-सम्पन्न हैं; जलते हुए अङ्गारेके समान ये नक्शेके ऊपर बैठे हैं। ये छूनेमें ठंढे हैं; किन्तु हृदयको जलाते हैं।

१० जुआड़ीकी स्त्री दीन-हीन वेशमें यातना भोगती रहती है, पुत्र कहाँ-कहाँ घूमा करता है—ऐसा सोचकर जुआड़ीकी माता व्याकुल रहा करती है। जो जुआड़ीको उधार देता है, वह इस सन्देहमें रहता है कि, "मेरा धन फिर मिलेगा वा नहीं।" जुआड़ी बेचारा दूसरेके घरमें रात काटा करता है।

११ अपनी स्त्रीकी दशा देखकर जुआड़ीका हृदय फटा करता है। अन्यान्य स्त्रियोंका सौभाग्य और सुन्दर अट्टालिका देखकर जुआड़ीको सन्ताप होता है। जो जुआड़ी प्रातःकाल घोड़ेकी सवारी कर आता है, वही सन्ध्या-समय, दरिद्रके समान जाड़ेसे बचनेके लिये आग तापता है—शरीरपर वस्त्र भी नहीं रहता।

यो वः सेनानीर्महतो गणस्य राजा व्रातस्य प्रथमो बभूव ।
तस्मै कृणोमि न धना रुणध्मि दशाहं प्राचीस्तदृतं वदामि ॥१२॥
अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित् कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः ।
तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे विचष्टे सवितायमर्यः ॥१३॥
मित्रं कृणुध्वं खलु मृलता नो मा नो घोरेण चरताभि धृष्णु ।
नि वो नु मन्युर्विंशतामरातिरन्यो बभ्रूणां प्रसितौ न्वस्तु ॥१४॥

## ३५ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । धनाक-पुत्र लूश ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

अबुध्रमु त्य इन्द्रवन्तो अग्नयो ज्योतिर्भरन्त उषसो व्युष्टिषु ।
मही द्यावापृथिवी चेततामपोऽद्या देवानामव आवृणीमहे ॥१॥

---

१२ पाशो, तुम्हारे दलमें जो प्रधान, सेनापति वा राजाके समान है, उसको मैं अपनी दसो अँगुलियाँ जोड़कर प्रणाम करता हूँ । मैं सच्ची बात कहता हूं कि, मैं तुम लोगोंसे अर्थ नहीं चाहता ।

१३ जुआड़ी, कभी जुआ नहीं खेलना, खेती करना । कृषिसे जो कुछ लाभ हो, उसीसे सन्तुष्ट रहना—अपनेको कृतार्थ समझना । इसीसे स्त्री प्राप्त करोगे और अनेक गायें भी पाओगे । प्रभु सूर्यदेवने मुझसे ऐसा कहा है ।

१४ पाशो (अक्षो), हमें बन्धु जानो; हमारा कल्याण करो । हमारे ऊपर अपने दुर्द्धर्ष प्रभावका प्रयोग नहीं करना । हमारा शत्रु ही तुम्हारी कोप-दृष्टिमें गिरे । दूसरे तुममें फँसे रहें ।

---

१ अग्नि जाग गये । उनके साथ इन्द्र हैं । जिस समय प्रभात अन्धकारको विदेशमें भेजता है, उस समय अग्नि, आलोक धारण करके, जलते हैं । विशाल-मूर्ति द्युलोक और भूलोक चैतन्य-युक्त हों । मैं प्रार्थना करता हूं कि, देवता आज हमें बचावें

दिवस्पृथिव्योरव आवृणीमहे मातॄन्त्सिन्धून् पर्वताञ्छर्यणावतः ।
अनागास्त्वं सूर्यमुषासमीमहे भद्रं सोमः सुवानो अद्या कृणोतु नः ॥२॥
द्यावा नो अद्य पृथिवी अनागसो मही त्रायेथां सुविताय मातरा ।
उषा उच्छन्त्यप बाधतामघं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥३॥
इयं न उस्रा प्रथमा सुदेव्यं रेवत् सनिभ्यो रेवती व्युच्छतु ।
आरे मन्युं दुर्विदत्रस्य धीमहि स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥४॥
प्र याः सिस्रते सूर्यस्य रश्मिभिर्ज्योतिर्भरन्तीरुषसो व्युष्टिषु ।
भद्रा नो अद्य श्रवसे व्युच्छत स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥५॥
अनमीवा उषस आ चरन्तु न उदग्नयो जिहतां ज्योतिषा बृहत् ।
आयुक्षातामश्विना तूतुजिं रथं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥६॥
श्रेष्ठं नो अद्य सवितर्वरेण्यं भागमासुव स हि रत्नधा असि ।
रायो जनित्रीं धिषणामुपब्रुवे स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥७॥

---

२ हम प्रार्थना करते हैं कि, द्यावापृथिवी हमारी रक्षा करें। जननीके समान नदियाँ और कुरुक्षेत्रके निकटस्थ पर्वत हमारी रक्षा करें। सूर्य और उषासे यही प्रार्थना है कि, हम अपराधी न हों। जो सोम प्रस्तुत किये जाते हैं, वह हमारा मङ्गल करें।

३ द्यावापृथिवी हमारी माताके समान हैं। हम इन दोनों महान् देवोंके निकट निरपराधी रहें। वह हमें सुखके लिये बचावें। उषादेवी, अधिकारका विनाश करके, हमारे पापोंका मोचन करें। प्रदीप्त अग्निके पास हम कल्याणकी भिक्षा करते हैं।

४ धनवती, मुख्या और पापोंको दूर भगानेवाली उषा हमें उत्तम धन दें। हम उसका भाग कर लें। हम दुष्टोंके क्रोधसे दूर रहें। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा चाहते हैं।

५ जो उषाएँ, सूर्य-किरणोंके साथ मिलकर और आलोकका धारण करके अन्धकारका विनाश करती हैं, वे हमें आज अन्न दें। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

६ रोग-शून्य उषाएं हमारे पास आवें। महान् प्रकाशसे युक्त अग्नि भी ऊपर उठें। हमारे पास आनेके लिये अश्विद्वय भी क्षिप्रगामी रथमें अपने दोनों घोड़ोंको जोतें। प्रदीप्त अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

७ सूर्यदेव, आज हमें अतीव उत्कृष्ट धन-भाग वितरित करो; क्योंकि तुम कामना पूर्ण करनेवाले हो। हम वैसे स्तोत्र पढ़ते हैं, जिससे धन उत्पन्न हो सके। प्रज्वलित अग्निके पास हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

पिपर्तु मा तदृतस्य प्रवाचनं देवानां यन्मनुष्या अमन्महि ।
विश्वा इदुस्राः स्पळुदेति सूर्यः स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥८॥
अद्वेषो अद्य बर्हिषः स्तरीमणि ग्राव्णां योगे मन्मनः साध ईमहे ।
आदित्यानां शर्मणि स्था भुरण्यसि स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥९॥
आ नो बर्हिः सधमादे बृहद्दिवि देवाँ ईळे सादया सप्त होतॄन् ।
इन्द्रं मित्रं वरुणं सातये भगं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥१०॥
त आदित्या आगता सर्वतातये वृधे नो यज्ञमवता सजोषसः ।
बृहस्पतिं पूषणमश्विना भगं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥११॥
तन्नो देवा यच्छत सुप्रवाचनं छर्दिरादित्याः सुभरं नृपाय्यम् ।
पश्वे तोकाय तनयाय जीवसे स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥१२॥

---

८ देवोंके लिये मनुष्यगण जिस यज्ञ-कार्यका संकल्प करते हैं, वही मेरी श्रीवृद्धि करें। प्रति प्रभातमें सूर्यदेव सारी वस्तुओंको स्पष्ट करके उगते हैं। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

९ यज्ञके लिये आज कुश बिछाया जाता है। सोम प्रस्तुत करनेके लिये दो पत्थर संयोजित किये जाते हैं। इस समय, अभीष्टकी सिद्धिके लिये, द्वेष-शून्य देवोंकी शरणमें जाना चाहिये। यजमान, तुम सब अनुष्ठान करते हो; इसलिये आदित्यगण तुम्हें सुखी करें। प्रदीप्त अग्निसे हम कल्याणकी भीख माँगते हैं।

१० अग्नि, हमारा यज्ञानुष्ठान हो रहा है। इसमें देवता लोग इकट्ठे होकर आमोद-आह्लाद करते हैं। इस यज्ञमें प्रकाण्ड द्युलोकमें रहनेवाले देवोंको बुलाओ, सात होताओंको बुलाओ और इन्द्र, मित्र, वरुण तथा भगको ले आओ। धन-प्राप्तिके लिये मैं सबकी स्तुति करता हूं। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा चाहते हैं।

११ प्रसिद्ध आदित्यो, तुम लोग आओ। इससे सारे विषयोंमें श्रीवृद्ध होगी ही। हमारी श्रीवृद्धिके लिये सब एकत्र होकर यज्ञकी रक्षा करें। बृहस्पति, पूषा, अश्विद्वय, भग और प्रज्वलित अग्निके पास हम कल्याणकी भीख माँगते हैं।

१२ देवो, अपने यज्ञकी सफलता सम्पादित करो। हे आदित्यो, धनसे पूर्ण और राज-योग्य गृह हमें दो। हम अपने पशु, पुत्र-पौत्र और परमायु आदि सारे विषयोंमें प्रज्वलित अग्निके पास कल्याण चाहते हैं।

विश्वे अद्य मरुतो विश्व ऊती विश्वे भवन्त्वग्नयः समिद्धाः ।
विश्वे नो देवा अवसागमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजो अस्मे ॥१३॥
यं देवासोऽवथ वाजसातौ यन्त्रायध्वे यं पिपृथात्यंहः ।
यो वो गोपीथे न भयस्य वेद ते स्याम देववीतये तुरासः ॥१४॥

## ३६ सूक्त

विश्वदेव देवता। लूश ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

उषासानक्ता बृहती सुपेशसा द्यावाक्षामा वरुणो मित्रो अर्यमा ।
इन्द्रं हुवे मरुतः पर्वताँ अप आदित्यान् द्यावापृथिवी अपः स्वः ॥१॥
द्यौश्च नः पृथिवी च प्रचेतस ऋतावरी रक्षतामंहसो रिषः ।
मा दुर्विदत्रा निर्ऋतिर्न ईशत तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥२॥

---

१३ सारे मरुत् हमें सब प्रकारसे बचावें। समस्त अग्नि प्रदीप्त हों। निखिल देवगण, हमारी रक्षाके लिये, पधारें सब प्रकारका अन्न और सम्पत्ति हमें मिले।

१४ देवो, जिसे तुम अन्न देकर बचाते हो, जिसका त्राण करते हो, जिसे पाप-मुक्त करके श्रीवृद्धिसे सम्पन्न करते हो और जो तुम्हारे आश्रयमें रहकर भयका नाम तक नहीं जानता, देव-कार्यके लिये व्यग्र होकर हम वैसे ही व्यक्ति हों।

१ उषा, रात्रि, महती और सुसंघटित-शरीरा द्यावापृथिवी, वरुण, मित्र, अर्यमा, इन्द्र, मरुद्गण, पर्वतगण, जलगण और आदित्यगणको मैं यज्ञमें बुलाता हूं। द्यावापृथिवी, अन्तरीक्ष और स्वर्गको मैं बुलाता हूं।

२ प्रशस्य-चित्ता और यज्ञकी अधिष्ठातृ-स्वरूपा द्यावापृथिवी हमें पापसे बचावें—शत्रुके हाथसे उबारें। दुष्ट आशयवाली निर्ऋति (मृत्यु-देवता) हमारे ऊपर आधिपत्य न करें। हम देवोंसे विशिष्ट रक्षाकी प्रार्थना करते हैं।

विश्वस्मान्नो अदितिः पात्वंहसो माता मित्रस्य वरुणस्य रेवतः ।
स्वर्वज्ज्योतिरवृकं नशीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥३॥
ग्रावा वदन्नप रक्षांसि सेधतु दुष्वप्न्यं निर्ऋतिं विश्वमत्रिणम् ।
आदित्यं शर्म मरुतामशीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥४॥
एन्द्रो बर्हिः सीदतु पिन्वतामिला बृहस्पतिः सामभिर्ऋक्वो अर्चतु ।
सुप्रकेतं जीवसे मन्म धीमहितद्देवानामवो अद्यावृणीमहे ॥५॥
दिविस्पृशं यज्ञमस्माकमश्विना जीराध्वरं कृणुतं सुम्नमिष्टये ।
प्राचीनरश्मिमाहुतं घृतेन तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥६॥
उप ह्वये सुहवं मारुतं गणं पावकमृष्वं सख्याय शंभुवम् ।
रायस्पोषं सौश्रवसाय धीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥७॥

---

३ धनी मित्र और वरुणकी जननी अदिति देवी हमें पापोंसे बचावें । हम सब प्रकार अविनाशी ज्योति प्राप्त करें । देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी प्रार्थना करते हैं ।

४ सोम-निष्पीड़नके लिये उपयोगी पत्थर, शब्द करते हुए राक्षसोंको दूर भगावे । दुःस्वप्न, मृत्यु-देवी और सारे शत्रुओंको दूर करे । हम आदित्यों और मरुतोंसे सुख पावें । देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी भीख माँगते हैं ।

५ इन्द्र आकर कुशके ऊपर बैठें । विशेष रूपसे स्तुति-वाक्य उच्चारित हों । ऋक् और सामके द्वारा बृहस्पति अर्चना करें । हम उत्तमोत्तम और अभिलषणीय वस्तुओंको प्राप्त करके दीर्घजीवी हों । देवोंके पास विशिष्ट रक्षाकी हम भिक्षा करते हैं ।

६ अश्वियुगल, ऐसा करो कि, हमारा यज्ञ देवलोकको छू ले । यज्ञके सारे विघ्न दूर करो । हमारा मनोरथ सिद्ध करके सुखी करो । जिन अग्निमें घृतकी आहुति दी जाती है, उनकी ज्वालाएँ देवोंके प्रति प्रेरित करो । देवोंसे हम साधारण रक्षाकी प्रार्थना करते हैं ।

७ जो मरुद्गण सबको शुद्ध करते हैं, जो देखनेमें सुन्दर हैं, जिनसे कल्याणकी उत्पत्ति होती है, जो धनको बढ़ाते हैं और जिनका नाम लेनेपर मनमें आनन्द होता है, उन्हें मैं बुलाता हूं । विशिष्ट रूपसे अन्नकी प्राप्तिके लिये मैं उनका ध्यान करता हूं । हम देवोंसे असाधारण रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं ।

अपां पेरुं जीवधन्यं भरामहे देवाव्यं सुहवमध्वरश्रियम् ।
सुरश्मिं सोममिन्द्रियं यमीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥८॥
सनेम तत् सुसनिता सनित्वभिर्वयं जीवा जीवपुत्रा अनागसः ।
ब्रह्मद्विषो विष्वगेनो भरेरत तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥९॥
ये स्था मनोर्यज्ञियास्ते शृणोतन यद्वो देवा ईमहे तद्दातन ।
जैत्रं क्रतुं रयिमद्वीरवद्यशस्तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥१०॥
महदद्य महतामावृणीमहेऽवो देवानां बृहतामनर्वणाम् ।
यथा वसु वीरजातं नशामहै तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥११॥
महो अग्नेः समिधानस्य शर्मण्यनागा मित्रे वरुणे स्वस्तये ।
श्रेष्ठे स्याम सवितुः सवीमनि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥१२॥

---

८ जो सोम जलसे मिलते हैं, जिनसे प्राणी स्वच्छन्दता पाते हैं, जो देवोंको परितृप्त करते हैं, जिनका नाम लेनेपर आनन्द होता है, जो यज्ञको शोभा हैं और जिनकी दीप्ति उत्कृष्ट हैं, उनको हम धारण करते हैं और उनसे हम बलकी याचना करते हैं। देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

९ हम और हमारे पुत्रगण दीर्घजीवी हों। हम अपराधीन हों। पुत्रादिके साथ सोमरसका भाग करके हम पान करें। स्तुति-द्रोही सब प्रकारके पापोंसे परिपूर्ण हों। देवोंसे हम विशिष्ट रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

१० देवो, तुमलोग मनुष्योंसे यज्ञ पानेके योग्य हो। सुनो। तुमसे हम जो माँगते हैं, उसे दो। जिससे हम बली हों, ऐसा ज्ञान दो। धन, लोकबल और यश दो। देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी भिक्षा माँगते है।

११ देवता लोग जैसे महान्, प्रकाण्ड और अविचलित हैं, हम उनसे वैसी ही विशिष्ट रक्षाकी प्रार्थना करते हैं। हम धन और लोकबल प्राप्त करें। देवोंसे हम विशिष्ट रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

१२ प्रज्वलित अग्निसे हम विशिष्ट सुख प्राप्त करें। मित्र और वरुणके पास हम निरपराधी होकर कल्याण प्राप्त करें। सूर्य हमें सर्वोत्कृष्टशान्ति दें। देवोंसे हम विशिष्ट रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

ये सवितुः सत्यसवस्य विश्वे मित्रस्य व्रते वरुणस्य देवाः ।
ते सौभगं वीरवद्गोमदप्नो दधातन द्रविणं चित्रमस्मे ॥१३॥
सविता पश्चातात् सविता पुरस्तात् सवितोत्तरात्तात् सविताद् धरात्तात् ।
सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रासतां दीर्घमायुः ॥१४॥

———

## ३७ सूक्त

सूर्य देवता। सूर्यपुत्र अभितपा ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवाय तदृतं सपर्यत ।
दूरेदृशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्याय शंसत ॥१॥
सा मा सत्योक्तिः परिपातु विश्वतो द्यावा च यत्र ततनन्नहानि च ।
विश्वमन्यन्निविशते यदेजति विश्वाहापो विश्वाहोदेति सूर्यः ॥२॥

---

१३ जो सब देवता सत्य-स्वभाव सूर्य, मित्र और वरुणके कार्योंमें उपस्थित रहते हैं, वे हमें सौभाग्य, लोकबल, गाय और पुण्यकर्म दें तथा विविध प्रकारके धन भी दें।

१४ क्या पश्चिम, क्या पूर्व, क्या उत्तर और क्या दक्षिण—सूर्यदेव हम सबको सर्वत्र श्रीवृद्धि दें। हमें दीर्घ परमायु प्रदान करें।

१ पुरोहितो, जो सूर्य मित्र और वरुणको देखते हैं, जिनकी दीप्ति अतीव उज्ज्वल है, जो दूरसे ही सारी वस्तुओंको देखते हैं, जिन्होंने देवोंके वंशमें जन्म ग्रहण किया है, जो सारी वस्तुओंको स्वच्छ कर देते हैं और आकाशके पुत्र-स्वरूप हैं, उन सूर्यको नमस्कार करो, पूजा करो और स्तुति करो।

२ वही सत्य-वचन है, जिसका अवलम्बन करके आकाश और दिन वर्त्तमान हैं, सारा संसार और प्राणिवृन्द जिसपर आश्रित हैं, जिसके प्रभावसे प्रतिदिन जल प्रवाहित होता है और सूर्य उगते हैं। वह सत्य-वचन मुझे सारे विषयोंमें बचावे।

न ते अदेवः प्रदिवो निवासते यदेतशेभिः पतरै रथर्यसि ।
प्राचीनमन्यदनु वर्तते रज उदन्येन ज्योतिषा यासि सूर्य ॥३॥
येन सूर्य ज्योतिषा बाधसे तमो जगच्च विश्वमुदियर्षि भानुना ।
तेनास्मद्विश्वामनिरामनाहुतिमपामीवामप दुःष्वप्न्यं सुव ॥४॥
विश्वस्य हि प्रेषितो रक्षसि व्रतमहेलयन्नुच्चरसि स्वधा अनु ।
यदद्य त्वा सूर्योपब्रवामहै तन्नो देवा अनुमंसीरत क्रतुम् ॥५॥
तं नो द्यावापृथिवी तन्न आप इन्द्रः शृण्वन्तु मरुतो हवं वचः ।
मा शूने भूम सूर्यस्य सन्दृशि भद्रं जीवन्तो जरणामशीमहि ॥६॥
विश्वाहा त्वा सुमनसः सुचक्षसः प्रजावन्तो अनमीवा अनागसः ।
उद्यन्तं त्वा मित्रमहो दिवे दिवे ज्योग्जीवाः प्रति पश्येम सूर्य ॥७॥

---

३ सूर्यदेव, जिस समय तुम वेगशाली घोड़ेको रथमें जोतकर आकाश-मार्गसे जाते हो, उस समय कोई भी देव-शून्य जीव तुम्हारे पास नहीं आने पाता । तुम्हारी वह चिर-परिचित असाधारण ज्योति तुम्हारे साथ-साथ जाती है—उसी ज्योतिका धारण करके तुम उगते हो ।

४ सूर्यदेव, जिस ज्योतिके द्वारा तुम अन्धकारको नष्ट करते हो और जिस किरणके द्वारा सारे संसारको प्रकाशित करते हो, उसके द्वारा तुम हमारी सारी दरिद्रता नष्ट करो । हमारा पाप, रोग और दुःख दूर करो ।

५ सूर्यदेव, तुम सरल रूपसे सारे संसारके क्रिया-कलापकी रक्षा करनेके लिये प्रेरित हुए हो । तुम प्रातःकालके होमसे उदित होते हो । सूर्य, आज हम जिस समय तुम्हारे नामका उच्चारण करते हैं, उस समय देवता लोग हमारे यज्ञको सफल करें ।

६ द्यावापृथिवी, जल, मरुत् और इन्द्र हमारा आह्वान सुनें । सूर्यकी कृपा-दृष्टि रहते हम दुःखभागी न हों । हम दीर्घजीवी होकर वृद्धावस्था पर्यन्त सौभाग्यशाली रहें ।

७ बन्धुओंके सत्कारकारी सूर्य, जैसे तुम दिन-दिन उगते हो, वैसे ही हम प्रतिदिन तुम्हारा, प्रशस्त मन और प्रशस्त चक्षुसे, दर्शन करें; प्रत्यह ही हम नीरोग शरीरसे सन्तानोंसे घेरे जाकर और तुम्हारे पास किसी दोषसे दोषी न होकर तुम्हारा दर्शन कर सकें । हम चिरजीवी होकर तुम्हारे दर्शनकी प्राप्ति कर सकें ।

महि ज्योतिर्बिभ्रतं त्वा विचक्षण भास्वन्तं चक्षुषेचक्षुषे मयः ।
आरोहन्तं बृहतः पाजसस्परि वयं जीवाः प्रति पश्येम सूर्य ॥८॥
यस्य ते विश्वा भुवनानि केतुना प्रचेरते नि च विशन्ते अक्तुभिः ।
अनागास्त्वेन हरिकेश सूर्याह्नाह्ना नो वस्यसावस्यसोदिहि ॥९॥
शन्नो भव चक्षसा शन्नो अह्ना शं भानुना शं हिमा शं घृणेन ।
यथा शमध्वञ्छमसद्दुरोणे तत् सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम् ॥१०॥
अस्माकं देवा उभयाय जन्मने शर्म यच्छत द्विपदे चतुष्पदे ।
अदत् पिबदूर्जयमानमाशितं तदस्मे शं योररपो दधातन ॥११॥
यद्वो देवाश्चकृम जिह्वया गुरु मनसो वा प्रयुती देवहेलनम् ।
अरावा यो नो अभि दुच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन ॥१२॥

---

८ सर्व-दर्शक सूर्य, तुम प्रकाण्ड ज्योति धारण करो । तुम्हारी दीप्ति उज्ज्वल है—सबकी आँखोंमें तुम सुखकर हो। जिस समय तुम्हारी वह मूर्त्ति आकाशके ऊपर चढ़ती है, उस समय हम, प्रदीप्त शरीरके साथ, नित्य उसका दर्शन करें ।

९ तुम्हारी जिस पताकाके साथ-साथ सारा संसार प्रकाश पाता है और प्रतिरात्र अन्धकारावृत होकर अन्तर्धान होता है, हे पिङ्गलवर्ण केशवाले सूर्य, तुम उसी उत्तम पताकाको लेकर दिन-दिन उगो । हम भी निर्दोष होकर उसका दर्शन पावें ।

१० तुम्हारी दृष्टि हमारा कल्याण करे । तुम्हारा दिन और किरण, तुम्हारी शीतलता और तुम्हारा उत्ताप कल्याणकर हो । हम घरमें ही रहें अथवा मार्गपर यात्रा करें-- वह सदा कल्याणकर हो । सूर्य, हमें विविध सम्पत्तियाँ दो ।

११ देवो, हमारे अधिकारमें जो द्विपद और चतुष्पद हैं, उन सबको तुम सुखी करो। सभी प्राणी आहार करें, दुष्ट और बलिष्ठ हों और हमारे साथ वह सब अटूट स्वाधीनता पावें ।

१२ धन-सम्पन्न देवो, कथा द्वारा हो, मानसिक क्रिया द्वारा हो, देवोंके पास जो कुछ अपराधका कार्य हम किया करते हैं, उसका पाप तुम लोग उस व्यक्तिके ऊपर न्यस्त करो, जो व्यक्ति दान-धर्मसे विमुख है और जो हमारा अनिष्ट किया करता है।

## ३८ सूक्त

इन्द्र देवता। मुष्कवान् इन्द्र ऋषि। जगती छन्द।

अस्मिन्न इन्द्र पृत्सुतौ यशस्वति शिमीवति क्रन्दसि प्राव सातये।
यत्र गोषाता धृषितेषु खादिषु विष्वक् पतन्ति दिद्यवो नृषाह्ये ॥१॥

स नः क्षुमन्तं सदने व्यूर्णुहि गोअर्णसं रयिमिन्द्र श्रवाय्यम्।
स्याम ते जयतः शक्र मेदिनो यथा वयमुश्मसि तद्वसो कृधि ॥२॥

यो नो दास आर्यो वा पुरुष्टुतादेव इन्द्र युधये चिकेतति।
अस्माभिष्टे सुषहाः सन्तु शत्रवस्त्वया वयं तान्वनुयाम संगमे ॥३॥

यो दभ्रेभिर्हव्यो यश्च भूरिभिर्यो अभीके वरिवोविन्नृषाह्ये।
तं विखादे सस्निमद्य श्रुतं नरमर्वाञ्चमिन्द्रमवसे करामहे ॥४॥

स्ववृजं हि त्वामहमिन्द्र शुश्रवानानुदं वृषभ रध्रचोदनम्।
प्रमुञ्चस्व परि कुत्सादिहागहि किमु त्वावान्मुष्कयोर्बद्ध आसते ॥५॥

---

१ इन्द्र, यह जो युद्ध है, जिसमें यश मिलता है और प्रहारपर प्रहार चलता है, उसमें तुम वीर-मदसे मत्त होकर उद्घोष करते हो और शत्रुओंसे जीती हुई गायोंको सुरक्षित करते हो। युद्धमें एक ओर दीप्यमान वाण प्रवल शत्रुओंके ऊपर गिरते हैं—इस व्यापारको देखकर लोग हत-बुद्धि हो जाते हैं।

२ फलतः हे इन्द्र, प्रचुर धन-धान्य और गायोंसे हमारा घर भर दो। शक्र, तुम्हारे विजयी होनेपर हम तुम्हारे स्नेहके पात्र हों। हम जिस धनको अभिलाषा करते हैं, वह हमें दो।

३ बहुतोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, आर्यजातिका हो वा दासजातिका हो, जो कोई भी देव-शून्य मनुष्य हमारे साथ युद्ध करनेकी इच्छा करता है, वह अनायास हमसे हार जाय। तुम्हारी कृपासे हम उन्हें युद्धमें हरावें।

४ जिनकी पूजा अल्प मनुष्य करते हैं अथवा बहुत मनुष्य करते हैं, जो दुःसाध्य युद्धमें विजयी होकर उत्तमोत्तम वस्तुओंको जीतते हैं, जो युद्धमें स्नान करते हैं और जो सबके यहाँ प्रसिद्धयशा होते हैं, आश्रय पानेके लिये हम उन्हीं इन्द्रको अपने अनुकूल करते हैं।

५ इन्द्र, तुम अपने भक्तोंको उत्साहसे युक्त करते हो। हमें कौन उत्साहित करेगा? हम जानते हैं कि, तुम स्वयं अपना बन्धन-छेदन करनेमें समर्थ हो। फलतः कुत्सके हाथसे हमें छुड़ाओ और पधारो। तुम्हारे समान व्यक्ति क्यों मुष्क-द्वयका बन्धन सहता है?

## सूक्त ३९

अश्विद्वय देवता। कक्षीवान्‌की पुत्री और कोढ़ी घोषा नामक ब्रह्मवादिनी स्त्री ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

यो वां परिज्मा सुवृदश्विना रथो दोषामुषासो हव्यो हविष्मता।
शश्वत्तमासस्तमु वामिदं वयं पितुर्न नाम सुहवं हवामहे ॥१॥

चोदयतं सूनृताः पिन्वतं धिय उत् पुरन्धीरीरयतं तदुश्मसि।
यशसं भागं कृणुतं नो अश्विना सोमं न चारुं मघवत्सु नस्कृतम् ॥२॥

अमाजुरश्चिद्भवथो युवं भगोऽनाशोश्चिदवितारापमस्य चित्।
अन्धस्य चिन्नासत्या कृशस्य चिद्युवामिदाहुर्भिषजा रुतस्य चित् ॥३॥

युवं च्यवानं सनयं यथा रथं पुनर्युवानं चरथाय तक्षथुः।
निष्टौग्र्यमूहथुरद्भ्यस्परि विश्वेत्ता वां सवनेषु प्रवाच्या ॥४॥

---

१ अश्विद्वय, तुम लोगोंका सर्वत्रविहारी जो सुघटित रथ है और जिस रथको, उद्देशके लिये, रात-दिन बुलाना यजमानके लिये कर्त्तव्य है, हम उसी रथका क्रमागत नाम लेते हैं। जैसे पिताका नाम लेनेमें आनन्द आता है, वैसे ही इस रथका भी नाम लेनेमें।

२ हमें मधुर वाक्य उच्चारण करनेमें प्रवृत्त करो। हमारा कर्म सम्पन्न करो। विविध बुद्धियोंका उदय कर दो—हम यही कामना करते हैं। अश्विद्वय, अतीव प्रशंसित धनका भाग हमें दो। जैसे सोमरस प्रीतिप्रद होता है, वैसे ही हमें भी यजमानोंके पास प्रीति-प्रद कर दो।

३ पितृ-गृहमें एक स्त्री (घोषा) वार्द्धक्यको प्राप्त कर रही थी, तुम लोग उसके सौभाग्य-स्वरूप वरको ले आये। जिसे चलनेकी शक्ति नहीं है अथवा जो अतीव नीच है, उसके तुम लोग आश्रय हो। तुम्हें लोग अन्धे, दुर्बल और रोते हुए रोगीका चिकित्सक कहते हैं।

४ जैसे कोई पुराने रथको नये रूपसे बनाकर उसके द्वारा गति-विधि करता है, वैसे ही तुमने जरा-जीर्ण च्यवन ऋषिको युवा बना दिया था। तुम लोगोंने ही तुग्र-पुत्रको जलके ऊपर निरुपद्रव-रूपसे, वहन करके तटपर लगा दिया था। यज्ञके समय तुम दोनोंके यह सब कार्य, विशेष रूपसे, वर्णन करनेके योग्य हैं।

पुराणा वां वीर्या प्रब्रवा जनेऽथो हासथुर्भिषजा मयोभुवा ।
ता वां नु नव्याववसे करामहेऽयं नासत्या श्रदरिर्यथा दधत् ॥५॥
इयं वामह्वे शृणुतं मे अश्विना पुत्रायेव पितरा मह्यं शिक्षतम् ।
अनापिरज्ञा असजात्यामतिः पुरा तस्या अभिशस्तेरव स्पृतम् ॥६॥
युवं रथेन विमदाय शुन्ध्युवं न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषणाम् ।
युवं हवं वध्रिमत्या अगच्छतं युवं सुषुतिं चक्रथुः पुरन्धये ॥७॥
युवं विप्रस्य जरणामुपेयुषः पुनः कलेरकृणुतं युवद्वयः ।
युवं वन्दनमृश्यदादुदूपथुर्युवं सद्यो विश्पलामेतवे कृथः ॥८॥
युवं ह रेभं वृषणा गुहा हितमुदैरयतं ममृवांसमश्विना ।
युवमृबीसमुत तप्तमत्रय ओमन्वन्तं चक्रथुः सप्तवध्रये ॥९॥

---

५ तुम लोगोंके उन सारे वीरत्वके कार्योंका, लोगोंके पास, मैं वर्णन करती हूं । इसके अतिरिक्त तुम दोनों ही अत्यन्त पटु चिकित्सक हो । इसीलिये, तुम्हारा आश्रय पानेकी अभिलाषासे, मैं तुम्हारी स्तुति करती हूं । सत्यस्वरूप अश्विद्वय, मैं इस प्रकारसे स्तुति करती हूं कि, उसका विश्वास यजमान अवश्य करेगा ।

६ अश्विद्वय, मैं तुम दोनोंको बुलाती हूं, सुनो । जैसे पिता पुत्रको शिक्षा देता है, वैसे ही मुझे शिक्षा दो । मेरा कोई यथार्थ बन्धु नहीं है, मैं ज्ञान-शून्य हूं । मेरा कुटुम्ब नहीं है, बुद्धि भी नहीं है । मेरी कोई दुर्गति आनेके पहले ही उसे दूर करो ।

७ पुरुमित्र राजाकी "शुन्ध्युव" नामक कन्याको तुमलोग रथपर चढ़ा ले गये थे और विमदके साथ उसका विवाह करा दिया था । वध्रिमतीने तुम लोगोंको बुलाया था । उसकी बात सुनकर और उसकी प्रसव-वेदनाको दूर करके सुखसे प्रसव करा था ।

८ कलि नामका जो स्तोता अत्यन्त वृद्ध हो गया था, तुम लोगोंने उसे फिर यौवनसे युक्त किया था । तुम लोगोंने ही वन्दन नामक व्यक्तिको कुएँके बीचसे निकाला था । तुम लोगोंने ही लँगड़ी विश्पलाको लोहेका चरण देकर उसे तुरत चलनेवाली बना दिया था ।

९ अभीष्ट-फल दाता अश्विद्वय, जिस समय रेभ नामके व्यक्तिको शत्रुओंने मृत-प्राय करके गुहाके बीच रख दिया था, उस समय तुम लोगोंने ही उसे संकटसे बचाया था । जिस समय अत्रि ऋषि, सात बन्धनोंमें बाँधे जाकर, जलते अग्निकुण्डमें फेंके गये थे, उस समय तुमलोगोंने ही उस अग्निकुण्डको बुझाया था ।

युवं श्वेतं पेदवेऽश्विनाश्वं नवभिर्वाजैर्नवती च वाजिनम्।
चर्कृत्यं ददथुर्द्रावयत्सखं भगं न नृभ्यो हव्यं मयोभुवम् ॥१०॥
न तं राजानावदिते कुतश्चन नांहो अश्नोति दुरितं नकिर्भयम्
यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी पुरोरथं कृणुथः पत्न्या सह ॥११॥
आ तेन यातं मनसो जवीयसा रथं यं वामृभवश्चक्रुरश्विना ।
यस्य योगे दुहिता जायते दिव उभे अहनी सुदिने विवस्वतः ॥१२॥
ता वर्तिर्यातं जयुषा वि पर्वतमपिन्वतं शयवे धेनुमश्विना ।
वृकस्य चिद्वर्तिकामन्तरास्याद्युवं शचीभिर्ग्रसितामसुञ्चतम् ॥१३॥
एतं वां स्तोममश्विनावकर्मातक्षाम भृगवो न रथम्।
न्यमृक्षाम योषणां न मर्ये नित्यं न सूनुं तनयं दधानाः ॥१४॥

१० अश्विद्वय, तुमने ही पेदु राजाको, निन्यानवे घोड़ोंके साथ, एक उत्तम शुभ्रवर्ण घोड़ा दिया था। वह घोड़ा विचित्र-तेजस्वी था, उसे देखते ही सारी शत्रु-सेना भाग जाती थी, वह मनुष्योंके लिये बहु-मूल्य धन था। इसका नाम लेनेपर आनन्द प्राप्त होता था और उसे देखनेपर मनमें सुख होता था।

११ अक्षय राजाओ, तुम दोनोंका नाम कीर्त्तन करनेसे आनन्द [illegible] । जिस समय तुम रास्तेमें जाते हो, उस समय सब, चारो ओरसे, तुम्हारी स्तुति करते हैं। यदि तुम दम्पतीको अपने रथके अगले भागमें चढ़ाकर आश्रय दो, तो उन्हें कोई भी पाप, दुर्गति वा विपद नहीं छुवे।

१२ अश्विद्वय, ऋभु नामक देवोंने तुम्हारे लिये रथ प्रस्तुत किया था। उस रथके उदय होनेपर आकाशकी कन्या उषा प्रकट होती हैं और सूर्यसे अतीव सुन्दर दिन तथा रात्रि जन्म लेती हैं। उसी मनसे अधिक वेगवाले रथपर बैठकर तुम लोग पधारो।

१३ अश्विद्वय, तुम लोग उसी रथपर चढ़कर पर्वतकी ओर जानेवाले मार्गपर गमन करो और शयु नामक मनुष्यकी बूढ़ी गायको फिर दूधवाली बना दो। तुम्हारी ऐसी क्षमता है कि, तेंदुएके मुँहमें गिरे वर्त्तिका ( चटका ) नामक पक्षीको तुमने उसके मुँहसे निकालकर उसका उद्धार किया था।

१४ जैसे भृगु-सन्तानें रथ बनाती हैं, वैसे ही, हे अश्विद्वय, तुम लोगोंके लिये यह रथ प्रस्तुत किया है। जैसे जामाताको कन्या देनेके समय लोग उसे वस्त्राभूषणसे अलङ्कृत करके देते हैं, वैसे ही हमने इस स्तोत्रको अलङ्कृत किया है। हमारे पुत्र-पौत्र सदा प्रतिष्ठित रहें।

# ४० सूक्त

अश्विद्वय देवता। घोषा ऋषि। जगती छन्द।

रथं यान्तं कुह को ह वां नरा प्रति द्युमन्तं सुविताय भूषति ।
प्रातर्यावाणं विभ्वं विशेविशे वस्तोर्वस्तोर्वहमानं धिया शमि ॥१॥
कुह स्विद्दोषा कुह वस्तोरश्विना कुहाभिपित्वं करतः कुहोषतुः ।
को वां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ ॥२॥
प्रातर्जरेथे जरणेव कापया वस्तोर्वस्तोर्यजता गच्छथो गृहम् ।
कस्य ध्वस्रा भवथः कस्य वा नरा राजपुत्रेव सवनाव गच्छथः ॥३॥
युवां मृगेव वारणा मृगण्यवो दोषा वस्तोर्हविषा नि ह्वयामहे ।
युवं होत्रामृतुथा जुह्वते नरेषं जनाय वहथः शुभस्पती ॥४॥

---

१ कर्मोंके उपदेशक अश्विद्वय, तुम्हारा प्रकाण्ड रथ जिस समय प्रातःकाल जाता है और प्रत्येक व्यक्तिके पास धन वहन करके ले जाता है, उस समय अपने यज्ञकी सफलताके लिये कौन यजमान उस उज्ज्वल रथका स्तोत्र करता है? तुम्हारा वह रथ कहाँ है?

२ अश्विद्वय, तुम लोग दिन और रातमें कहाँ जाते हो? कहाँ समय बिताते हो? जैसे विधवा स्त्री, शयन-कालमें, देवर (द्वितीय वर?)का और कामिनी अपने पतिका समादर करती है, वैसे ही यज्ञमें समादरके साथ तुम्हें कौन बुलाता है?

३ दो वृद्ध राजाओंके समान तुम्हें जगानेके लिये प्रातःकाल स्तोत्र-पाठ किया जाता है। यज्ञ पानेके लिये तुम लोग प्रतिदिन किसके घरमें जाते हो? किसका पाप नष्ट करते हो? कर्मोंके उपदेशक अश्विद्वय, राजकुमारोंके समान तुम दोनों किसके यज्ञमें जाते हो?

४ जैसे व्याध शार्दूलकी इच्छा करते हैं, वैसे ही, यज्ञीय द्रव्य लेकर, मैं तुम्हें दिन-रात बुलाता हूं। उपदेशक-द्वय यथा-समय लोग तुमलोगोंके लिये होम किया करते हैं। तुम लोग भी लोगोंके लिये अन्न ले आते हो; क्योंकि तुम कल्याणके अधिपति हो।

युवां ह घोषा पर्यश्विना यती राज्ञ ऊचे दुहिता पृच्छे वां नरा ।
भूतं मे अह्न उत भूतमक्तवेऽश्वावते रथिने शक्तमर्वते ॥५॥
युवं कवी ष्ठः पर्यश्विना रथं विशो न कुत्सो जरितुर्नशायथः ।
युवोर्ह मक्षा पर्यश्विना मध्वासा भरत निष्कृतं न योषणा ॥६॥
युवं ह भुज्युं युवमश्विना वशं युवं शिञ्जारमुशनामुपारथुः ।
युवो रराव्रा परि सख्यमासते युवोरहमवसा सुम्नमाचके ॥७॥
युवं ह कृशं युवमश्विना शयुं युवं विधन्तं विधवामुरुष्यथः ।
युवं सनिभ्यः स्तनयन्तमश्विनाप व्रजमूर्णुथः सप्तास्यम् ॥८॥
जनिष्ट योषा पतयत् कनीनको वि चारुहन्वीरुधो दंसना अनु ।
आस्मै रीयन्तेनिवनेव सिन्धवोऽस्मा अह्ने भवति तत् पतित्वनम् ॥९॥

५ अश्विद्वय, उपदेशक-द्वय, मैं राजकुमारी घोषा हूं। मैं चारो ओर घूम-घूमकर तुम्हारी ही
कथा कहती हूं, तुम्हीं लोगोंके विषयकी जिज्ञासा करती हूं। क्या दिन, क्या रात, तुम लोग बरा-
बर मेरे यहाँ रहते हो। रथ-युक्त और अश्व-सम्पन्न मेरे भ्रातुष्पुत्रका दमन करते हो।

६ कवि-द्वय, तुम दोनों रथपर चढ़े हुए हो। अश्विद्वय, तुम लोग कुत्सके समान रथपर चढ़-
कर स्तोताके घरमें जाते हो। तुम्हारा मधु इतना अधिक है कि, उसे मक्खियाँ मुँहमें ग्रहण करती
हैं। जैसे कोई स्त्री व्यभिचारमें रत रहती है, वैसे ही मक्खियाँ तुम्हारे मधुका ग्रहण करती हैं।

७ अश्विद्वय, तुमने भुज्यु नामक व्यक्तिको समुद्रसे बचाया था। तुमने वश राजा,
अत्रि और उशनाका उद्धार किया था। जो दाता है, वही तुम्हारा बन्धुत्व प्राप्त करता है।
तुम्हारे आश्रयसे जो सुख प्राप्त होता है, मैं उसकी कामना करता हूं।

८ अश्विद्वय, तुम लोगोंने ही कृश, शयु, अपने परिचारक और विधवाको बचाया था। यज्ञ-
कर्त्ताके लिये तुम्हीं लोग मेघको फाड़ते हो, जिससे गतिशील द्वारवाला मेघ, शब्द करते हुए, बर-
साता है।

९ मैं घोषा हूं। नारी-लक्षण प्राप्त करके सौभाग्यवती हुई हूं। मेरे विवाहके लिये वर
आया है। तुमने वृष्टि बरसायी है; इसलिये उसके लिये शस्य आदि भी उत्पन्न हुए हैं। निम्ना-
भिमुखी होकर नदियाँ इनकी ओर बह रही हैं। यह रोग-रहित हैं। सब तरहका सुख भोगनेके
योग्य इन्हें शक्ति हो गयी है।

जीवं रुदन्ति वि मयन्ते अध्वरे दीर्घामनु प्रसितिं दीधियुर्नरः ।
वामं पितृभ्यो य इदं समेरिरे मयः पतिभ्यो जनयः परिष्वजे ॥१०॥
न तस्य विद्म तदु षु प्र वोचत युवा ह यद्युवत्याः क्षेति योनिषु ।
प्रियोस्त्रियस्य वृषभस्य रेतिनो गृहं गमेमाश्विना तदुश्मसि ॥११॥
आ वामगन्त्सुमतिर्वाजिनीवसू न्यश्विना हृत्सु कामा अयंसत ।
अभूतं गोपा मिथुना शुभस्पती प्रिया अर्यम्णो दुर्यां अशीमहि ॥१२॥
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ धत्तं रयिं सहवीरं वचस्यवे ।
कृतं तीर्थं सुप्रपाणं शुभस्पती स्थाणुं पथेष्ठामप दुर्मतिं हतम् ॥१३॥
क्व स्विदद्य कतमास्वश्विना विक्षु दस्रा मादयेते शुभस्पती ।
क ईं नि येमे कतमस्य जग्मतुर्विप्रस्य वा यजमानस्य वा गृहम् ॥१४॥

---

१० अश्विद्वय, जो लोग अपनी स्त्रीको प्राण-रक्षाके लिये रोदन तक करते हैं, स्त्रियोंको यज्ञ-कार्यमें नियुक्त करते हैं, उनका, अपनी बाँहोंसे, बहुत देरतक आलिङ्गन करते हैं और सन्तान उत्पन्न करके पितृ-यज्ञमें नियुक्त करते हैं, उनको स्त्रियाँ सुख-पूर्वक आलिङ्गन करती हैं।

११ अश्विद्वय, उनका वैसा सुख मैं नहीं जानती। युवक स्वामी और युवती स्त्रीके सहवास-सुखको मुझे भली भाँति समझा दो। अश्विद्वय, मेरी एक मात्र यही अभिलाषा है कि, मैं स्त्रीके प्रति अनुरक्त बलिष्ठ स्वामीके गृहमें जाऊँ।

१२ अन्न और धनवाले अश्विद्वय, तुम दोनों मेरे प्रति सदय होओ। मेरे मनकी अभिलाषाएँ पूरी करो। तुम कल्याण करनेवाले हो। मेरे रक्षक होओ। पति-गृहमें जाकर हम पतिके लिये प्रिय बनें।

१३ मैं तुम्हारी स्तुति करती हूं; इसलिये तुमलोग मुझसे सन्तुष्ट होकर मेरे पतिके गृहमें धन और सन्तति दो। कल्याण करनेवाले अश्विद्वय, मैं जिस तीर्थ (तट) पर जल पीती हूं, उसे तुम सुविधा-जनक करो। मेरे पति-गृहमें जानेके मार्गमें यदि कोई दुष्टाशय विघ्न करे, तो उसे नष्ट करना।

१४ प्रिय-दर्शन और कल्याणकर्त्ता अश्विद्वय, आजकल तुम कहाँ, किसके घरमें, आमोद-प्रमोद करते हो? कौन तुम्हें बाँधकर रखे हुए है? किस बुद्धिमान् यजमानके घरमें तुम गये हो?

## ४१ सूक्त

अश्विद्वय देवता। घोषा-पुत्र सुहस्त ऋषि। जगती छन्द।

समानमु त्यं पुरुहूतमुक्थ्यं रथं त्रिचक्रं सवना गनिग्मतम्।
परिज्मानं विदथ्यं सुवृक्तिभिर्वयं व्युष्टा उषसो हवामहे ॥१॥
प्रातर्युजं नासत्याधितिष्ठथः प्रातर्यावाणं मधुवाहनं रथम्।
विशो येन गच्छथो यज्वरीर्नरा कीरेश्चिद्यज्ञं होतृमन्तमश्विना ॥२॥
अध्वर्युं वा मधुपाणिं सुहस्त्यमग्निधं वा धृतदक्षं दमूनसम्।
विप्रस्य वा यत् सवनानि गच्छथोऽत आयातं मधुपेयमश्विना ॥३॥

## ४२ सूक्त

इन्द्र देवता। आङ्गिरस कृष्ण ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अस्तेव सु प्रतरं लायमस्यन् भूषन्निव प्रभरा स्तोममस्मै।
वाचा विप्रास्तरत वाचमर्यो निरामय जरितः सोममिन्द्रम् ॥१॥

---

१ अश्विद्वय, तुम दोनोंके पास एक ही रथ है, जिसे अनेक बुलाते हैं, अनेक स्तुति करते हैं। वह रथ तीन चक्रोंके ऊपर यज्ञोंमें जाता है। वह चारों ओर घूमते हुए यज्ञको सुसम्पन्न करता है। प्रतिदिन प्रातःकाल हम सुन्दर स्तुतिसे उसी रथको बुलाते हैं।

२ सत्य-स्वरूप अश्विद्वय, तुम्हारा जो रथ प्रातःकाल जोता जाता है, प्रातःकाल चलता है और मधु ले जाता है, उसी रथपर चढ़कर यज्ञ-कर्त्ताओंके पास जाओ। तुम्हारी जो स्तुति करता है, उसके होतृ-युक्त यज्ञमें भी जाओ।

३ अश्विद्वय, मैं सुहस्त हूं। मैं हाथमें मधु लेकर अध्वर्युका कार्य करता हूँ। मेरे पास पधारो अथवा, अग्निध्र नामक जो बली पुरोहित दान करनेको उद्यत है, उसके पास पधारो। यद्यपि तुमलोग किसी बुद्धिमान् व्यक्तिके यज्ञमें जाते हो, तो भी, मधु-पान करनेके लिये, मेरे गृहमें पधारो।

---

१ जैसे वाण फेंकनेवाला धनुर्द्धर अतीव सुन्दर वाण फेंकता है, वैसे ही तुम, इन्द्रके लिये, क्रमागत स्तव करो। उनके लिये प्राञ्जल और अलङ्कृत करके स्तुतिका प्रयोग करो। विप्रो, तुम्हारे साथ जो स्पर्द्धा करता है, ऐसे स्तुति-वचनका प्रयोग करो कि, वह पराजित हो जाय। स्तोता, इन्द्रको सोमकी ओर आकृष्ट करो।

दोहेन गामुपशिक्षा सखायं प्र बोधय जरितर्जारमिन्द्रम् ।
कोशं न पूर्णं वसुना न्यृष्टमा च्यावय मघदेयाय शूरम् ॥२॥
किमङ्ग त्वा मघवन् भोजमाहुः शिशीहि मा शिशयं त्वा शृणोमि ।
अप्नस्वती मम धीरस्तु शक्र वसुविदं भगमिन्द्राभरा नः ॥३॥
त्वां जना ममसत्येष्विन्द्र सन्तस्थाना वि ह्वयन्ते समीके ।
अत्रा युजं कृणुते यो हविष्मान्नासुन्वता सख्यं वष्टि शूरः ॥४॥
धनं न स्पन्द्रं बहुलं यो अस्मै तीव्रान्त्सोमाँ आसुनोति प्रयस्वान् ।
तस्मै शत्रून्त्सुतुकान् प्रातरह्नो नि स्वष्ट्रान्युवति हन्ति वृत्रम् ॥५॥
यस्मिन्वयं दधिमा शंसमिन्द्रे यः शिश्राय मघवा काममस्मे ।
आराच्चित् सन् भयतामस्य शत्रुर्न्यस्मै द्युम्ना जन्या नमन्ताम् ॥६॥

२ स्तोता, जैसे गायको दूहकर लोग अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं, वैसे ही मित्र-स्वरूप इन्द्रसे अपने प्रयोजनको सिद्ध करा लो। स्तुत्य इन्द्रको जगाओ। जैसे लोग धान्य-पूर्ण पात्रको नीचे करके उसका धान्य गिरा लेते हैं, वैसे ही वीर इन्द्रको; कामना-सिद्धिके लिये, अनुकूल कर लो।

३ इन्द्र, तुम्हें लोग "भोज" (अभीष्ट-दाता) क्यों कहते हैं? तुम दाता हो; इसीलिये यह नाम रखा गया है। मैंने सुना है कि, तुम लोगोंको तीक्ष्ण कर देते हो। मुझे तीक्ष्ण करो। इन्द्र, मेरी बुद्धि कर्ममें निपुण हो। मेरा ऐसा शुभ अदृष्ट करो कि, धन उपार्जित किया जा सके।

४ इन्द्र, जिस समय लोग युद्धमें जाते हैं, उस समय तुम्हारा नाम लेते हैं। इन्द्र यजमानके सहायक होते हैं। जो इन्द्रके लिये सोम नहीं प्रस्तुत करता, उसके साथ इन्द्र मैत्री नहीं करना चाहते।

५ जो अन्नशाली व्यक्ति इन्द्रके लिये प्रथम सोमरस प्रस्तुत करता है और गौ, अश्व आदि देनेवाले धनाढ्यके सदृश इन्द्रको उदारताके साथ सोमरस देता है, उसके सहायक इन्द्र होते हैं। उसके बलिष्ठ तथा अनेक सेनाओंवाले शत्रुओंके रहनेपर भी इन्द्र शत्रुओंको शीघ्राति-शीघ्र दूर कर देते हैं। इन्द्र वृत्रका बध करते हैं।

६ हमने जिन इन्द्रकी स्तुति की है, वह धनी हैं और उन्होंने हमारी कामनाओंको पूर्ण किया है। इन्द्रके पाससे शत्रु दूर भागें। शत्रु-देशकी सम्पत्ति इन्द्रके हाथोंमें आवे।

आराच्छक्रमप बाधस्व दूरमुग्रो यः शम्बः पुरुहूत ते न ।
अस्मे धेहि यवमद्गोमदिन्द्र कृधी धियं जरित्रे वाजरत्नाम् ॥७॥
प्र यमन्तर्वृषसवासो अग्मन्तीव्राः सोमा बहुलान्तास इन्द्रम् ।
नाह दामानं मघवा नियंसन्नि सुन्वते वहति भूरि वामम् ॥८॥
उत प्रहामतिदीव्या जयाति कृतं यच्छ्वघ्नी विचिनोति काले ।
यो देवकामो न धना रुणद्धि समित्तं राया सृजति स्वधावान् ॥९॥
गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ।
वयं राजभिः प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम ॥१०॥
बृहस्पतिर्नः परिपातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघायोः ।
इन्द्रः पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु ॥११॥

---

७ इन्द्र, असङ्ख्य मनुष्य तुम्हें बुलाते हैं। तुम्हारा जो भयानक वज्र है, उससे समीपके शत्रुको दूर कर दो। इन्द्र, मुझे जौ और गायसे युक्त सम्पत्ति दो। अपने स्तोताकी स्तुतिको अन्न-रत्न-प्रसविनी करो।

८ प्रखर सोमरस, अनेक धाराओंमें, मधुर रससे बरसते हुए जिस समय इन्द्रकी देहमें पैठता है, उस समय इन्द्र सोमरस-दाताका कभी वारण नहीं करते, कभी नहीं कहते कि, और नहीं। अधिकन्तु सोमरसके प्रस्तुत-कर्त्ताको विशाल अभिलषित वस्तुएँ प्रदान करते हैं।

९ जैसे जुआड़ी जिससे हारा हुआ है, उसीको जुएके अड्डेपर खोजकर हरा देता है, वैसे ही अनिष्ट-कर्त्ताको इन्द्र परास्त करते हैं। जो देवभक्त देवपूजामें धन-व्यय करनेमें कृपणता नहीं करता, धनी इन्द्र उसे ही धनी करते हैं।

१० गायोंके द्वारा हम दुःख-दारिद्र्यके पार जायँ। अनेकोंके द्वारा आहूत इन्द्र, जौ (यव) के द्वारा हम क्षुधाकी निवृत्ति कर सकें। हम राजाओंके साथ साथ अग्रसर होकर, अपने बलके प्रभावसे, विशाल सम्पत्तिको जीत सकें।

११ पापी शत्रुके हाथसे बृहस्पति हमें पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशाओंमें बचावें। पूर्व दिशा और मध्य भागमें इन्द्र हमारी रक्षा करें। इन्द्र हमारे मित्र हैं और हम इन्द्रके मित्र हैं, वह हमारी अभिलाषाको सिद्ध करें।

## ४ अनुवाक । ४३ सूक्त

ऋषि और देवता पूर्ववत्। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

अ च्छा म इन्द्रं मतयः स्वर्विदः सध्रीचीर्विश्वा उशतीरनूषत ।
परिष्वजन्ते जनयो यथा पतिं मर्यं न शुन्ध्युं मघवानमूतये ॥१॥
न घा त्वद्रिगप वेति मे मनस्त्वे इत् कामं पुरुहूत शिश्रय ।
राजेव दस्म निषदोऽधि बर्हिष्यस्मिन्त्सु सोमेऽवपानमस्तु ते ॥२॥
विषूवृदिन्द्रो अमतेरुत क्षुधः स इन्द्रायो मघवा वस्व ईशते ।
तस्येदिमे प्रवणे सप्त सिन्धवो वयो वर्धन्ति वृषभस्य शुष्मिणः ॥३॥
वयो न वृक्षं सुपलाशमासदन्त्सोमास इन्द्रं मन्दिनश्चमूषदः ।
प्रैषामनीकं शवसा दविद्युतद्विदत् स्वर्मनवे ज्योतिरार्यम् ॥४॥
कृतं न श्वघ्नी विचिनोति देवने संवर्गं यन्मघवा सूर्यं जयत् ।
न तत्ते अन्यो अनु वीर्यं शकन्न पुराणो मघवन्नोत नूतनः ॥५॥

---

१ मेरी स्तुतियोंने, मिलकर, उद्देश पूर्वक इन्द्रका गुण-गान किया है । स्तुतियाँ सब प्रकारके लाभ करा सकती हैं। जैसे स्त्रियाँ अपने स्वामीका आलिङ्गन करती हैं, वैसे ही स्तुतियाँ उन शुद्ध-स्वभाव इन्द्रका आश्रय पानेके लिये उनका आलिङ्गन करती हैं।

२ इन्द्र, तुम्हें छोड़कर मेरा मन अन्यत्र नहीं जाता। तुम्हारे ही ऊपर मैंने अपनी अभिलाषा स्थापित रखी है। जैसे राजा अपने भवनमें बैठता है, वैसे ही तुम लोग कुशोंके ऊपर बैठो। इस सुन्दर सोमसे तुम्हारा पान-कार्य सम्पन्न हो।

३ दुर्गति और अन्नाभावसे बचानेके लिये इन्द्र हमारी चारो ओर रहें। धनदाता इन्द्र सारी सम्पत्तियों और धनोंके अधिपति हैं। मनोरथ-वर्षक और तेजस्वी इन्द्रके आदेशसे हो गङ्गा आदि सात नदियाँ नीचेकी ओर बहकर कृषिकी वृद्धि करती हैं।

४ जैसे सुन्दर पत्रोंके वृक्षका आश्रय चिड़ियाँ करती हैं, वैसे ही आनन्द-वर्षक और पात्रस्थित सोम इन्द्रका आश्रय करते हैं। सोमरसके तेजके द्वारा इन्द्रका मुख उज्ज्वल हो उठा। इन्द्र मनुष्योंको उत्कृष्ट ज्योति दें।

५ जुएके अड्डेपर जैसे जुआड़ी अपने विजेताको खोजकर परास्त करता है, वैसे ही इन्द्र वृष्टि-रोधक सूर्यको परास्त करते हैं। इन्द्र, धनाधिपति, कोई भी प्राचीन वा नवीन तुम्हारे वीरत्वके अनुसार कार्य नहीं कर सकता।

विशंविशं मघवा पर्यशायत जनानां धेना अवचाकशद्वृषा ।
यस्याह शक्रः सवनेषु रण्यति स तीव्रैः सोमैः सहते पृतन्यतः ॥६॥
आपो न सिन्धुमभि यत् समक्षरन्त्सोमास इन्द्रं कुल्याइव ह्रदम् ।
वर्धन्ति विप्रा महो अस्य सादने यवं न वृष्टिर्दिव्येन दानुना ॥७॥
वृषा न क्रुद्धः पतयद्रजःस्वा यो अर्यपत्नीरकृणोदिमा अपः ।
स सुन्वते मघवा जीरदानवेऽविन्दज्ज्योतिर्मनवे हविष्मते ॥८॥
उज्जायतां परशुर्ज्योतिषा सह भूया ऋतस्य सुदुघा पुराणवत् ।
विरोचतामरुषो भानुना शुचिः स्वर्ण शुक्रं शुशुचीत सत्पतिः ॥९॥
गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ॥
वयं राजभिः प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम ॥१०॥

---

६ धनद इन्द्र प्रत्येक मनुष्यमें रहते हैं। अभीष्टकारी इन्द्र सबके स्तोत्रकी तरफ ध्यान देते हैं। जिसके सोम-यज्ञमें इन्द्र प्रीति प्राप्त करते हैं, वह प्रखर सोमरसके द्वारा युद्धेच्छु शत्रुओंको परास्त करता है।

७ जसे जल नदीकी ओर जाता है और जैसे छोटा-छोटा जल-प्रवाह तड़ागमें जाता है, वैसे ही सोमरस इन्द्रमें जाता है। यज्ञ-स्थलमें पण्डित लोग उसके तेजको वैसे ही बढ़ा देते हैं, जैसे स्वर्गीय जल-पातके साथ वृष्टि जौकी खेतीको बढ़ाती है।

८ जैसे एक वृष, क्रुद्ध होकर, दूसरेकी ओर दौड़ता है, वैसे ही इन्द्र, मेघके प्रति धावित होकर अपने आश्रित जलको बाहर करते हैं। जो व्यक्ति सोम-यज्ञ करता है, उदारताके साथ दान करता है और हविका संग्रह करता है, उसे धनी इन्द्र ज्योति देते हैं।

९ इन्द्रका वज्र तेजके साथ उदित हो। पूर्व कालके समान ही इस समय भी यज्ञकी कथा हो। स्वयं उज्ज्वल होकर इन्द्र, प्राञ्जल आलोकको धारण करके, शोभा-सम्पन्न हों। साधु पुरुषोंके पालक इन्द्र, सूर्यके समान, शुभ्रवर्ण दीप्तिसे प्रदीप्त हों।

१० गायोंके द्वारा हम दुःख-दारिद्र्यके पार जायं। अनेकोंके द्वारा आहूत इन्द्र, जौके द्वारा हम क्षुधाकी निवृत्ति कर सकें। हम राजाओंके साथ अग्रसर होकर, अपने बलके प्रभावसे, विशाल सम्पत्तिको जीत सकें।

बृहस्पतिर्न परिपातु पश्चादुतोत्तरस्मदधरादघायोः ।
इन्द्रः पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु ॥११॥

## ४४ सूक्त

इन्द्र देवता । आङ्गिरस कृष्ण ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

आयात्विन्द्रः स्वपतिर्मदाय यो धर्मणा तूतुजानस्तुविष्मान् ।
प्रत्वक्षाणो अति विश्वा सहांस्यपारेण महता वृष्ण्येन ॥१॥
सुष्ठामा रथः सुयमा हरी ते मिम्यक्ष वज्रो नृपते गभस्तौ ॥
शीभं राजन्सुपथायाह्यर्वाङ्वर्धाम ते पपुषो वृष्ण्यानि ॥२॥
एन्द्रवाहो नृपतिं वज्रबाहुमुग्रमुग्रासस्तविषास एनम् ।
प्रत्वक्षसं वृषभं सत्यशुष्ममेमस्मत्रा सधमादो वहन्तु ॥३॥

---

११ पापी शत्रुके हाथसे बृहस्पति हमें पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशाओंमें बचावें। पूर्व दिशा और मध्य भागमें इन्द्र हमारी रक्षा करें। इन्द्र हमारे मित्र हैं और हम इन्द्रके मित्र हैं। वह हमारी अभिलाषाको सिद्ध करें।

१ जो इन्द्र देखनेमें स्थूलकाय हैं और जो अपने विपुल तथा दुर्द्धर्ष बलके द्वारा सारे बलशाली पदार्थोंको बल-हीन कर डालते हैं, वही धनी इन्द्र रथपर चढ़कर आमोद करनेके लिये आवें।

२ नरपति इन्द्र, तुम्हारा रथ सुघटित है, तुम्हारे रथके दोनों घोड़े सुशिक्षित हैं और तुम्हारे हाथमें वज्र है। प्रभु इन्द्र, ऐसी मूर्त्तिको धारण करके, सरल मार्गसे, नीचे आओ। तुम्हारे पानके लिये सोमरस प्रस्तुत है। उसे पिलाकर हम तुम्हारा बल और भी बढ़ा देंगे।

३ जो इन्द्र नेताओंके नेता हैं, जिनके हाथमें वज्र है, जो शत्रुओंको दुर्बल कर देते हैं, जो दुर्द्धर्ष हैं और जिनका क्रोध कभी वृथा नहीं जाता, उन्हें, उनके वाहक बली घोड़े मिलकर, हमारे पास ले आवें।

एवा पतिं द्रोणसाचं सचेतसमूर्जःस्कम्भं धरुण आवृषायसे ।
ओजः कृष्व सङ्गृभाय त्वे अप्यसो यथा केनिपानामिनो वृधे ॥४॥
गमन्नस्मे वसून्या हि शंसिषं स्वाशिषं भरमायाहि सोमिनः ।
त्वमीशिषे सास्मिन्नासत्सि बर्हिष्यनाधृष्या तव पात्राणि धर्मणा ॥५॥
पृथक् प्रायन् प्रथमा देवहूतयोऽकृण्वत श्रवस्यानि दुष्टरा ।
न ये शेकुर्यज्ञियां नावमारुहमीर्मैव ते न्यविशन्त केपयः ॥६॥
एवैवापागपरे सन्तु दूढ्योऽश्वा येषां दुर्युज आयुयुज्रे ।
इत्था ये प्रागुपरे सन्ति दावने पुरूणि यत्र वयुनानि भोजना ॥७॥
गिरीँरज्रान्जमानाँ अधारयद्द्यौः क्रन्ददन्तरिक्षाणि कोपयत् ।
समीचीने धिषणे विष्कभायति वृष्णः पीत्वा मद उक्थानि शंसति ॥८॥

---

४ इन्द्र, जो सोमरस शरीरको पुष्ट करता है, जो कलसमें मिल जाता है और जो बलको संचारित करता है, उस सोमका सिञ्चन अपने उदरमें करो । मेरी बल-वृद्धि कर दो और हमें अपना आत्मीय बना लो; क्योंकि तुम बुद्धिमानोंके श्रीवृद्धि करनेवाले प्रभु हो ।

५ इन्द्र, मैं स्तोता हूं; इसलिये सारी सम्पत्ति मेरे पास आवे । उत्तमोत्तम कामनाएँ सिद्ध करनेके लिये मैंने सोमका संचय करके यज्ञका आयोजन किया है । आओ । तुम सबके अधिपति हो । कुशके ऊपर बैठो । तुम्हारे पानके लिये जो सोम-पात्र सज्जित हुए हैं, किसीकी ऐसी शक्ति नहीं कि, वह उन्हें बल-पूर्वक लेकर पिये ।

६ जो लोग प्राचीन समयसे ही यज्ञमें देवोंको निमन्त्रण देते थे, उन्होंने बड़े-बड़े कार्योंका सम्पादन करके स्वयं सद्गति प्राप्त की है । परन्तु जो यज्ञरूप नौकापर नहीं चढ़ सके, वे कुकर्मी हैं, ऋणी हैं और नीच अवस्थामें ही दब गये हैं ।

७ इस समयमें भी जो वैसे दुर्बुद्धि हैं, वे भी अधोगामी हों । उनकी कैसी दुर्गति होगी—इसका ठीक नहीं । जो लोग पहलेसे ही यज्ञादिके अवसरपर दान करते हैं, वे ऐसे स्थानपर जाते हैं, जहाँ अतीव चमत्कारिणी भोग-सामग्री प्रस्तुत है ।

८ जिस समय इन्द्र सोमपान करके मत्त होते हैं, उस समय वह सर्वत्र-संचारी और काँपते हुए मेघोंको सुस्थिर करते हैं, आकाशको आन्दोलित कर डालते हैं और वह घहराने लगता है । जो द्यावापृथिवी परस्पर संयुक्त हैं, उन्हें इन्द्र उसी अवस्थामें रखते हैं और उत्तम वचन कहते हैं ।

इमं बिभर्मि सुकृतं ते अङ्कुशं येनारुजासि मघवञ्छफारुजः ।
अस्मिन्त्सु ते सवने अस्त्वोक्यं सुत इष्टौ मघवन्बोध्याभगः ॥९॥
गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ।
वयं राजभिः प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम ॥१०॥
बृहस्पतिर्नः परिपातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघायोः ।
इन्द्रः पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु ॥११॥

---

## ४५ सूक्त

अग्नि देवता । भालन्दन वत्सप्रि ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

दिवस्परि प्रथमं जज्ञे अग्निरस्मद्द्वितीयं परि जातवेदाः ।
तृतीयमप्सु नृमणा अजस्रमिन्धान एनं जरते स्वाधीः ॥१॥

---

९ धनशाली इन्द्र, तुम्हारे लिये मैं यह एक सुसंघटित अंकुश हाथमें रखता हूं। इस अंकुश-रूप स्तोत्रसे हाथियोंको, दण्ड देते हुए तुम वशमें करते हो। इस सोम-यज्ञमें आकर अपना स्थान ग्रहण करो। हमें इस यज्ञमें सौभाग्यशाली करो।

१० गायोंके द्वारा हम दुःख-दारिद्र्यके पार जायँ अनेकोंके द्वारा आहूत इन्द्र, जौके द्वारा हम क्षुधा-निवृत्ति कर सकें। हम राजाओंके साथ अग्रसर होकर, अपने बलके प्रभावसे, विशाल सम्पत्तिको जीत सकें।

११ पापी शत्रुके हाथमें हमें बृहस्पति पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशाओंमें बचावें। पूर्व दिशा और मध्य भागमें इन्द्र हमारी रक्षा करें। इन्द्र हमारे मित्र हैं और हम उनके मित्र हैं। वह हमारी अभिलाषाको सिद्ध करें।

---

१ अग्निने प्रथम आकाशमें विद्युद्रूपसे जन्म ग्रहण किया। उनका द्वितीय जन्म "जातवेदा" (शर्मा) नामसे हमलोगोंके बीच हुआ है। उनका तीसरा जन्म जलके बीचमें हुआ है। मनुष्य-हितैषी अग्नि निरन्तर प्रज्वलित हैं। जो उत्तम ध्यान करना जानते हैं, वह उनकी स्तुति करते हैं।

विद्मा ते अग्ने त्रेधा त्रयाणि विद्म ते धाम विभृता पुरुत्रा ।
विद्मा ते नाम परमं गुहा यद्विद्मा तमुत्सं यत आजगन्थ ॥२॥
समुद्रे त्वा नृमणा अप्स्वन्तर्नृचक्षा ईधे दिवो अग्न ऊधन् ॥
तृतीये त्वा रजसि तस्थिवांसमपामुपस्थे महिषा अवर्धन् ॥३॥
अक्रन्ददग्निः स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन् ॥
सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धो अख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः ॥४॥
श्रीणामुदारो धरुणो रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः ।
वसुः सुनुः सहसो अप्सु राजा विभात्यग्र उषसामिधानः ॥५॥
विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भ आ रोदसी अपृणाज्जायमानः ॥
विलुं चिदद्रिमभिनत् परायञ्जना यदग्निमयजन्त पञ्च ॥६॥

---

२ अग्नि, हम तुम्हारी तीन प्रकारकी तीन मूर्त्तियोंको जानते हैं। अनेक स्थलोंमें तुम्हारा जो स्थान है, उसे भी जानते हैं। तुम्हारे निगूढ़ नामको भी हम जानते हैं। जिस उत्पत्ति-स्थानसे तुम आये हो, उसे भी हम जानते हैं।

३ नर-हितैषी वरुणदेवने तुम्हें समुद्रके बीचमें, जलके भीतर, जला रखा है। आकाशके स्तनस्वरूप जो सूर्य हैं, उसके बीचमें भी तुम प्रज्वलित हो। तुम अपने तीसरे स्थान मेघलोकमें, वृष्टिजलमें, रहते हो। प्रधान प्रधान देवता तुम्हारा तेज बढ़ाते हैं।

४ अग्निका घोरतर शब्द हुआ—मानो आकाशमें वज्रपात हो रहा है। अग्नि पृथिवीको चाटते हैं, लता आदिका आलिङ्गन करते हैं। यद्यपि अग्नि अभी जनमें हैं, तो भी विशेष रूपसे प्रज्वलित और विस्तृत हुए हैं। द्यावापृथिवीमें किरण-विस्तार करनेसे अग्निकी शोभा हुई है।

५ प्रभातके प्रथम भागमें अग्नि प्रज्वलित होते हैं, तो उनकी कैसी शोभा होती है! वह कितनी शोभा प्रकट करते हैं! अग्नि अशेष सम्पत्तियोंके आधार-स्वरूप हैं। वह स्तोत्र-वचनोंकी स्फूर्त्ति कर देते हैं, सोमरसकी रक्षा करते हैं। अग्नि धन-स्वरूप हैं, वह बलके पुत्र हैं, वह जलके बीचमें रहते हैं।

६ वह समस्त पदार्थोंको प्रकाशित करते हैं। वह जलके भीतर जन्म ग्रहण करते हैं। जन्म लेते ही उन्होंने द्यावापृथिवीको परिपूर्ण किया। जिस समय पाँच वर्णोंने मनुष्योंके अग्निके लिये यज्ञ किया, उस समय वह सुघटित मेघकी ओर जाकर और मेघको फाड़कर जल ले आये।

उशिक् पावको अरतिः सुमेधा मर्तेष्वग्निरमृतो निधायि ।
इयर्ति धूममरुषं भरिभ्रदुच्छुक्रेण शोचिषा द्यामिनक्षन् ॥७॥
दृशानो रुक्म उर्विया व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्रिये रुचानः ।
अग्निरमृतो अभवद्वयोभिर्यदेनं द्यौर्जनयत् सुरेताः ॥८॥
यस्ते अद्य कृणवद्भद्रशोचेऽपूपं देव घृतवन्तमग्ने ।
प्र तं नय प्रतरं वस्यो अच्छाभि सुम्नं देवभक्तं यविष्ठ ॥९॥
आ तं भज सौश्रवसेष्वग्न उक्थउक्थ आ भज शस्यमाने ।
प्रियः सूर्ये प्रियो अग्ना भवात्युज्जातेन भिनददुज्जनित्वैः ॥१०॥
त्वामग्ने यजमाना अनु द्यून्विश्वा वसु दधिरे वार्याणि ।
त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रजं गोमन्तमुशिजो वि वव्रुः ॥११॥

---

७ अग्नि हवि चाहते हैं। वह सबको पवित्र करते हैं। वह चारो ओर जाते हैं। वनमें उत्कृष्टता है। वह स्वयं अमर हैं; परन्तु मारनेवाले मनुष्योंमें रहते हैं। रुचिकर रूप धारण करके वह गति-विधि करते हैं और शुक्लवर्ण आलोकके द्वारा आकाशको परिपूर्ण करते हैं।

८ अग्नि देखनेमें ज्योतिर्मय हैं। उनकी दीप्ति महान् हैं। वह दुर्द्धर्ष दीप्तिके साथ जाते-जाते शोभा-सम्पन्न होते हैं। अग्नि वनस्पति-स्वरूप अन्न पाकर अमर हुए। दिव्यलोकने अग्निका जन्म दिया है। दिव्यलोक ( द्यौ ) की जन्मदानशक्ति कसी सुन्दर है!

९ मङ्गलमयी ज्वालावाले अभिनव अग्नि, जिस व्यक्तिने आज तुम्हारे लिये घृत-युक्त पिष्टक (पुरोडाश) प्रस्तुत किया है, उस उत्कृष्ट व्यक्तिको तुम उत्तम-उत्तम धनकी ओर ले जाओ, उस देवभक्तको सुख-स्वाच्छन्द्यकी ओर ले जाओ।

१० जिसी समय उत्तमोत्तम अन्नके साथ क्रिया-कलाप अनुष्ठित होता है, उसी समय तुम यजमानके अनुकूल होओ। वह सूर्यके पास प्रिय हो, अग्निके पास प्रिय हो। उसके जो पुत्र हैं वा जो होगा, उसके साथ वह शत्रु-संहार करे।

११ अग्नि, प्रतिदिन यजमान लोग तुम्हारे लिये उत्तमोत्तम नाना वस्तुएं पूजामें देते हैं। विद्वान् देवोंने, तुम्हारे साथ एकत्र होकर, धन-कामनाको पूर्ण करनेके लिये, गायोंसे भरे गोष्ठ-द्वारका उद्घाटन किया था।

अस्तोऽयम्निर्नरां सुशेवो वैश्वानर ऋषिभिः सोमगोपाः ॥
अद्वेषे द्यावापृथिवी हुवेम देवा धत्त रयिमस्मे सुवीरम् ॥१२॥

१२ मनुष्योंमें जिनकी सुन्दर मूर्त्ति है और जो सोमकी रक्षा करते हैं, ऋषियोंने उन्हीं अग्निकी स्तुति की। द्वेष-शून्य द्यावापृथिवीको हम बुलाते हैं। देवो, हमें लोकबल और धनबल दो।

# अष्टम अध्याय समाप्त

# सप्तम अष्टक समाप्त

# वेद क्यों पढ़ना चाहिये ?

इसलिये कि—

१ वेद हिन्दूधर्मकी मूल पुस्तक है,

२ वेद मनुष्यजातिकी सबसे प्राचीन पुस्तक है,

३ सदाचार, वीरता, परोपकार, देशसेवा, सत्य, त्याग आदि मनुष्य[जाति की]
जितनी उच्चतम गुणावली है, सबका वेदमें बड़ा ही सुन्दर विवरण है और

४ वेद हमारी जातिके प्राचीन इतिहास, कला, विज्ञान, धर्म-प्रेम, [समाज-]
व्यवस्था, राष्ट्रधर्म, यज्ञ-रहस्य आदिको, दर्पणकी तरह, दिखाता है ।

इसलिये जिस प्रकार हर एक ईसाई बाइबिलको और हर एक मुसल[मान]
कुरानको, गाड और खुदाकी विमल वाणी समझकर, अपने पास रखता[है]
उसी प्रकार ईश्वरका पवित्र उपदेश जानकर वेदको अपने पास रखना हर [एक]
हिन्दूका आवश्यक कर्त्तव्य है ।

लज्जाकी बात है कि, जर्मनी, फ्रांस, अमेरिका, इंगलैंड आदिके विद्वान[ों ने]
तो वेदकी सारी पुस्तकोंको छपा डाला और हिन्दीमें एक भी ऋग्वेदका [स...]
अनुवाद नहीं ! इसी अभावकी पूर्तिके लिये हमने "वैदिक-पुस्तकमाला" [...]
सरस–सरल हिन्दीमें चारो वेदोंका अनुवाद कराना निश्चित किया है । अब[तक]
ऋग्वेदके सात अष्टक निकल चुके हैं । प्रत्येक अष्टकका मूल्य २) रु० है । स[ात]
अष्टकोंका मूल्य १४) रु० है । आठवाँ अर्थात् अन्तिम अष्टक छप रहा है ।

॥) देकर "वैदिक-पुस्तकमाला"के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको क[भी]
डाक खर्च नहीं देना होता और पुस्तक निकलते ही वी० पी० [से भे]
दी जाती है ।

व्यवस्थापक, "वैदिक-पुस्तकमाला," सुलतानगंज ( ई० आई० आर[०)]